# DEEPIKA

OR

# SHUDDHI DEEPIKA

( Jyoti Shastaram )

BY

MAHAMAHOPADHYAYA SHRI SHRI NIVASA

TRANSLATED & CORRECTED

BY

PANDIT KANHAIYA LALL MISHRA

AND

Published by

KHEMRAJ SHREEKRISHNADASS

Shree Venkateshwar (Steam) Press.

BOMBAY.

1906

॥ श्रीः ॥

# दीपिका

वा

# शुद्धिदीपिका ।

( ज्योतिःशास्त्रम् )

महामहोपाध्यायश्रीश्रीनिवासप्रणीत ।

मुरादाबादस्थमिश्रसुखानन्दसूरिसूनु-
पंडितकन्हैयालालमिश्रकृत-
भाषाटीकासहित ।

जिसको
खेमराज श्रीकृष्णदासने
बंबई
निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-यन्त्रालयमें
मुद्रितकर प्रकाशित किया ।

चैत्र संवत् १९६३, शके १८२८.

# समर्पण ।

श्रीमान् अखण्डप्रतापशाली सेठ खेमराज
श्रीकृष्णदासजी करकमलेषु ।

## मान्यवर महोदय !

श्रीमान्की उस गुणग्राहकताने—जिसके मकरन्दसे—समस्त भारतके समस्त गुणीजन झौर झौर कर अपने गुणको श्रीमान्पर न्योछावर करदेतेहैं, मेरे हृदय-मंदिरमेंभी ऐसा स्थान कियाहै कि जिसका सांगोपांग वर्णन होना लेखनीकी शक्तिसे बाहरहै । कविगणोंके उस कथनको, कि सहस्रमुख शेषजीभी अमुकका गुणगान करनेमें समर्थ नहींहैं श्रीमान्की गुणग्राहकताने चरितार्थ करके दिखायाहै । भारतवर्षके नगर नगर और ग्राम ग्रामसे सहस्रों विद्वान् और गुणीजन श्रीमान्की प्रशंसा करतेहैं, परन्तु यथावत् फिरभी नहीं करपाते । अत्युक्ति नहींहै, श्रीमान्का सरलस्वभाव—विनीत वार्त्तालाप और दीन तथा दुखियोंके दुःखसे कातरता—संसारमें ऐसा कौनहै जिसके हृदयक्षेत्रमें अलौकिक प्रेम और भक्तिका प्रादुर्भाव नहीं करती ।

इस अनुग्रहीतपर श्रीमान्की जो दया और श्रद्धा रहतीहै—उसका यथावत् धन्यवादभी मुझसे नहीं बनता ।

प्रेमकी डोरसे बँधाहुआ दूर देशमें निवासकरतेभी अपनेको श्रीमान्के निकटही अनुभव करताहूं, यह केवल मात्र श्रीमान्के दयातन्त्रके प्रयोगका फलहै ।

इस दुर्दशाके समय जब भारतवर्षमें नानाप्रकारके अमूल्य ग्रंथ बिना मांझीकी नावके समान अविद्याके समुद्रमें निमग्नहुए जारहेथे—श्रीमान्ने अपने इस जगद्विख्यात "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस को स्थापित कर दीन—भारतकी इस टूटी फूटी पूँजीकी रक्षा करदीहै, जीर्ण ग्रंथोंका पुनरुद्धार करनेके अतिरिक्त श्रीमान्ने समयानुसार यथासंभव पुरस्कार देदेकर भाषा और संस्कृत साहित्यके नवीन कीटोंको अनुपम—पराग बनादियाहै । देखाजाताहै कि देशमें अब अधिक सज्जनोंको पुस्तकोंके पढने और लिखनेका उत्साह बढ-

गयहि और इस उन्नतिका विशेष कारण श्रीमान्का "यंत्रालय" और "श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार" पत्रहै । स्थान स्थान में छोटे बड़े-सबके पास एक न एक पुस्तक श्रीमान्के पुस्तकालयकी मिलतीहै, यह सत्यता का प्रत्यक्ष-प्रमाणहै कि आजतक इस यंत्रालयकी पुस्तकसे किसीको अप्रसन्न होता नहीं देखा और न सुना है । पुस्तकोंका आकार,-कागज, अक्षर, जिल्दबँधी सबही ऐसी मनोहर होतीहै कि बड़े स्नेहसे मनुष्य उसको देखते हैं ।

ज्योतिषशास्त्रका जैसा उद्धार श्रीमान्ने कियाहै और नानाभाँतिके संस्कृत तथा भाषाके ग्रंथ प्रकाश कर सर्व साधारणको सुगमता-कीहै वह सराहनीयहै,-अतएव यह "शुद्धिदीपिका" भी जो श्रीश्रीनिवासदासजीकी---ज्योतिर्विद्याकी चमत्कृत् बुद्धिका एकमात्र उदाहरण है, श्रीमान्के करकमलोंमें समर्पित करताहूं और स्वीकार करलेनेकी आशासे कोटिशः धन्यवाद प्रदान करताहूँ ।

"शुद्धिदीपिका" भी श्रीमान्की ग्रंथमालामें सम्मिलित होकर शुद्ध हुई । इति ।

फाल्गुन शुक्ल ४ भौमवार<br>
सम्वत् १९६२<br>
२७-२-०६

ज्योतिषविद्याका लघुसेवक-<br>
कृपापात्र-कन्हैयालाल मिश्र ।<br>
मुरादाबाद-सिटी.

# भूमिका ।

प्रियपाठकवृन्द !

आपको इस ग्रन्थका परिचय करानेसे पूर्व मैं आपकी सेवामें यह कहना आवश्यक समझताहूं कि, ज्योतिषशास्त्र क्या वस्तुहै ? भारतवर्ष सरीखे देशमें इसका प्रचार क्यों हुआ ? और आधुनिक विद्वन्मंडली तथा विद्याहीन समाजकी इसके विषयमें क्या सम्मतिहै ?

अपनी उन्नतिशील अवस्थामें भारतवर्ष संसारके समस्त देशोंमें सर्वोपर माना गयाहै, उस गौरवपूर्ण कालमेंभी भारतवर्षके त्रिकालज्ञ मुनि और ऋषिगण उन्नतिके एकमात्र कारण धर्मको भूल नहीं गयेथे, उन्होंने सरल और स्वाभाविक बातोंमें भी न्यूनाधिक धर्मका संयोग रक्खा था, और यही कारण है कि कैसेही दुर्दिन आनेपर और नानाप्रकारके कष्ट भोगनेपर भी धनहीन, विद्याहीन और बलहीन होकर भी आर्यसंतान धर्मके मूलमयको अपने हृदयसे निकाल नहीं सकी है ।

यह स्वाभाविक बातहै और प्रत्येक व्यक्तिको इसका पूर्ण अनुभवहै कि नीमके वृक्षके नीचे बैठनेसे शीतल पवनका सेवन होता है और उसकी गंध शरीरको स्वास्थ्यकर है । गूलरके वृक्षकी छायाका आश्रय लेनेपर नशीली गंध आती है; स्वच्छ पत्थरकी चौकीपर बैठनेसे सुख प्राप्त होताहै, मलीन वस्त्र रोगकरनेवाले होतेहैं, इत्यादि । नित्यकी घटनाओंसे क्या पंडित क्या अबोध सभी पुरुष अनुभवीहैं, किन्तु जो वस्तु परोक्षमें हैं, जिनका ज्ञान असाधारण है, जिनको गुण शत और सहस्र वर्षके मनन करनेसेभी पूर्णतया स्पष्ट नहीं होता; उन अगम्य वस्तुओंके यथार्थ ज्ञानकी क्रिया का नाम "ज्योतिषशास्त्र" है, जिसप्रकार निकटवर्ती पदार्थ अपना दोष और गुण प्रकट करतेहैं— उसी भाँति दूरस्थित पदार्थोंका गुण और दोष भी अपना प्रसार करताहै, पृथ्वी सूर्य चंद्रमा आदि ग्रह विद्वानोंके अनुभवसे सिद्ध हुआ है कि, पृथक् पृथक् पिंडहैं, और यह सूर्यमण्डलमें एक दूसरेकी आकर्षण शक्तिसे स्थितहैं, उसी आकर्षणशक्तिने इनमें अनेकप्रकारकी गति

उत्पन्न कीहै, जिसके द्वारा यह चमकते हुए तारागणोंसे भराहुआ आकाशमण्डल ऊपरसे नीचे और नीचेसे ऊपर बराबर चक्रके समान नाचताहै ।

बड़े बड़े अंग्रेजी विद्वानोंनेभी यही निश्चय कियाहै कि, सूर्यादिक आकाश स्थित पिंडहैं और परस्पर आकर्षण करनेसे यह सब चलायमान होतेहैं और अपनी अपनी पृथक् पृथक् गतिके अवलम्बनसे आकाशमें चक्र लगातेहैं ।

त्रिकालज्ञ विद्वानोंके सहस्रों वर्षके अहर्निश परिश्रमसे इन गगनविहारी पिण्डोंकी यथार्थ गतिका ज्ञान हुआहै । इनकी किस समयमें कहां स्थिति होगी ? उस स्थितिसे एक दूसरे पिंडपर क्या प्रभाव होगा ? उस पिण्डके प्राणी उस प्रभावका क्या फल पावेंगे ? पृथक् पृथक् व्यक्ति उस फलके कितने भागका अधिकारीहै ? इन्हीं सब प्रकरणोंके सविस्तर चिंहका नाम "जोतिपशास्त्र" है ? संसारमें एकके आधारसे दूसरेका आधार है । उसीभाँति ज्योतिपशास्त्रका समस्त भण्डार गणितशास्त्रके आधारसे चलताहै । अनुभवी आचार्यगणोंने उसी गणितसे निकलेहुए फलको फलितके नामसे पुकाराहै और उस फलके अशुभ दोषोंको निवारण करनेके लिये जप और दान निर्माण कियेहैं. धर्मधुरीण भारतके आचार्यगणोंने धर्मकी श्रेष्ठता स्थापन करनेकोही १ ज्योतिपके शुभा-शुभ फलके निमित्त जप दानादि क्रियाका प्रचार कियाहै ।

उस सच्चिदानन्दकी प्रधान शक्ति मायासे पूर्ति संसारमें प्राणीगण सदैव सतृष्ण रहतेहैं । भारतवर्षके बुद्धिमान् और विद्वानोंने लोभाकर्षित मायाच्छन्न रहतेभी असत्यका मार्ग ग्रहण नहीं किया और इस यथार्थवादी ज्योतिपशा-स्त्रको अपना भूत भविष्यत् वर्तमान का साक्षी बनाया; और इसमें विश्वास किया आजतक भारतवर्षमें इस विद्याका वडा सत्कार होताहै । विद्वन्मण्डली गणित द्वारा प्राप्तफलको विश्वासपूर्वक यथार्थ मानतीहै; और विद्याहीन अपण्डित अपने गुरु:पुरोहित पण्डित अथवा मिश्रको अलौकिक सिद्ध प्रतीत कर इसमें विश्वास करतेहैं । अन्य देशके विद्वान् भी इसके सत्यहोनेमें विरोध नहीं करते,वरन् भविष्यत्के अमंगलसे दुःखी तथा शुभसे प्रसन्न होना बुद्धिमानी न जानकर इस ओर ध्यान नहीं देते ।

भारतवर्षमें जहां इस विद्यामें विश्वास मानागयाहै। इस विद्याके अनेक उत्तमोत्तम ग्रंथ बनेहैं और नानाप्रकारकी टीका उनपर होकर सर्वसाधारणकी सुगमताका मार्ग स्वच्छन्द किया जारहाहै। इसी विचारने मेरा ध्यानभी इस ओर को आकर्षित किया, अतएव यह ' शुद्धिदीपिका' सेवामें अर्पणहै।

इसमें दीपिकाके मूलश्लोक और प्रत्येक श्लोकका सरल भाषानुवादहै। इसमें गणितकी कोई विशेष क्रिया न होनेपरभी ग्रहोंका आद्योपान्त सविस्तर वर्णन कियाहै, उनके फलादेशको कथन कियाहै और यथावसर उनके अशुभ ग्रहोंका यथावत् समाधान दान तथा जप बतायाहै।

जिनके उदय होनेसे जगत्के प्राणीमात्र परमानंद उपभोग करतेहैं; जिनके अस्त होनेपर संपूर्ण संसार अंधकारसे ढकजाताहै उपरांत ब्राह्मणगण जिनके तेजोपुंजकी आराधना करके चतुर्वर्ग ( धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष ) का फल प्राप्त करतेहैं उन्हीं भगवान् आदित्य ( सूर्य ) की कृपासे पण्डित श्रीनिवासकृत "दीपिका" ग्रंथ का अनुवाद समाप्त हुआ। दीपिका ग्रंथ जैसा जटिलहै अनेक सहृदय पाठक इसको जानतेहैं मेरी इच्छा थी कि ग्रंथका अविकल अनुवाद किया जाय, यथाशक्ति यत्नमेंभी त्रुटि नहीं हुई है किन्तु तथापि जिस जिस श्लोकमें टीका की सहायता विना दंभ स्फुट नहीं हुआहै, उस उस श्लोकमें कुछेक विलक्षणताभी घटित होसकतीहै। अनुवादके दोष गुणके विचारका भार निर्मत्सर पाठकगणोंके प्रतिही न्यस्त रहा। जो हो, प्रकाशक श्रीमान् सेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजी महोदयने दीपिका ग्रंथके अनुवाद करनेका मुझको अनुरोध किया मैंने पण्डित चन्द्रकान्त न्यायरत्न महाशयका स्वलिखित दीपिका ग्रंथ अन्यान्य पुस्तकोंसे मिलाकर पुस्तकान्तरके जिन सब श्लोकोंमें पाठान्तर दिखाई दियेहैं उसको यथास्थानमें संयोजित कर वह पुस्तक आदर्श बनाय अनुवाद कार्यशेष कियाहै। दीपिकाके हेडिङ्ग श्लोकोंके अंतमेंथे पाठकोंके सुभीतेके लिये वह सब श्लोकोंके पूर्वमें दिये गयेहैं। संस्कृत टीकाकार गोविन्दानंद कविकङ्कण भट्टाचार्यने ग्रंथका नाम "शुद्धिदीपिका" रक्खाहै उसीके अनुसार प्रतिपृष्ठके ऊपर 'शुद्धिदीपिका' 'भाषाटीकासमेता' इसप्रकार हेडिंग दियागयाहै। पाठकगण शुद्धिदीपिका ग्रंथका नाम देखकर प्राचीन ज्योतिष

रत्नदीपिका ग्रंथके प्रतिहतादर न हों । द्वितीय टीकाकार राघवाचार्य कर्तृक यह ग्रंथ दीपिका संज्ञासे अभिहित हुआहै । स्मार्त्त रघुनंदन भट्टाचार्य इत्यादि ग्रंथकारोंने भी अपने अपने ग्रंथके स्थान स्थानमें इस ग्रंथको दीपिका के नामसे लिखाहै अतएव टाइटल पेजपर 'दीपिका वा शुद्धिदीपिका' इसप्रकार मुद्रित हुआ है ।

उपसंहारमें मैं अपने परमप्रिय मित्र—खैर जिला अलीगढ निवासी पण्डित श्रीवनवारीलालजी पचौरी को अनेकानेक धन्यवाद प्रदान करताहूं कि जिन्होंने इस पुस्तकके अनुवाद करनेमें मेरी वहुत कुछ सहायता कीहै और सदैव इसीप्रकार कृपा करनेका वचन दियाहै आशाहै कि, वह अपने वचन को सदा स्मरण रखकर मुझपर इसीप्रकार कृपादृष्टि वनाये रहेंगे ।

अब यह ग्रंथ सब प्रकारसे अलंकृत कर अपने परम शुभचिंतक श्रीमान् सेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजी "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेसके मालिक मुम्बईको सर्व सत्वसहित समर्पण करदियाहै जो अनेक प्रकारके दान सन्मानसे नित्य हमारा उत्साह बढाते रहतेहैं ।

यदि पाठकगणोंको इसके द्वारा कुछभी लाभ हुआ तो परिश्रम सफल समझा जायगा ।

फाल्गुन शुक्ल ४ भौमवार<br>
सम्वत् १९६२<br>
२७–२–६

सज्जनोंका कृपापात्र–<br>
कन्हैयालाल मिश्र ।<br>
( दीनदारपुरा ) मुरादाबाद–सिटी.

॥ श्रीः ॥

# शुद्धिदीपिकाकी विषयानुक्रमणिका ।

## चतुर्थोऽध्यायः ।

इति शुद्धिदीपिकास्थानुक्रमणिका समाप्ता ।

॥ श्रीः ॥

# शुद्धिदीपिका।

## भाषाटीकासमेता।

मङ्गलाचरणम्।

नत्वा व्योमासनस्थं त्रिभुवननमितं देवमाद्यं दिनेशं
तारानक्षत्रराशिग्रहकुलतिलकं शर्वरीशं च नत्वा।
नत्वा कर्मस्वभावं प्रतिपदगहनं प्राक्तनं कर्मबीज
मज्ञानान्धस्य जन्तोर्भ्रमपटहरणं लिख्यते
शास्त्रसारम्॥ १ ॥

ग्रन्थारम्भमें ग्रन्थकार मंगलाचरण करते हैं। आकाशरूप विस्तृत आसनके ऊपर आसीन त्रिलोकीद्वारा वन्दनीय सबके आदिभूत देवराज सूर्यनारायणको तथा तारा नक्षत्र राशि और ग्रहादिके अधिपति चन्द्रमाको एवं पूर्वजन्मार्जित पद २ के ऊपर अतिकठिन कर्मबीजको प्रणाम करके अज्ञानसे अन्धेहुए मनुष्योंके भ्रमरूप आवरणको हटानेवाले शास्त्रसारको लिखताहूं ॥ १ ॥

तृष्णातरंगदुस्तरसंसाराम्भोधिलंघने तरणिः।
उदयवसुधाधरारुणमुकुटमणिः पातु वस्तरणिः॥ १॥

तृष्णारूपी तरंगद्वारा दुस्तर संसाररूप समुद्रसे पार होनेके लिये नौकास्वरूप और उदय पर्वतके अरुणवर्ण मुकुटमणिस्वरूप वह सूर्यदेव तुम्हारी रक्षा करें ॥ १ ॥

अस्तं गतवति मिहिरेऽतिमलिनदोषाकुले च गोविभवे। उद्वाहादिषु शुद्धिग्रहणार्थं दीपिका क्रियते॥२॥

वराहमिहिराचार्यकी मृत्युके पीछे विवाहादि कर्मोपदेशक प्रमाणादिका अभाव होनेसे विवाहादि कर्मोंकी शुद्धिके लिये मैं इस "शुद्धिदीपिका" नामक ग्रन्थको प्रकट करताहूं ॥ २ ॥

शास्त्रप्रशंसा।

विफलान्यन्यशास्त्राणि विवादस्तेषु केवलम्।
सफलं ज्योतिषं शास्त्रं चन्द्रार्कौ यत्र साक्षिणौ॥ ३ ॥

ज्योतिषके अतिरिक्त जो सब शास्त्र हैं, वह प्रायः समस्तही विवाद पूर्ण हैं और साक्षात् सम्बन्धमें उनसे फल प्रत्यक्ष नहीं होता, अतएव ज्योतिषके अतिरिक्त अन्य शास्त्र विफल हैं, और चन्द्र तथा सूर्य साक्षात सम्बन्धमें फल देते हैं इसकारण "ज्योतिषशास्त्र" सफल कहा गया है ॥ ३ ॥

मुहूर्त्ततिथिनक्षत्रमृतवश्चायनानि च। सर्वाणि व्याकुलानि स्युर्न स्यात् साम्वत्सरो यदि ॥ ४ ॥

मुहूर्त्त, तिथि, नक्षत्र, ऋतु और अयन इत्यादि समस्तही दैवज्ञके अभावमें व्याकुल होतेहैं, अर्थात् दैवज्ञके न होनेसे किससमयमें कौन मुहूर्त्त, कौन तिथि, कौन नक्षत्र और कौन अयनादि होगा, कुछभी स्थिर नहीं हो सकता ॥ ४ ॥

सूर्याद्युत्पत्तिः ।

तमस्तोमावृते विश्वे जगदेतच्चराचरम् ।
राशिग्रहोडुसंघातं सृजन्सूर्योऽभवत्तदा ॥ ५ ॥

यह विश्व(संसार)सृष्टिके पहिले अंधकारसमूहसे ढका-हुआ था, उसी समयमें परमपुरुष भगवान् स्थावरजंग-मात्मक जगत् मेषादि बारह राशि, रव्यादि नवग्रह, और अश्विन्यादि नक्षत्रोंकी सृष्टि करके स्वयं सूर्यनामसे प्रका-शित हुएथे ॥ ५ ॥

कालनरोत्पत्तिः ।

ततः प्रभृति जन्तूनां सदसत्कर्मसूचकः ।
होराख्यो वर्त्तते कालो ह्यहोरात्रेऽत्र लोपतः ॥ ६ ॥

सृष्टिके पीछे अहोरात्रिशब्दके "अत्र" यह दो अक्षर लोप होकर प्राणियोंका सद् असत् कर्म सूचक काल होरानामसे अभिहित हुआथा ॥ ६ ॥

अजादिराशिभिः कालनरस्यांगविभागः ।

शीर्षमुखबाहुहृदयोदराणि कटिवस्तिगुह्यसंज्ञकानि ।
ऊरू जानुकजंघे चरणाविति राशयोऽजाद्याः ॥ ७ ॥

अब मेषादिराशिके द्वारा कालपुरुषका अंग विभाग कहाजाताहै । मेषादि-बारहराशि क्रमशः कालपुरुषके मस्तकादि बारह अंगहैं, अर्थात् मेषराशि कालपुरुषका मस्तक, वृष मुख, मिथुन दोनों बाहु, कर्क हृदय, सिंह उदर, कन्या कटि, तुला बस्ति ( नाभिकाअधोभाग ) वृश्चिक गुह्य, धनुः दोनों ऊरु, मकर दोनों जानु, कुंभ दोनों जंघा, और मीन राशि कालपुरुषके दोनों चरण

होतेहैं। इस कालपुरुषके अंगविभागक्रमसे जात बालकको भी लग्नसे गणना करके मस्तकादि बारह अंगकी कल्पना करनी चाहिये और तस्करके शारीरिक चिह्नादि काभी इसीके द्वारा अनुमान करै ॥ ७ ॥

राशिकथनम्।

मेषवृषमिथुनकर्कटसिंहाः कन्या तुलाथ वृश्चिकभम्। धनुरथ मकरः कुम्भो मीन इति च राशयः कथिताः ॥ ८ ॥

अनन्तर मेषादि बारह राशिके नाम कथित होतेहैं— मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनुः, मकर, कुंभ और मीन यह बारह राशि कही गई हैं ॥ ८ ॥

राशिस्वरूपकथनम्।

सप्तविंशतिभैर्ज्योतिश्चक्रं स्तिमितवायुगम्।
तदर्कांशो भवेद्राशिर्नवर्क्षचरणाङ्कितः ॥ ९ ॥

ज्योतिश्चक्रमें राशिविभाग कथित होताहै। सत्ताईस नक्षत्रयुक्त ज्योतिश्चक्र निश्चल वायुके ऊपरी भागमें स्थितहै। इसचक्रके द्वादशभागके एक एक भागमें अर्थात् नव नव पादमें सवा दो २ नक्षत्रमें एक एक राशि होती है। यथाः— अश्विनीनक्षत्रके चार पाद, भरणीके चार पाद और कृत्तिका नक्षत्रके प्रथम पादमें मेषराशि होतीहै। कृत्तिकाके शेष तीन पाद, रोहिणीके चार पाद, और मृगशिराके प्रथम दो पादमें वृषराशि होतीहै। इसीप्रकार नव नव पादमें अपरापर समस्त राशि जाननी चाहिये ॥ ९ ॥

नक्षत्रराशिविभागः।

अश्विनीमघमूलादौ मेषसिंहहयादयः।
विषमर्क्षाणि वर्त्तन्ते पादवृध्द्या यथोत्तरम् ॥ १० ॥

अन्यप्रकारसे राशि नक्षत्रविभाग कथित होताहै- अश्विन्यादि आश्लेषापर्यन्त नव नक्षत्र, मघादि ज्येष्ठा पर्यन्त नव नक्षत्र, और मूलादि रेवतीपर्यन्त नव नक्षत्रमें यथासंख्या मेषादि चार राशि, सिंहादि चार राशि और धनुः इत्यादि चार राशि होतीहैं अर्थात् मेषादि सिंहादि और धनुः इत्यादि चार चार राशिही विषम-नक्षत्रके एक एक पाद वृद्धि क्रमसे निवृत्त होतीहैं, यथा विषम तृतीय नक्षत्र कृत्तिकाके प्रथमपादमें मेषराशिकी निवृत्ति होतीहै इसी प्रकार पंचम मृगशिरके दूसरे पादमें वृषकी निवृत्ति, सप्तम पुनर्वसुके तीसरे पादमें मिथुनकी निवृत्ति, और नवम अश्लेषानक्षत्रके चौथे पादमें कर्क राशिकी निवृत्ति होतीहै और मघासे गणना करनेपर विषम नक्षत्रमें अर्थात् उत्तराफाल्गुनीमें प्रथमपादमें सिंहकी निवृत्ति, चित्राके दूसरे पादमें कन्याकी निवृत्ति, विशाखाके तीसरे पादमें तुलाकी निवृत्ति होतीहै और मूलसे गणना करके विषमनक्षत्र उत्तराषाढके प्रथमपादमें धनुकी निवृत्ति, धनिष्ठाके दूसरे पादमें मकरकी निवृत्ति पूर्वाभाद्रपदके तीसरे पादमें कुंभकी निवृत्ति और रेवतीनक्षत्रके चौथे पादमें मीनराशिकी निवृत्ति होतीहै ॥ १० ॥

राशिनामधिष्ण्यादेवताकथनम्।

मत्स्यो घटी नृमिथुनं सगदं सवीणं चापी नरोऽ
श्वजघनो मकरो मृगास्यः। तौली सशस्यदहना

प्लवगा च कन्या शेषाः स्वनामसदृशाः खचराश्च सर्वे ॥ ११ ॥

राशियोंके अधिष्ठात्रीदेवता वर्णित होतेहैं–यथा–अन्योन्य पुच्छाभिषक्त, परस्पर गात्रनिरीक्षक और रक्तमुख दो मछली मीन राशि, कंधेपर घट धारण किये मनुष्य कुंभ राशि, स्त्री और पुरुष मिथुन राशि, तिनमें स्त्री वीणाधारिणी और पुरुष गदाधारी है, अश्वके जंघाकी समान जंघायुक्त और धनुर्धारी पुरुष धनुराशि, मृगके मुखकी समान मुखयुक्त मकरराशि, तराजू हाथमें लिये पुरुष तुलाराशि, नावपर चढी शस्य अग्नि हाथमें लिये कुमारी कन्याराशि, इनके अतिरिक्त जो मेषादि सब राशिहैं, वह अपने अपने नामके सदृश हैं अर्थात् मेष मेषाकृति, वृष वृषाकार, सिंह सिंहाकृति, कर्क कर्कटसदृश और वृश्चिक वृश्चिकाकृति है, यह मेषादि सब राशिही यथायोग्यस्थानमें वास करतीहैं ॥ ११ ॥

द्विपद्चतुष्पद्राशिकथनम् ।

मिथुनतुलाघटकन्या द्विपदाख्याश्चापपूर्वभागाश्च ।
मृगधनुराद्यन्तार्द्धे वृषाजसिंहाश्चतुश्चरणाः ॥ १२ ॥

द्विपद और चतुष्पद राशि कथित होतीहैं–मिथुन, तुला, कुंभ, कन्या और धनुषका पूर्वार्द्ध भाग द्विपद राशि है, मकरका पूर्वार्द्धभाग, धनुषका शेषार्द्ध, वृष मेष और सिंह चतुष्पदराशि हैं ॥ १२ ॥

कीटसरीसृपराशिकथनम् ।

कर्कटवृश्चिकमीना मकरान्त्यार्द्धश्च कीटसंज्ञाः
स्युः। वृश्चिकराशिर्मुनिभिः सरीसृपत्वेन निर्दिष्टः १३॥

कीटादि संज्ञा कथित होतीहैं–कर्क, वृश्चिक, मीन और मकरके शेषार्द्ध भागको कीटराशि कहा जाताहै, विशेषतः वृश्चिक राशि सरीसृप कहकर निर्दिष्टहै ॥१३॥

ग्राम्यारण्यराशिकथनम्।

ग्राम्या मिथुनतुलास्त्रीचापालिघटा निशासु वृषमेषौ।
मकरादिमार्द्धसिंहौ वन्यौ दिवसेऽजवृषभौ ॥ १४ ॥

ग्राम और आरण्य राशि कथित होती हैं मिथुन, तुला, कन्या, धनुः, वृश्चिक और कुम्भ यह कई ग्राम्य राशि हैं। रात्रिमें वृष और मेष ग्राम्य राशिके नामसे विख्यात होती हैं, मकरका प्रथमार्द्ध भाग और सिंह वन्य ( आरण्य ) राशि हैं और दिनमें मेष एवं वृष वन्य राशि कहकर अभिहित होतीहैं ॥ १४ ॥

जलजराशिनिर्णयः।

जलजौ कर्कटमीनौ मकरान्तार्द्धंचशिवमते कुम्भः।
राशिस्वरूपमेतन्मार्कंडेयादिभिः कथितम् ॥ १५ ॥

जलजराशि कथित होतीहैं। कर्क मीन और मकरका शेषार्द्ध भाग जलजराशि है और शिवपण्डितके मतसे कुम्भ राशिकोभी जलजराशि कहा जाता है। मार्कंडेय इत्यादि मुनियोंने राशिका स्वरूप इस प्रकार वर्णन किया है ॥ १५ ॥

मेषादिराशीनां वर्णकथनम्।

अरुणपीतहरितपाटलपाण्डुविचित्राः सितेतर-
पिशंगौ। पिंगलकर्बुरबभ्रुकमलिना रुचयो यथा-
संख्यम् ॥ १६ ॥

मेषादि राशिका वर्ण कथित होताहै मेषराशि रक्तवर्ण, वृष शुक्लवर्ण, मिथुन हरितवर्ण, कर्क पाटल ( श्वेतरक्त ) वर्ण, सिंह राशि पाण्डु ( ईषत् शुक्ल ) वर्ण, कन्या राशि विचित्र ( नाना ) वर्ण, तुला कृष्णवर्ण, वृश्चिक पिशंग ( कद्रुपिंगल ) वर्ण, धनु, अग्निवर्ण, मकर शबलवर्ण कुंभ कपिलवर्ण और मीनराशि कृष्णवर्ण होतीहै ॥ १६ ॥

राशीनां क्रूरसौम्यादिविवेकः ।

क्रूरोऽथ सौम्यः पुरुषोऽङ्गना च ओजोऽथ युग्मं विषमः समश्च । चरस्थिरद्व्यात्मकनामधेया मेषादयोऽमी क्रमशः प्रदिष्टाः ॥ १७ ॥

राशियोंकी क्रूरादिसंज्ञा कथित होतीहैं मेषादि बारह राशि दो दो क्रमसे क्रूर और सौम्य, पुरुष और स्त्री, ओज और युग्म, विषम और सम नामसे विख्यात होतीहैं, और मेषादि तीन क्रमसे चर स्थिर और द्व्यात्मक अर्थात् द्विस्वभाव संज्ञासे अभिहित होतीहैं, यथा—मेष, क्रूर, पुरुष, ओज, विषम और चरराशि । वृष सौम्य, अंगना, युग्म, और स्थिर राशि । मिथुन क्रूर, पुरुष, ओज, विषम और द्व्यात्मकराशि । कर्क सौम्य, अंगना, युग्म, सम और चरराशि । सिंह क्रूर, पुरुष, ओज, विषम और स्थिर राशि । कन्या सौम्य, अंगना, युग्म, सम और द्व्यात्मक राशि । तुला क्रूर, पुरुष, ओज, विषम और चरराशि । वृश्चिक सौम्य, अंगना, युग्म, सम और स्थिर राशि । धनुःक्रूर, पुरुष, ओज, विषम और द्व्यात्मक राशि । मकर सौम्य, अङ्गना, युग्म, सम और चरराशि । कुंभ क्रूर, पुरुष, ओज, विषम और

स्थिर राशि । मीन सौम्य, अंङ्गना, युग्म सम और द्व्यात्मक राशि है ॥ १७ ॥

सामान्यतो राशिसंज्ञा ।

राशिनामानि च क्षेत्रं भमृक्षं गृहनाम च । मेषादीनाञ्च पर्यायं लोकादेव विचिन्तयेत् ॥ १८ ॥

साधारणरूपसे राशिसंज्ञा कथित होतीहै—यथा—क्षेत्रभ ऋक्ष, और गृहनाम अर्थात् गृहवाचक शब्द द्वादशराशिवाचक है ( क्षेत्र वा भ इत्यादि प्रत्येक शब्दसेही राशिको समझना ) अन्यान्य पर्याय लोकपरम्परासे अवगत होजातेहैं ॥ १८ ॥

मेषादीनां विशेषसंज्ञाकथनम् ।

क्रियताबुरिजितुमकुलीरलेयपाथेययूककौर्प्याख्याः । तौक्षिक आकोकेरो हृद्रोगश्चान्त्यभश्चेत्थम् ॥ १९ ॥

अनन्तर राशियोंकी विशेषसंज्ञा कथित होतीहै । मेषका अन्य नाम क्रिय, वृषका नामान्तर ताबुरि, मिथुनका दूसरा नाम जितुम, कर्कका अन्य नाम कुलीर, सिंहका नामान्तर लेय, कन्याका दूसरा नाम पाथेय, तुलाका नामान्तर यूक, वृश्चिकका अन्य नाम कौर्पी, धनुःकी संज्ञान्तर तौक्षिक, मकरका अन्य नाम आकोकेर, कुंभका नामान्तर हृद्रोग और मीनका दूसरा नाम अन्त्यभ है ॥ १९ ॥

वेशिस्थानादिकथनं—लग्नहोराकथनञ्च ।

वेशिः सूर्य्याद्द्वितीयर्क्षे स्वामिदिक्संज्ञितः ध्रुवः । राशीनामुदयो लग्नं होरा राश्यर्द्धलग्नयोः ॥ २० ॥

अब वेशिआदि स्थान कथित होतेहैं सूर्य जिस राशिमें स्थित हो उसकी पर राशि अर्थात् दूसरे स्थानका नाम वेशि है और उस राशिके अधिपति ग्रहकी दिक्का नाम प्लव है, मेषादि द्वादशराशिके उदयका नाम लग्न है और राशिके अर्द्ध और लग्नार्द्धको होरा कहते हैं ॥ २० ॥

राश्यधिपकथनम्।

कुजशुक्रबुधेन्द्वर्कसौम्यशुक्रावनीभुवाम्।
जीवार्किभानुजेज्यानां क्षेत्राणि स्युरजादयः ॥ २१ ॥

राशियोंके अधिपति कथित होतेहैं मंगल, शुक्र, बुध, चन्द्र, रवि, बुध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति, शनि, और बृहस्पति इन सब ग्रहोंके क्षेत्र मेषादि बारह राशि होतीहैं अर्थात् मेषके अधिपति मंगल, वृषके अधिपति शुक्र, मिथुनके अधिपति बुध, कर्कके अधिपत्ति चन्द्र, सिंहके अधिपति रवि, कन्याके अधिपति बुध, तुलाके अधिपति शुक्र, वृश्चिकके अधिपति मंगल, धनुके अधिपति बृहस्पति, मकर और कुंभके अधिपति शनि और मीनराशिके अधिपति बृहस्पति होतेहैं ॥ २१ ॥

रव्यादेरुच्चनीचकथनम्।

सूर्य्याद्युच्चान्क्रियवृषमृगस्त्रीकुलीरान्त्ययूके दिग्वह्नीन्द्रद्वयतिथिशरान्सप्तविंशांश्च विंशान्। अंशानेतान् वदति यवनश्चान्त्यतुंगान् सुतुंगान् तानेवांशान्मदनभवनेष्वाह नीचान् सुनीचान् ॥ २२ ॥

अनन्तर रव्यादि ग्रहका उच्च नीचत्व कथित होताहै मेष, वृष, मकर, कन्या, कर्क, मीन, और तुला, इन सात राशिका संख्यानुसार दश, तीन, अट्ठाईस,

पंचदश, पंच, सप्तविंशति, (२७) और विंशति (२०) अंशक्रमसे रवि, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, और शनि इन सात ग्रहोंका उच्चस्थान होताहै, यवनमुनिने इसप्रकार कहाहै और इन समस्त अंशके अन्त्यभागका नाम सुतुङ्ग है और उच्चराशिको सप्तमराशिमें दश, तीन इत्यादि अंश रव्यादिग्रहका नीचस्थान और अन्त्यांशको सुनीचस्थान कहाजाता है। यथा मेषराशिका एकादशांश रविका उच्च स्थान, और दशांशका शेषार्द्ध (दशमांश) सुतुङ्ग स्थान। वृषराशिके तीन अंश चन्द्रका उच्च स्थान और तृतीयांश चरमांश सूच्चस्थान मकरराशिके अट्ठाईस अंश मंगलका उच्चस्थान और अट्ठाईस अंशका शेषांश सुतुङ्गस्थान। कन्याराशिका पंचदशांश बुधका उच्चस्थान और पंचमदशांशका शेषांश सूच्चस्थान। कर्कराशिका पंचमांश बृहस्पतिका उच्चस्थान और पंचमांश सुतुङ्गस्थान। मीनराशिके सत्ताईस अंश शुक्रका उच्चस्थान और सत्ताईस अंशका शेषांश सूच्चस्थान। तुलाराशिके वीस अंश शनिका उच्च स्थान और वीस अंशका चरमांश सुतुंगस्थान होताहै। इसी प्रकार मेषका सप्तम तुलाराशिका दशांश रविका नीच स्थान और दशमांश सुनीच स्थान। वृषराशिका सप्तम वृश्चिक है, उसके तीन अंश चन्द्रका नीच स्थान और तृतीयांश सुनीच स्थान। मकरराशिका सप्तम कर्क, उसके अट्ठाईस अंश मंगलका नीचस्थान और अट्ठाईस अंशका शेषांश सुनीचस्थान। कन्याराशिका सप्तम मीन, उसके पंचदशांश बुधका नीच स्थान और पञ्चदशांशका चरमांश सुनीच स्थान। कर्कराशिका सप्तम मकर, उसके पंचांश बृहस्पतिका

नीचस्थान और पंचमांश सुनीचस्थान। मीनके सप्तम कन्याराशिके सत्ताईस अंश शुक्रका नीचस्थान और सत्ताईस अंशका शेषांश सुनीचस्थान तुलाके सप्तम मेष-राशि, उसके वीस अंश शनिका नीचस्थान और विंशति अंशका चरमांश सुनीचस्थान होताहै, यह सब अंश राशिके त्रिंशांश ( तीस अंश ) में जानने चाहिये ॥२२॥

मूलत्रिकोणकथनम्।

सिंहवृषाजप्रमदाकार्म्मुकभृत्तौलिकुम्भधराः।
सूर्य्यादीनां मूलत्रिकोणभवनान्यनुक्रमशः ॥ २३ ॥

सूर्यादि ग्रहोंका मूलत्रिकोण कथित होताहै—सिंह, वृष, मेष, कन्या, धनु, तुला और कुंभ यह सात राशि क्रमशः रव्यादि सप्तग्रहोंकी मूलत्रिकोण होतीहैं अर्थात रविका सिंह, चन्द्रका वृष, मंगलका मेष, बुधकी कन्या, बृहस्पतिका धनु, शुक्रका तुला और शनिग्रहका मूल-त्रिकोण कुम्भराशि होतीहै ॥ २३ ॥

मूलत्रिकोणांशकथनम्।

रविभौमजीवभार्गवशनैश्चराणां त्रिकोणभागाःस्युः।
नखरविदिक्तिथिनखराञ्चन्दोर्दिग्भांशकाः सू-
त्रात् ॥ २४ ॥

रव्यादि सात ग्रहोंकी क्रमानुसार सिंहादि सप्तराशि मूलत्रिकोण होनेपरभी सिंहराशिके वीस अंश रविके, मेषराशिके बारह अंश मंगलके, धनुराशिके दश अंश बृहस्पतिके, तुला राशिके पन्द्रह अंश शुक्रके, और कुम्भराशिके वीस अंश शनिके मूलत्रिकोणांश होतेहैं बुध और चन्द्रके विशेष हैं, इस बुधके सूत्रांश, कन्या-

राशिके पन्द्रह अंशके पीछे दशांश और चन्द्रके सूच्चांश वृष राशिके तृतीयांशके पीछे सत्ताईस अंश मूलत्रिकोण होताहै ॥ २४ ॥

### नवांशवर्गोत्तमकथनम् ।

चराणां सत्रिकोणानां तच्चराद्या नवांशकाः । राशीनां स्वनवांशो यः स वर्गोत्तमसंज्ञकः ॥ २५ ॥
चराणां प्रथमोऽशश्च स्थिराणां पंचमस्तथा । द्व्यात्मकानां तथा चान्त्यः स वर्गोत्तमसंज्ञकः ॥ २६ ॥

नवांश कथित होता है-मेष, कर्क, तुला, और मकर, इन चारों चरराशिकी और इन चरराशिकी पंचम और नवमराशिकी नवांशगणना इन चरराशिसेही करनी चाहिये, स्वस्वराशिका जो नवांश है, उसको वर्गोत्तम कहते हैं। चर ( मेष, कर्क, तुला और मकर, ) राशिका प्रथम अंशही वर्गोत्तम संज्ञामें अभिहित होताहै। स्थिर अर्थात् वृष, सिंह, वृश्चिक और कुंभ राशिका पांचवां अंश वर्गोत्तम नामसे कथित होताहै और द्व्यात्मक अर्थात् मिथुन, कन्या, धनु और मीन राशिके नवांश-को वर्गोत्तम कहते हैं ॥ २५ ॥ २६ ॥

### होराद्वादशांशद्रेष्काणव्यवस्था ।

होरे विषमेऽर्केन्द्वोः समराशौ चन्द्रसूर्य्ययोः क्रमशः । स्वगृहाद्द्वादशभागा द्रेष्काणाः प्रथमपंचनवपानाम् ॥ २७ ॥

होरादि कथित होताहै। राशि ( लग्न )के अर्द्धभागको होरा कहा जाताहै विषम राशिके ( मेष, मिथुन, सिंह,

तुला, धनु और कुंभके ) प्रथम होरा रविका और द्वितीयहोरा चन्द्रका होताहै और समराशि अर्थात् वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीनके प्रथम होरा चन्द्रका और द्वितीय होरा रविका होताहै । राशि (लग्न) को द्वादशभागमें विभक्त करनेसे एक एक भागको द्वादशांश कहाजाताहै । प्रथम द्वादशांशके स्वीय राश्यधिपतिही अधिपति होतेहैं, द्वितीय तृतीय इत्यादि द्वादशांशके अधिपति द्वितीय तृतीय राशिके अधिपति क्रमसे जानने चाहिये। जिस प्रकार मेषलग्नके प्रथम द्वादशांशपति मंगल, द्वितीय द्वादशांश पति शुक्र, तृतीय द्वादशांशपति बुध इत्यादि । राशि (लग्न) को तीन भागमें विभक्त करनेसे एक एक भागका नाम द्रेष्काण है । प्रथम द्रेष्काणका अधिपति लग्नाधिपति ग्रह, द्वितीय द्रेष्काणका अधिपति लग्नसे पंचमराशिका अधिपति ग्रह, और तृतीय द्रेष्काणका अधिपति नवमराशिका अधिपति ग्रह होगा । जिसप्रकार मेष लग्नके प्रथम द्रेष्काणका अधिपति मेषाधिपति मंगल, द्वितीय द्रेष्काणके अधिपति धनुका अधिपति वृहस्पति होताहै, ऐसेही वृषलग्नके प्रथम द्रेष्काणका अधिपति वृषाधिपति शुक्र, द्वितीय द्रेष्काणका अधिपति कन्याधिपति बुध, तृतीय द्रेष्काणका अधिपति मकराधिपति शनि, मिथुनलग्नके प्रथम द्रेष्काणका अधिपति मिथुनाधिपति बुध, द्वितीय द्रेष्काणका अधिपति तुलाधिपति शुक्र, तृतीय द्रेष्काणका अधिपति कुम्भाधिपति शनि, कर्क लग्नके प्रथम द्रेष्काणका अधिपति कर्कटाधिपति चन्द्र, द्वितीय द्रेष्काणका अधिपति वृश्चिकाधिपति मंगल, तृतीयद्रेष्काणका अधिपति मीनाधिपति वृहस्पति । इसीप्रकार

अन्यान्य लग्नमें भी द्रेष्काणाधिपतिका निर्णय करना चाहिये ॥ २७ ॥

जलदहनमिश्रद्रेष्काणव्यवस्था।

सदसद्ग्रहद्रेष्काणा जलदहनाख्याः प्रकीर्त्तिताः क्रमशः। पापयुताः सलिलाख्या मिश्रा दहनाश्च सौम्ययुताः ॥ २८ ॥

शुभ और अशुभ ग्रहके समस्त द्रेष्काण क्रमशः जल और दहनसंज्ञासे अभिहित होतेहैं अर्थात् शुभग्रहके ( चंद्र बुध बृहस्पति और शुक्रके ) द्रेष्काणका नाम जल है, अशुभग्रहके ( रवि, मंगल और शनिके ) द्रेष्काणका नाम दहन है। शुभग्रहका जलद्रेष्काण पापग्रहयुक्त होनेसे उसको मिश्र कहजाताहै और पापग्रहका दहनद्रेष्काण शुभग्रहयुक्त होनेसेभी मिश्रसंज्ञासे अभिहित होताहै२८॥

सौम्यरूपद्रेष्काणव्यवस्था।

नृयुग्ममीनयोराद्यौ मध्यौ कर्कटचापयोः। कन्यान्तः सौम्यरूपाख्या द्रेष्काणाः पञ्च कीर्त्तिताः ॥ २९ ॥

मिथुन और मीन लग्नका प्रथम द्रेष्काण, कर्क और धनुका दूसरा द्रेष्काण और कन्यालग्नका तीसरा द्रेष्काण, इन पांच द्रेष्काणको सौम्यरूप कहतेहैं ॥ २९ ॥

फलपुष्पयुतरत्नभाण्डान्वितद्रेष्काणव्यवस्था।

द्रेष्काणः कर्कटाद्यस्तु फलपुष्पयुतः स्मृतः। रत्नभाण्डान्वितौ ज्ञेयौ धनुर्म्मत्स्यतुलादिमौ ॥ ३० ॥

कर्कलग्नका प्रथम द्रेष्काण फलपुष्पयुत संज्ञासे अभिहित होताहै और धनुका द्वितीय द्रेष्काण और तुलाके प्रथम द्रेष्काणको रत्नभाण्डान्वित कहतेहैं ॥ ३० ॥

रौद्रद्रेष्काणव्यस्था।

रौद्रमेषमृगालीनां मध्यान्ताः कुम्भजास्त्रयः। नृयुक्के-
केतुलान्तिमौ मीनमध्यः सिंहाद्यमध्यमौ ॥ ३१ ॥

मेष, मकर और वृश्चिकके दूसरे और तीसरे द्रेष्काण एवं कुंभके पहिले दूसरे और तीसरे द्रेष्काणको रौद्र कहते है। तथा मिथुन और तुलाके तीसरे द्रेष्काण मीनके दूसरे द्रेष्काण एवं सिंहके पहिले और दूसरे द्रेष्काणकोभी रौद्र कहा जाताहै ॥ ३१ ॥

उद्यतास्त्रद्रेष्काणव्यवस्था।

उद्यतास्त्रानृयुङ्मेषमृगकुम्भझषास्त्रयः। चापाद्य-
न्तौ तुलान्त्यश्च मध्यौ सिंहादिनामकौ ॥ ३२ ॥

मिथुन, मेष, मकर और कुंभके पहिले दूसरे और तीसरे द्रेष्काण, धनुके पहिले और तीसरे द्रेष्काण, तुलाके तीसरे द्रेष्काण एवं सिंह और कन्याके दूसरे द्रेष्काणका नाम उद्यतास्त्र है ॥ ३२ ॥

सर्पनिगडद्रेष्काणव्यवस्था।

मीनकर्कटयोरन्त्यौ वृश्चिकस्याद्यमध्यमौ।
सर्पाश्चत्वार एवैते द्रेष्काणा निगडाश्च ते ॥ ३३ ॥

मीन और कर्कका तीसरा द्रेष्काण वृश्चिकका पहिला और दूसरा द्रेष्काण इन चार द्रेष्काणका नाम सर्पनिगड कहाजाता है ॥ ३३ ॥

व्याडद्रेष्काणव्यवस्था।

व्याडाः कुम्भालिमध्याद्याः कर्किमीनान्त्यसम्भवौ।
सिंहाद्यन्त्यौ मृगान्त्यश्च तुलामध्यान्तसम्भवौ ३४॥

कुंभ और वृश्चिकके दूसरे तथा पहिले द्रेष्काण कर्क और मीनके तीसरे द्रेष्काण, सिंहके पहिले और तीसरे द्रेष्काण, मकरके तीसरे द्रेष्काण, एवं तुलाके दूसरे और तीसरे द्रेष्काणका नाम व्याड है ॥ २४ ॥

पाशधारिपक्षिद्रेष्काणव्यवस्था।

वृषाद्यमकराद्यन्ता द्रेष्काणाः पाशधारिणः। तुला-
मध्यान्तसिंहाद्याः कुम्भाद्याः पक्षिणः स्मृताः॥२५॥

वृषके पहिले द्रेष्काण तथा मकरके पहिले और तीसरे द्रेष्काणको पाशधारि कहतेहैं। तुलाके दूसरे और तीसरे द्रेष्काण, सिंहके पहिले द्रेष्काण और कुंभके पांचवे द्रेष्काणका नाम पक्षि है ॥ २५ ॥

त्रिंशांशविवेकः।

कुजयमजीवज्ञसिताःपञ्चेन्द्रियवसुमुनीन्द्रियांशानाम्।
विषमे समेषु तत्क्रमतस्त्रिंशांशपाः कल्प्याः॥ २६ ॥

अनन्तर राशि (लग्न) का त्रिंशांश कथित होताहै। लग्नको तीस भागमें विभक्त करनेसे एक एक भागको त्रिंशांश कहाजाताहै। विषम (मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु, और कुंभ) राशिके प्रथम पांच भागका अधिपति मंगल, फिर पांच भागका अधिपति शनि, आठभागका अधिपति बृहस्पति, इसके पीछे सातभागका अधिपति बुध, और शेष पांच भागका अधिपति शुक्र ग्रह होताहै। समराशिका त्रिंशांश विपरीत भावसे देखना चाहिये अर्थात् वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीनराशिके प्रथम पांच भाग शुक्रके, फिर सात भाग बुधके, फिर आठ भाग-बृहस्पतिके पांच, भाग शनिके और शेष पांच भाग मंगल ग्रहके होंगे ॥ २६ ॥

षड्वर्गविवेकः ।

क्षेत्रं होराथ द्रेष्काणो नवांशो द्वादशांशकः । त्रिंशांशकश्च वर्गोऽयं त्र्याद्यैर्यो यस्य तस्य सः ॥ ३७ ॥

अब षड्वर्ग कथित होताहै । क्षेत्र, होरा, द्रेष्काण, नवांश, द्वादशांश और त्रिंशांशको षड्वर्ग कहतेहैं और क्षेत्र होरा इत्यादि एक एकको भी वर्ग कहाजाताहै । त्र्यादि वर्ग अर्थात् तीन वर्गका अधिपति एकग्रह होनेपर उत्पन्न हुआ बालक उसी ग्रहके आकारको प्राप्त होताहै ॥ ३७ ॥

राशीनां दिग्विवेकः ।

प्रागादिककुभां नाथा यथासंख्यं प्रदक्षिणम् ।
मेषाद्या राशयो ज्ञेयास्त्रिरावृत्तिपरिभ्रमात् ॥ ३८ ॥

दिगधिपति राशि कथितहोतीहै । पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, और उत्तर इन चार दिशामें त्रिरावृत्ति ( तीन २ वार ) परिभ्रमणद्वारा मेषादि बारह राशि क्रमशः अधिपति होती हैं, यथा मेष, सिंह और धनु, यह तीन राशि पूर्वदिशाकी अधिपति । वृष, कन्या और मकर, दक्षिण दिशाकी अधिपति । मिथुन, तुला और कुंभ, पश्चिम दिशाकी अधिपति । और कर्क, वृश्चिक तथा मीन राशि उत्तर दिशाकी अधिपति हैं ॥ ३८ ॥

पृष्ठोदयादिविवेकः ।

गोजाश्विकर्किमिथुनाः समृगा निशाख्याः पृष्ठोदया विमिथुनाः कथितास्त एव । शीर्षोदया दिनबलाश्च भवन्ति शेषा लग्नं समेत्युभयतः पृथुरोमयुग्मम् ॥ ३९ ॥

पृष्ठोदयादिसंज्ञा कथित होतीहैं, वृष, मेष, धनु, मिथुन और मकर यह सब राशि रात्रिसंज्ञक अर्थात् रात्रिमें बलवान् होतीहैं। मिथुनके अतिरिक्त वृष, मेष, धनु और मकर राशिको पृष्ठोदय कहाजाताहै। अपर सब राशि अर्थात् सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और कुंभ शीर्षोदयसंज्ञासे अभिहित होती हैं और दिनमें बली होतीहैं। मिथुन राशिकीभी शीर्षोदयसंज्ञा है। मीनलग्नकी पृष्ठोदय और शीर्षोदय यह दोनों संज्ञा हैं और दिन रात्रि सब समयमेंही मीनराशि बलवान् होतीहै ॥ ३९ ॥

पत्यादियोगादिना राशिबलाबलम्।

पतितं प्रियबुधसौम्योच्चस्थैर्युतवीक्षितो बली राशिः। स्वल्पबलोऽन्यैर्मिश्रैर्मध्ये सर्व्वायुतेक्षितस्त्वबलः ॥ ४० ॥

पत्यादि ग्रहके योगादिद्वारा राशिका बलाबल कथित होताहै, यथा मेषादिराशि अपने अपने अधिपति ग्रहद्वारा, स्वस्वअधिपति ग्रहके मित्रग्रहद्वारा शुभाशुभ-युक्त बुधग्रहद्वारा, शुभग्रहद्वारा और उच्चस्थित ग्रहद्वारा युक्त वा ईक्षित (देखी हुई) होनेपर बलवान् होतीहैं और पत्यादिग्रहसे युक्त वा ईक्षित न होनेपर प्रत्येक पादमें बली होतीहै। इसीप्रकार शुभग्रहके द्वारा दृष्ट होनेपर चतुर्थांशबल, पापग्रहके देखनेपर हीनबल, पत्यादिग्रह और अन्यान्यग्रहके द्वारा वीक्षित वा युक्त होनेपर मध्यबल और सब ग्रहोंके द्वारा दृष्ट वा युक्त न होनेसे बलहीन होतीहै ॥ ४० ॥

केन्द्रादिस्थानबलम् ।

केन्द्रस्थान् प्रबलान् राशीन् मध्यान् पनफराश्रितान् । आपोक्लिमगतान् गार्गिः सर्वान् हीनबलान् वदेत् ॥ ४१ ॥

स्थानबल कथित होताहै केन्द्र ( लग्न चतुर्थ सप्तम और दशम ) स्थानस्थित समस्त राशि पूर्ण बली होतीहैं अर्थात् इन सब स्थानोंमें स्थित ग्रहगण पूर्ण बली होतेहैं । पनफर अर्थात् लग्नके द्वितीय, पंचम, अष्टम और एकादशस्थानस्थित ग्रह अर्द्धबली और आपोक्लिम अर्थात् लग्नके तृतीय, षष्ठ, नवम और द्वादश स्थान स्थित ग्रह हीनबल ( पादबली ) होतेहैं ॥ ४१ ॥

राशीनां दिग्बलम् ।

नरास्तु बलिनो लग्ने चतुर्थे जलराशयः ।
सप्तमे वृश्चिकश्चैव दशमे पशवस्तथा ॥ ४२ ॥

राशिका दिग्बल कथित होताहै, मिथुन, तुला, कुंभ, कन्या और धनुका पूर्वार्द्ध यह सब नरराशि लग्नमें जानेसे पूर्व दिग् बली होतीहै, क्योंकि राशिके उदयका नाम लग्न है और उदयभी पूर्व दिशामें ही होताहै । मीन, कर्क और मकरका परार्द्ध यह जलराशि लग्नके चौथे स्थानमें स्थित होनेसे उत्तरादिक् बली होतीहै, क्योंकि चक्रभ्रमणके क्रमसे चतुर्थ राशिही उत्तर दिशामें अवस्थित होतीहै । वृश्चिक राशि सप्तमस्थ होनेसे पश्चिमदिक् बली होतीहै । क्योंकि, लग्नस सप्तराशिम अस्तका नियम अस्तभी पश्चिम दिशामेंही होता है । मेष, वृष, सिंह, धनुका पूर्वार्द्ध और मकरका पूर्वार्द्ध यह सब पशु-

राशि लग्नके दशमस्थ होनेपर दक्षिणदिक् बली होगी, क्योंकि लग्नका दशमाधिपति दक्षिणदिशामें स्थिति करता है, इसी कारण लग्नके सप्तमस्थ नरराशि हीन बल होती है, दशमस्थ जलराशिभी हीनबल होती है, और लग्नके चतुर्थस्थ चतुष्पादराशि और लग्नगत वृश्चिकराशि भी हीनबल होतीहै । परन्तु जलराशि और पशुराशि लग्नगत होनेपर अर्द्धबली होतीहै ॥ ४२ ॥

राशीनां कालबलम् ।

दिनभागे मनुष्यास्तु निशायास्तु चतुष्पदाः ।
सन्ध्याद्वयेऽवशेषास्तु बलिनः परिकीर्तिताः ॥४३॥

दिनभागमें मनुष्यराशि ( मिथुन, तुला, कुंभ, कन्या और धनुका पूर्वार्द्ध ) बलवान् । रात्रिकालमें चतुष्पद अर्थात् मेष, वृष, सिंह, धनुराशिका शेषार्द्ध बलवान्, दोनो संध्यामें मनुष्यराशि और चतुष्पदराशिके अतिरिक्त सब राशि बलवान् होती हैं । इस स्थानमें एकपाद मात्र बल जानना चाहिये ॥ ४३ ॥

अंशबलाबलविवेकः ।

यस्तु यस्यांशपो राशेस्तद्बलादंशको बली । अबलस्तस्य दौर्बल्ये मध्यमे मध्यमः स्मृतः ॥ ४४ ॥

जिस राशिका जो ग्रह नवांशाधिपति है, उसके बलवान् होनेपर उस राशिका वह नवांश बलवान् होताहै और नवांशाधिपतिके दुर्बल होनेपर राशिका नवांश हीनबल और नवांशपतिके मध्यम होनेपर राशिका नवांश मध्यमबल होताहै ॥ ४४ ॥

राशीनां वश्यावश्यकथनम्।

द्विपदवशगाः सर्व्वे सिंहं विहाय चतुष्पदाः सलिलनिलया भक्ष्या वश्याः सरीसृपजातयः। मृगपपतिवशे तिष्ठन्त्येते सरीसृपराशयो ह्यकथितग्रहेष्वेवं ज्ञेयं जनव्यवहारतः ॥ ४५ ॥

सिंहराशिके अतिरिक्त समस्त चतुष्पद राशि द्विपदराशिके वशीभूत होतीहैं। जलदराशि अर्थात् मीन कर्क और मकरका परार्द्ध द्विपद ( मनुष्य ) राशिका भक्ष्य है, जलजराशि और सरीसृपराशि द्विपदराशिके वश्य हैं, सरीसृपके अतिरिक्त समस्त द्विपद और चतुष्पद राशि सिंह राशिके वशीभूत होतीहैं। जिन राशियोंका वश्यावश्य नहीं कहागया, उनके वश्यावश्यका विचार लोकव्यवहाराधीन जानना चाहिये, जिसप्रकार वृषके वशीभूत मेष इत्यादि ॥ ४५ ॥

राश्युदयकथनम्।

रामोऽगवेदैर्जलधिस्तु मैत्रैर्बाणो रसैः पंचखसागरैश्च। बाणः कुवेदैर्विषयोऽङ्कयुग्मैः क्रमोत्क्रमान्मेषतुलादिमानम् ॥ ४६ ॥

लग्नमान कथित होता है। राम ३ तीन, अग ७ सप्त, वेद ४ चार अर्थात् ( मेषलग्नका मान ३।४७ पल ) जलधि ४ चार, मैत्र १७ सत्रह ( वृषका मान ४। १७ पल ) बाण ५ पांच, रस ६ छै, अर्थात् ( मिथुनका मान ५। ६ पल) पञ्च ५ ख० शून्य सागर ४ चार ( कर्कका मान ५।४० पल) बाण ५ पंच, कु १ एक, वेद ४ चार अर्थात् (सिंहका मान

५ । ४१ पल ) विषय ५ पंच अंक ९ नौ युग्म २ दो ( कन्या लग्नका मान ५ । २९ पल ) तुला इत्यादिका मान इसके विपरीतभावसे जानना चाहिये । अर्थात् तुलाका मान ५ । २९ पल, वृश्चिकका मान ५ । ४१ पल, धनुका मान ५ । ४० पल, मकरका मान ५ । ६ पल, कुंभका मान ४।१७ पल, मीनका मान ३।४७ पल होताहै ॥ ४६ ॥

भावविवेकः ।

सामर्थ्यं तनु कल्प्यते समुदये वित्तं कुटुम्बं ततोऽ-
विक्रान्तिं सहजं तृतीयभवने योधं च संचिन्तयेत् ।
बंधुं वाह्यसुखालयान्यपि ततो धीमन्त्रपुत्रांस्ततः
षष्ठेऽथ क्षतविद्विषौ मदगृहे कामं स्त्रियं वर्त्म च॥४७॥
रन्ध्रायुर्मृतयोऽष्टमे गुरुतपोभाग्यानि चित्तं ततो
मानाज्ञास्पदकर्मणां दशमभे कुर्य्यात्ततश्चिन्तनम्॥
प्राप्त्यायावथ चिन्तयेद्भवगृहे रिःफे तु मन्त्रिव्ययौ
सौम्यस्वामियुतेक्षणैरुपचयश्चैषां क्षतिश्चान्यथा ४८॥

तन्वादि द्वादशभाव कथित होतेहैं । लग्नमें सामर्थ्य शरीर और आरोग्यताका विचार करना चाहिये । लग्नके दूसरे स्थानमें वित्त ( धन ) और कुटुम्बका विचार करै । लग्नके तीसरे स्थानमें विक्रम, सहोदर और सैन्यका विचार करना चाहिये । चौथे स्थानमें बन्धु, वाहन ( सवारी ) सुख और गृहकी चिन्ता करै । पांचवे स्थान में बुद्धि, मंत्रण और पुत्र इन सबका विचार करै । छठे स्थानमें क्षत और शत्रुकी चिन्ता करनी चाहिये । सातवें स्थानमें काम स्त्री और मार्ग इन सबका विचार करना

उचितहै। लग्नके आठवें स्थानमें रन्ध्र ( अपवाद ) परमायु और मरणका विचार करे । नवमस्थानमें गुरु ( पिता माता इत्यादि ) तपस्या, भाग्य और चित्त इन सबकी चिन्ता करनी चाहिये । दशवें स्थानमें मान, आज्ञा, स्थान और कर्मका विचार करना उचित है। ग्यारहवें स्थानमें प्राप्ति और आयकी चिन्ता करे। लग्नके बारहवें स्थानमें मंत्री और व्ययका विचार करना चाहिये। फलतः द्वादशभावका विचार करनेके समय जो जो भाव शुभग्रहयुक्त वा स्वामिग्रहयुक्त हो अथवा शुभग्रहके द्वारा वा स्वामिग्रहके द्वारा जो जो स्थान दृष्ट हो उस उस भावको शुभ जानना चाहिये। और इसके विपरीत अर्थात शुभग्रह वा स्वामिग्रहके द्वारा दृष्ट अथवा युक्त न होकर केवल पापग्रहके द्वारा दृष्ट अथवा पापग्रहयुक्त होनेपर उस उस भावकी हानि अर्थात अशुभ होताहै । किन्तु शुभाशुभके द्वारा दृष्ट वा शुभाशुभ युक्त होनेसे मिश्रफल होताहै ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

अरात्यादिभावापवादः ।

अरातिव्रणयोः षष्ठे चाष्टमे मृत्युरन्ध्रयोः ।
व्ययस्य द्वादशस्थाने वैपरीत्येन चिन्तनम् ॥ ४९ ॥

छठे स्थानमें शत्रु और व्रणकी चिन्ता, आठवे स्थानमें मृत्यु और रन्ध्रकी चिन्ता और बारहवें स्थानमें व्ययकी चिन्ता विपरीतभावसे करनी चाहिये अर्थात् छठे, आठवें और बारहवें स्थानमें शुभग्रह वा स्वामिग्रहके स्थित होनेपर वा उक्त समस्त स्थान शुभग्रह या स्वामिग्रहके द्वारा दृष्ट होनेपर छठे स्थानमें शत्रु और व्रणकी हानि, आठवें स्थानमें मृत्यु और अपवादकी हानि और बारहवे

स्थानमें व्ययकी हानि होगी और फिर इन सब स्थानोंमें पापग्रहके अवस्थित होनेपर वा पापग्रहोंके द्वारा उक्त सब स्थान दृष्ट होनेपर इन सबकी वृद्धि होगी ॥४९॥

उपचयविवेकः।

अथोपचयसंज्ञा स्यात्त्रिलाभरिपुकर्मणाम्।
न चेद्भवन्ति ते दृष्टाः पापस्वस्वामिशत्रुभिः ॥ ५० ॥

उपचयादिसंज्ञा कथित होतीहै। राशि वा लग्नके तीसरे, ग्यारहवें, छठे और दशवें स्थानका नाम उपचय है, किन्तु उक्ततृतीयादिस्थान यदि पापग्रह अथवा स्वीयस्वामिग्रह अथवा स्वामिग्रहके शत्रुग्रहद्वारा दृष्ट हो, तो इन सब स्थानोंकी उपचयसंज्ञा नहीं होगी॥५०॥

केन्द्रादिविवेकः।

केन्द्रंचतुष्टयं कन्टकञ्च लग्नास्तदशचतुर्थानां संज्ञा।
परतः पनफरमापोक्लिमसंज्ञितञ्च तत्परतः ॥ ५१ ॥

लग्न और लग्नसे चौथे, सातवें और दशवें स्थानका नाम केन्द्रचतुष्टय और कन्टक है। लग्नके दूसरे, पांचवें आठवें और ग्यारहवें स्थानका नाम पनफर है। लग्नके तीसरे, छठे, नवे और बारहवें इन सब स्थानोंका नाम आपोक्लिम है ॥ ५१ ॥

त्रिकोणादिविवेकः।

पञ्चमं नवमञ्चैव त्रिकोणं समुदाहृतम्।
चतुर्थमष्टमञ्चैव चतुरस्रं विदुर्बुधाः ॥ ५२ ॥

लग्नके पांचवे और नवम स्थानका नाम त्रिकोण तथा चौथे और आठवे स्थानको पण्डितोंने चतुरस्र कहाहै॥५२॥

लग्नाद्दशमादिस्थननामानि ।

खं मेषूरणमास्पदं मदनभे यामित्रमस्तद्युने द्यून-श्चाथ सुहृद्गृहे तु हिबुकं पातालमम्भोऽपि च । दुश्चिक्यं सहजे वदन्ति मुनयो रिःफं तथा द्वादशे षट्कोणं रिपुमन्दिरे नवमभे त्वाद्यं त्रिकोणं पुनः ॥५३॥
इति राशिनिर्णयोनाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

लग्नके दशवें स्थानका नाम ख अर्थात् आकाशपर्यायक शब्द और मेषूरण सातवे स्थानका नाम यामित्र, अस्त, द्युन और द्यून चौथे स्थानका नाम हिबुक, पाताल और जलपर्यायकशब्द तीसरे स्थानका नाम दुश्चिक्य, बारहवें स्थानका नाम रिःफ, छठे स्थानका नाम षट्कोण और नवें स्थानका नाम त्रिकोण होताहै ॥ ५३ ॥ इति श्री शुद्धिदीपका भाषाटीकायां राशिनिर्णयो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

---

## द्वितीयोऽध्यायः ।

कालनरस्थात्मादिव्यवस्था ग्रहाणां नृपत्वा दिव्यवस्था च ।

कालात्मा दिनकृन्मनस्तु हिमगुः सत्वं कुजो ज्ञो वचोजीवो ज्ञानसुखे सितश्च मदनो दुःखं दिनेशात्मजः । राजानौ रविशीतगू क्षितिसुतो नेता कुमारो बुधो जीवो दानवपूजितश्च सचिवः प्रेष्यः सहस्रांशुजः ॥ १ ॥

ग्रहनिर्णयाध्याय कहा जाता है । इस अध्यायमें ग्रहों का कालरूप और नृपादि संज्ञाका वर्णन कियाजायगा ।

कालपुरुषका सूर्य आत्मा, चन्द्र मन, मंगल सत्व अर्थात शौर्य, बुध वाक्य, बृहस्पति ज्ञान और सुख, शुक्र और शनि दुःख, रवि और चन्द्र यह दोनों ग्रह राजा, मंगल, सेनापति, बुध युवराज, बृहस्पति और शुक्र मंत्री तथा शनि ग्रह भृत्य हैं ॥ १ ॥

आत्मादिग्रहाणां नृपत्वादिग्रहाणां च बलाबलवशात् पुरुषस्यात्मादीनां बलाबलत्वनिर्णयो नृपत्वादिनिर्णयश्च ।

बलाबलाद्ग्रहाणां स्यादात्मादीनां बलाबलम् ।
नृपाद्याः प्रबलाः कुर्युः स्वं रूपं शनिरन्यथा ॥ २ ॥

पूर्व वचनोक्त आत्मादि ग्रहोंके और नृपादिग्रहोंके बलाबलद्वारा पुरुषकी आत्मादिका बलाबल निर्णय और नृपादि निर्णय होता है। ग्रहोंके बलवान् होनेपर आत्मादिभी बलवान् होता है और ग्रहोंके हीनबल होने पर आत्मादि दुर्बल होता है, किन्तु शनिग्रह इसके विपरीतफल देताहै। अर्थात् बलवान् होनेसे थोडा दुःख और हीनबलहोनेसे अधिक दुःख देताहै। जन्मसमयमें नृपादि (सूर्यादि) ग्रहके प्रबल होनेसे नृपत्वादि ( राज्यपद प्राप्ति को)प्रदान करते हैं और शनि इसके विपरीत फल देताहै अर्थात् ग्रह प्रबल होनेपर प्रेष्यत्व ( सेवकत्व ) नष्ट करता है और दुर्बल होनेपर प्रेष्यत्वकी वृद्धि करताहै॥२॥

ग्रहाणां वर्णकथनम् ।

रक्तश्यामो भास्करो गौर इन्दुर्नात्युच्चाङ्गो रक्तगौरश्च वक्रः । दूर्वाश्यामो ज्ञो गुरुर्गौरगात्रः श्यामः शुक्रो भास्करिः कृष्णदेहः ॥ ३ ॥

ग्रहोंका वर्ण कथित होताहै। सूर्य ग्रह रक्त श्याम वर्ण चन्द्र गौरवर्ण, मंगल अनुच्चाङ्ग ( ठिंगना ) और रक्तगौर वर्ण, बुध दूर्व्वादल श्यामवर्ण, वृहस्पति गौरवर्ण, शुक्र श्याम वर्ण और शनि ग्रह कृष्णवर्ण है ॥ ३ ॥

ग्रहाणां विशेषसंज्ञाकथनम्।

हेलिः सूर्य्यश्चन्द्रमाः शीतरश्मिर्हैमा विज्ज्ञो बोधन श्चेन्दुपुत्रः॥आरोवक्रः क्रूरदृक्चावनेयः कालो मन्दः सूर्य्यपुत्रोऽसितश्च ॥ ४ ॥ जीवोऽङ्गिराः सुरगुरुर्व्वचसां पतीज्यौ शुक्रो भृगुर्भृगुसुतः सित आस्कुजिच्च। राहुस्तमोऽगुरसुरश्च शिखी च केतुः पर्य्यायमन्यमुपलभ्य वदेच्च लोकात् ॥ ५ ॥

ग्रहोंकी संज्ञान्तर कथित होतीहै। यथा सूर्यका नामान्तर हेलि, चंद्रका अन्यनाम शीतरश्मि, बुधका नाम हेमन्, विद्, ज्ञ, इन्दुपुत्र, मंगलके नाम आर, वक्र, क्रूरदृक् और आवनेय, शनिका नाम काल, मन्द, सूर्यपुत्र और असित, बृहस्पतिका अन्यनाम जीव, अंगिरा, सुरगुरु, वचसां पति, और इज्य, शुक्रका नाम शुक्र, भृगु, भृगुसुत, सित और आस्कुजित्, राहुका नाम तम अगु और असुर केतुका नामान्तर शिखी, इनके अतिरिक्त ग्रहोंके और जो सब नाम हैं, वह लोकपरम्परासे जानने ॥ ४ ॥ ५ ॥

पापसौम्यविवेकः।

अर्द्धोनेन्द्वर्कसौराराः पापा ज्ञस्तैर्युतोऽपरे।
शुभाः पापौ तमःकेतू विष्णुधर्मोत्तरोदितौ ॥ ६ ॥

पापग्रह और शुभग्रहका निर्णय होताहै। अर्द्ध ऊन अर्थात् कृष्णाष्टमीके परसे शुक्लाष्टमीपर्यन्त चन्द्र और रवि, शनि और मंगल, एवं पापयुक्त बुध, पापग्रह। अपर अर्थात् पूर्णचन्द्र बृहस्पति और शुक्र तथा पाप अयुक्त बुध, यह सब शुभग्रह एवं राहु और केतु विष्णुधर्मोत्तर ग्रन्थके मतसे पापग्रह हैं ॥ ६ ॥

दिक्पतिविवेकः।

सूर्य्यः शुक्रः क्षमापुत्रः सैंहिकेयः शनिः शशी।
सौम्यस्त्रिदशमन्त्री च प्राच्यादिदिगधीश्वराः॥७॥

दिक्पति कथित होतेहैं। सूर्यग्रह पूर्वदिशाका अधिपति, शुक्र अग्निकोणका अधिपति, मंगल दक्षिणदिशाका अधिपति, राहु नैऋतकोणका अधिपति, शनि पश्चिम दिशाका अधिपति, चन्द्र वायुकोणका अधिपति, बुध उत्तरदिशाका अधिपति, और बृहस्पति ईशानकोणका अधिपति होताहै ॥ ७ ॥

जात्यधिपकथनम्।

ब्राह्मणे शुक्रवागीशौ क्षत्रिये भौमभास्करौ।
चन्द्रो वैश्ये बुधः शूद्रे पतिर्मन्दोऽन्त्यजे जने ॥ ८ ॥

जातिके अधिपति कथित होते हैं। शुक्र और बृहस्पति, ब्राह्मण जातिके अधिपति, मंगल और सूर्य क्षत्रियजातिके अधिपति, चन्द्र वैश्यजातिका अधिपति, बुध, शूद्रजातिका अधिपति और शनिग्रह अन्त्यजजाति का अधिपति है ॥ ८ ॥

वेदाधिपकथनम्।

ऋग्वेदाधिपतिर्जीवो यजुर्वेदाधिपः सितः।
सामवेदाधिपो भौमः शशिजोऽथर्ववेदराट् ॥ ९ ॥

वेदाधिपति कहते हैं । ऋग्वेदका अधिपति बृहस्पति, यजुर्वेदका अधिपति शुक्र, सामवेदका अधिपति मंगल और अथर्ववेदका अधिपति बुध ग्रह है ॥ ९ ॥

पुरुषाद्यधिपकथनम् ।

पुंसां सूर्य्यारवागीशा योषितां चन्द्रभार्गवौ ।
क्लीबानां बुधमन्दौ च पतयः परिकीर्त्तिताः ॥ १० ॥

पुरुषादि अधिपति कथित होतेहैं । सूर्य, मंगल और बृहस्पति, पुरुषके अधिपति, चन्द्र और शुक्र स्त्रीजातिके अधिपति तथा बुध और शनि क्लीबजातिके अधिपति हैं ॥ १० ॥

ग्रहाणां नैसर्गिकमित्रकथनम् ।

मित्राणि सूर्य्याच्छशिभौमजीवाः सूर्य्येन्दुजौ सूर्य-शशाङ्कजीवाः । आदित्यशुक्रौ रविचन्द्रभौमा बुधार्कजौ चन्द्रजभार्गवौ च ॥ ११ ॥

ग्रहोंके नैसर्गिक ( स्वाभाविक ) मित्र कथित होते हैं चन्द्र, मंगल और बृहस्पति रविके मित्र, सूर्य और बुध चन्द्रके मित्र, सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति मंगलके मित्र, रवि और शुक्र बुधके मित्र, रवि चन्द्र और मंगल बृहस्पतिके मित्र, बुध और शनि शुक्रके मित्र एवं बुध और शुक्र और शनिके मित्र हैं ॥ ११ ॥

सूर्यादिक्रमेण नैसर्गिकशत्रुकथनम् ।

सितासितौ चन्द्रमसो न कश्चिद्बुधः शशी सौम्य-सितौ रवीन्दू रवीन्दुभौमा रवितस्त्वमित्रा मित्रा-रिशेषश्च समः प्रदिष्टः ॥ १२ ॥

ग्रहोंके स्वाभाविक शत्रु कथित होते हैं। सूर्यका शत्रु शुक्र और शनि, चन्द्रका शत्रु नहीं है, मंगलका शत्रु बुध बुधका शत्रु चन्द्र, बृहस्पतिका शत्रु बुध और शुक्र, शुक्र का शत्रु रवि और चन्द्र एवं शनिका शत्रु रवि ,चन्द्र और मंगल होता है और मित्र तथा शत्रुके अतिरिक्त ग्रह समसंज्ञामें अभिहित होते हैं ॥ १२ ॥

तत्कालमित्रारिविवेकः।

हितसमरिपुसंज्ञा ये निसर्गे निरुक्ता अधिहितहित-मध्यास्तेऽपि तत्कालमित्रैः। रिपुसमसुहृदाख्या ये निसर्गे प्रदिष्टा ह्यधिरिपुरिपुमध्याः शत्रुभिश्चि-न्तनीयाः ॥ १३ ॥

ग्रहोंके अधिमित्रादि कथित होते हैं।ग्रहोंमें जो जिसका स्वाभाविक मित्र सम और शत्रु होता है वह तात्कालिक मित्र होनेपर क्रमशः अधिमित्र, मित्र, और सम होताहै अर्थात् स्वाभाविक मित्र, तात्कालिक मित्र होनेपर अधिमित्र स्वाभाविक सम तात्कालिक मित्र होनेपर मित्र और स्वाभाविक शत्रु तात्कालिक मित्र होनेसे सम होगा जो स्वाभाविक शत्रु सम और मित्र कहकर कथित है, वह तात्कालिक शत्रु होनेपर क्रमशः अधिशत्रु शत्रु और सम नामसे विख्यात होगा अर्थात् स्वाभाविक शत्रु तात्कालिक शत्रु होनेपर अधिशत्रु, स्वाभाविकसम तात्कालिकशत्रु होनेसे शत्रु और स्वाभाविकमित्र तात्कालिक शत्रु होनेसे सम होगा ॥ १३ ॥

ग्रहाणां दृष्टिस्थाननिर्णयः।

त्रिदशत्रिकोणचतुरस्रसप्तमानवलोकयन्ति चर-

णाभिवृद्धितः । रविजामरेज्यरुधिराः परे च ये क्रमशो भवन्ति किल वीक्षणेऽधिकाः ॥ १४ ॥

अब ग्रहोंकी दृष्टि कथित होतीहै । तीसरे और दशवें स्थानमें, नव और पांचवें घरमें चौथे और आठवें स्थानमें एवं सातवें घरमें एक एक पाद वृद्धि क्रमसे ग्रहोंकी दृष्टि रहती है। किन्तु तीसरे और दशवें स्थानमें शनिग्रहकी पूर्णदृष्टि नवे और पांचवें स्थानमें बृहस्पतिकी पूर्णदृष्टि, चौथे और आठवे स्थानमें मंगलकी पूर्णदृष्टि और सातवें स्थानमें रवि, चन्द्र, बुध, शुक्र, शनि बृहस्पति और मंगलकीभी संपूर्णदृष्टि होतीहै ॥ १४ ॥

ग्रहाणां स्थानबलम्।

स्वोच्चत्रिकोणहितभस्वगृहादिवर्गसंस्थाः समे शशिसितौ विषमेऽवशेषाः । पुंस्त्रीनपुंसकखगाभमुखान्त्यमध्यसंस्थाः शुभेक्षितयुताः स्थितिवीर्य्यवन्तः ॥ १५ ॥

त्रिकोण, मित्रगृह, अपने गृह, अपने होरा, अपने द्रेष्काण, अपने नवांश, अपने द्वादशांश, और अपने त्रिंशांशमें ग्रहोंके स्थित होनेपर स्थान बली होतेहैं। इसीप्रकार सम ( वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन ) राशिमें चन्द्र और शुक्र बलवान्, विषम ( मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुंभ ) राशिमें रवि, मंगल, बुध, बृहस्पति, और शनिग्रह बलवान् होताहैं और रवि, बृहस्पति तथा मंगल यह पुंग्रह राशिके प्रथम द्रेष्काणमें शुक्र और चन्द्र यह दोनों स्त्रीग्रह दूसरे द्रेष्काणमें बलवान् रहतेहैं शुभग्रहदृष्ट वा शुभग्रह युक्त ग्रहगणभी स्थानबली होतेहैं॥ १९ ॥

स्थानबलात् श्रेष्ठमध्याल्पत्वनिर्णयः ।

स्वोच्चे स्थिताः श्रेष्ठबला भवन्ति मूलत्रिकोणे स्वगृहे च मध्याः । इष्टेक्षिता मित्रगृहाश्रिता वा वीर्यं कनीयः समुपावहन्ति ॥ १६ ॥

स्थानबलके संबंधमें विशेष कथित होताहै। ग्रह उच्चराशिमें स्थित होनेसे पूर्ण बली, मूल त्रिकोणमें होनेसे त्रिपाद बली और स्वीय घर वा स्वीय होरादिमें स्थित होनेसे अर्द्धबली होतेहैं और ग्रहद्वारा दृष्ट वा मित्रादि वर्गस्थ होनेसे पादमात्र बली होतेहैं ॥ १६ ॥

ग्रहाणां दिग्बलम् ।

लग्ने सौम्यसुराचार्य्यौ कुजार्कौ दशमे तथा । द्यूने सौरिश्चतुर्थे तु सितेन्दू दिग्बलान्वितौ ॥ १७ ॥

दिग्बल वर्णित होताहै । लग्नमें बुध और बृहस्पति होनेसे पूर्वदिग्बली होतेहैं, क्योंकि राशिके उदयका नाम लग्न है और वह लग्न पूर्वदिशामें ही उदय होतीहै लग्नके दशम राशिमें स्थित मंगल और रवि दक्षिण दिग्बली हैं क्योंकि, लग्नकी दशमराशि दक्षिण दिशामें ही वास करतीहै लग्नके सप्तम राशिस्थशनि पश्चिम दिग्बली है क्योंकि सप्तम राशिमें अस्त होताहै और वह अस्त पश्चिम दिशामें ही होताहै, लग्नकी चतुर्थ राशिमें स्थित शुक्र और चन्द्र उत्तर दिग्बली हैं, क्योंकि लग्नका चतुर्थ राशि चक्रभ्रमण क्रमसे उत्तर दिशामें ही स्थित रहताहै ॥ १७ ॥

## ग्रहाणां चेष्टाबलम् ।

नरगुरुविहङ्गा राशिषट्के मृगादौ शनिरपि शशिभादौ चन्द्रजस्तूभयस्थः । विपुलविमलदेहा वक्रिगः सूर्ययुक्ताः शशियुतिजयभाजश्चेष्टया वीर्यवन्तः ॥ १८ ॥

चेष्टा बल कथित होताहै । नरग्रह ( पुंग्रह ) रवि, मंगल और बृहस्पति, स्त्रीग्रह चन्द्र और शुक्र यह मकरसे मिथुनपर्यन्त छै राशिमें बलवान् रहते हैं अर्थात् मकर राशिसे दश दश पल वृद्धि क्रमसे मिथुन राशिमें पूर्ण-बली होतेहैं, फिर कर्कसे दश दश पल हानिक्रमसे धनुराशिमें संपूर्ण बलहीन होतेहैं । शनि कर्क राशिसे दश दश पल हानि क्रमसे मिथुनराशिमें संपूर्ण बलहीन रहताहै।बुधग्रह मिथुन और धनुराशिमें अर्द्धबली होताहै, किन्तु दोनों राशिमें दश दश पल हानि और वृद्धि-द्वारा विचारना होगा मंगलादि ग्रहगण अतिशय, साफ रश्मियुक्त होनेसे एकपादमात्र बली होतेहैं, अनस्तगतवक्रीग्रह संपूर्ण बली होतेहैं । बुध और शुक्रग्रह वक्रीअवस्थामें पादस्थ होनेपर उनका बलीभाव होताहै, चंद्रयुक्त ग्रह और युद्धविजयी ग्रहगण एकपादमात्र बली होतेहैं, इसी समस्तबलको चेष्टाबल कहाजाताहै ॥ १८ ॥

ग्रहाणां पक्षो बलित्वं वत्सरमासाद्युकालहोराधिपानां पाठक्रमेण यथोत्तरमधिकबलित्वं ग्रहाणां दिनरात्रिबलित्वञ्च दर्शितम् ॥

सौम्याः सितेऽन्यतोऽन्ये वत्सरमासाह्नकालहोरे-
शाः। बलिनोऽह्न्यर्केज्यसिता द्युनिशं ज्ञो नक्त-
मिन्दुकुजसौराः ॥ १९ ॥

ग्रहोंका पक्षादिबल कथित होताहै शुभग्रह शुक्लपक्षमें बलवान् होतेहैं और कृष्णपक्षमें अशुभग्रह ( रवि, मंगल, शनि और पापयुक्त बुध) बलवान् होतेहैं। शुक्ल प्रतिपदा से प्रतितिथिमें चार चार पल वृद्धिक्रमसे पूर्णिमा तिथि में शुभग्रह सम्पूर्ण बली होते हैं और कृष्णप्रतिपदोसे प्रति तिथिमें चार चार पल ह्रासक्रमसे अमावास्यामें सम्पूर्ण बलहीन होतेहैं कृष्णप्रतिपदासे प्रतितिथिमें चार चार वृद्धि क्रमसे अमावस्यातिथिमें पापग्रह सम्पूर्ण बली होते हैं और शुक्लप्रतिपदोसे प्रतितिथिमें चार चार पल ह्रास क्रमसे पौर्णमासीमें सम्पूर्ण बलहीन होतेहैं। वत्सराधि- पति, मासाधिपति, दिवाधिपति, और कालहोराधि- पति बलवान् होताहै अर्थात वर्षाधिपति पादबली, मासा धिपति द्विपादबली, दिनाधिपति त्रिपादबली, और कालहोराधिपति सम्पूर्ण बली होता है। दिनमें रवि, बृहस्पति और शुक्र ग्रह बलवान् रहताहै, बुधग्रह दिन रात इन दोनोंमें समान बलवान् है। रात्रिमें चन्द्र मंगल और शनैश्चर सम्पूर्ण बलवान् होते हैं ॥ १९ ॥

चन्द्रबलम्।

(अत्र तु पापग्रहणे क्षीणेन्दोर्न ग्रहणम्। यथाहयवनेश्वरः)

मासे तु शुक्लप्रतिपक्षवृत्ते पूर्वे शशी मध्यबलो
दशाहे। श्रेष्ठो द्वितीयेऽल्पबलस्तृतीये सौम्यैस्तु
दृष्टो बलवान्सदैव ॥ २० ॥

चंद्र संबंधमें पक्षबल कथित होताहै यथा;--यवनेश्वर (यवनाचार्य) ने कहाहै कि, शुक्लपक्षकी प्रतिपदसे दशमीपर्यन्त दशदिन चन्द्र मध्यबली होताहै शुक्ल एकादशीसे कृष्णपंचमी पर्यन्त मध्य दशदिन चंद्र संपूर्ण बलवान् रहताहै। कृष्णछठसे अमावस्या पर्यन्त तृतीय दशदिन चन्द्र अल्पबली होताहै किन्तु शुभग्रह द्वारा चन्द्रग्रह दृष्ट होनेसे सदाही बलवान् रहताहै ॥ २० ॥

ग्रहाणां ऋतुबलम् ।

शनिशुक्रकुजेन्दुज्ञगुरुवः शिशिरादिषु ।
भवन्ति कालबलिनो ग्रीष्मे सूर्यस्तथैव च ॥ २१॥

ऋतुबल कथित होताहै शनि, शुक्र, मंगल, चन्द्र, बुध, और बृहस्पतिग्रह यह शिशिरादिछः ऋतुओंमें क्रमशः बलवान् होतेहैं अर्थात् शिशिर ऋतुमें शनि, वसन्तमें शुक्र, ग्रीष्ममें मंगल, वर्षामें चन्द्र, शरत्कालमें बुध और हेमन्तमें बृहस्पति बलवान् होताहै और ग्रीष्म कालमें सूर्य ग्रहभी बलवान् होताहै ॥ २१ ॥

ग्रहाणां दिनरात्र्यर्द्धभागबलं त्रिभागबलञ्च ।

बलिनः सौम्याऽसौम्याः क्रमेण पूर्वपरार्द्धयोर्द्युनिशोः।
ज्ञरविशनीन्दुसितारारुथंशेषु गुरुस्तु सर्वत्र ॥ २२ ॥

ग्रहोंके बलसम्बन्धमें दिनरात्रिभेदका विशेष कथित होताहै शुभग्रह दिन और रात्रिके पूर्वार्द्धमें बलवान् होते हैं और पापग्रह दिन एवं रात्रिके शेषार्द्धमें बलवान् होतेहैं। यह बल पादमात्र जानना चाहिये। दिन और रात्रिको तीन भागमें विभक्त करनेसे उसके एक एक भागमें क्रमशः बुध, रवि, शनि, एवं चन्द्र, शुक्र और

मंगल बलवान् होताहै अर्थात् दिनके प्रथमभागमें बुध, दूसरेभागमें रवि, और तीसरे भागमें शनि बलवान् होताहै। रात्रिके प्रथम, दूसरे भागमें शुक्र और तीसरे भागमें मंगल बलवान् होताहै। बृहस्पति दिन वा रात्रि सबसमयमें ही बलवान् रहताहै, यह सब पूर्ण बल ( षष्टिकला ) जानने चाहिये ॥ २२ ॥

ग्रहाणां प्रहरबलमर्द्धप्रहरबलञ्च ।

नित्यं याम्येऽर्कज्ञगुरुसितेन्द्वारशनिबुधा बलिनः।
द्युनिशोः षडिषुक्रमतो वारेशादर्द्धयामेषु ॥ २३ ॥

यामार्द्धादिबल कथित होताहै दिन रात्रिके आठ याममें क्रमशः रवि, बुध, बृहस्पति, शुक्र, चन्द्र, मंगल, शनि और बुध बलवान् होताहै यह याम ( प्रहर ) एक पादमात्र जानना चाहिये। दिनमान और रात्रिमानको आठ आठ भागमें विभक्त करनेसे उसके एक एक भागका नाम यामार्द्ध है। दिनमें वारधिपतिसे क्रमशः छै छै ग्रह और रात्रिकालमें वाराधिपतिसे क्रमशः पांच पांच ग्रह द्वितीय तृतीयादि यामार्द्धमें संपूर्ण बलवान् होतेहैं, यथा रविवारमें दिनमें प्रथमयामार्द्धमें रवि, दूसरे यामार्द्धमें शुक्र, तीसरे यामार्द्धमें बुध, चौथे यामार्द्धमें चन्द्र, पांचवें यामार्द्धमें शनि, छठे यामार्द्धमें बृहस्पति सातवें यामार्द्धमें मंगल, और आठवें यामार्द्धमें फिर रवि संपूर्ण बलवान् होताहै। रविवार रात्रिमें प्रथमयामार्द्धमें रवि, दूसरे यामार्द्धमें बृहस्पति, तीसरे यामार्द्धमें चन्द्र, चौथे यामार्द्धमें शुक्र, पांचवें यामार्द्धमें मंगल, छठे यामार्द्धमें शनि, सातवें यामार्द्धमें बुध और फिर आठवें यामार्द्धमें रवि संपूर्ण बली रहताहै। इसी-

प्रकार दिनरात्रिमें क्रमशः षष्ठ और पंचम गणनासे अन्यान्यवारमेंभी यामार्द्धके फलका विचार करना चाहिये ॥ २३ ॥

ग्रहाणां निसर्गबलकथनम्।

मन्दारसौम्यवाक्पतिसितचन्द्रार्का यथोत्तरं बलिनः।
नैसर्गिकबलमेतद्लग्नस्य स्वामिना चिन्त्यम् ॥ २४ ॥

ग्रह और लग्नका नैसर्गिक बल कथित होताहै शनि, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, चन्द्र और रवि यह सब ग्रह क्रमशः उत्तरोत्तर बलवान् होतेहैं। शनैश्चरग्रहका बल चतुस्त्रिंशत् विपलाधिक अष्ट पल। मंगलका बल इससे दूना १७।८ विपल, बुधका बल तिगुना २५।४२ विपल, बृहस्पतिका बल चौगुना ३४। १६ विपल, शुक्रका बल पचगुना ४२।५० विपल, चन्द्रका बल छे गुना ५१। २४ विपल, और रविका बल संपूर्ण है, ग्रहोंका यह नैसर्गिक बल सदाही विद्यमान रहताहै लग्नका बल लग्नके स्वामि ग्रहद्वारा विचारे अर्थात् लग्नाधिपति ग्रहका जो बल उक्त है, लग्नकाभी वही बल होगा ॥ २४ ॥

मांडव्योक्तगोचरः।

केतूपप्लवभौममन्दगतयःषट्दिक्त्रिसंस्थाः शुभा-
श्चन्द्रार्कावपि ते च तौ च दशमौ चन्द्रः पुनः सप्त-
मःाजीवः सप्तनवद्विपंचमगतो युग्मेषु सोमात्मजः
शुक्रः षड्दशसप्तवर्ज्जमितरे सर्वेऽप्युपान्ते शुभाः२५

अब मांडव्योक्तगोचर शुद्धि कथित होतीहै। जन्म राशिसे तीसरे छठे और दशमस्थ केतु, राहु मंगल शनि

और रवि ग्रह शुभफल दाता होतेहैं तीसरा, छठा, दशवां और सप्तमस्थ चन्द्र शुभफल देता है, बृहस्पति जन्मराशि से सातवीं, नवीं, दूसरी और पांचवीं राशिमें स्थित होनेसे शुभदायक होताहै, बुध दूसरे, चौथे, छठे, आठवें, दशवें और बारहवें स्थानमें होनेसे शुभफल देताहै, शुक्र छठे, दशवें और सातवेंके अतिरिक्त स्थानमें शुभप्रद होता है और जन्मराशिसे ग्यारहवें स्थानमें सभी ग्रह शुभफल देते हैं ॥ २५ ॥

वराहोक्तगोचरोऽयम् ।

सूर्यः षट्त्रिदशस्थितस्त्रिदशषट्सप्ताद्यगश्चन्द्रमा जीवः सप्तनवद्विपंचमगतो वक्रार्कजः षट्त्रिगौ । सौम्यःषड्द्विचतुर्दशाष्टमगतः सर्वेऽप्युपान्ते शुभाः शुक्रः षड्दश सप्तमर्क्षसहितः शार्दूलवत्त्रासकृत् ॥ २६ ॥

वराहोक्त गोचरशुद्धि कथित होतीहै । जन्मराशिसे छठे तीसरे और दशमस्थ रवि, शुक्र तीसरे, दशवें छठे, सातवें, और जन्मस्थ चन्द्र शुभ, सातवें, नौवें, दूसरे और पंचमस्थित बृहस्पति शुभ, मंगल और शनि छठे तीसरे और दशमस्थ शुभ, छठे, दूसरे, चौथे, दशवें, आठवें और (द्वादश) स्थित बुध शुभहै जन्मराशिसे एकादशस्थित सभी ग्रह शुभदायक होतेहैं एवं छठे दशवें और सप्तमास्थित शुक्र व्याघ्रकी समान त्रास उत्पन्न करातेहैं २६

गोचरशुभाशुभकालनिर्णयः ।

दिनकररुधिरौ प्रवेशकाले गुरुभृगुजौ भवनस्य मध्ययातौ । रविसुतशशिनौ विनिर्गमस्थौ शशितनयः फलदस्तु सर्वकालम् ॥ २७ ॥

ग्रहोंके गोचरसंम्बन्धमें शुभाशुभ वर्णित होताहै। रवि और मंगल ग्रह राशिमें प्रवेश कालमें अर्थात् राशि के प्रथम भागमें गोचरमें शुभाशुभ फल देतेहैं। बृहस्पति और शुक्र ग्रह राशिके मध्यभागमें अवस्थानकालमें गोचरमें शुभाशुभ फल प्रदान करते रहते हैं और शनि तथा चन्द्र विनिर्गम समयमें अर्थात् राशिके तीसरे भाग में शुभाशुभ दायक होतेहैं और बुध ग्रह सदाही फल देता रहताहै ॥ २७ ॥

गोचरापवादः ।

गोचरपीडायामपि राशिर्बलिभिः शुभग्रहैर्दृष्टः ।
पीडां न करोति तथा क्रूरैरेवं विपर्य्यासः ॥ २८॥

गोचरापवाद कथित होताहै। गोचरमें अनिष्टकर राशि यदि शुभग्रहके द्वारा दृष्ट हो तो अशुभफल प्रदान नहीं करती, किन्तु पापग्रहकर्तृक दृष्टगोचरस्थ पीडाकर राशि अधिक अशुभ प्रदान करती है, इसका तात्पर्य यही है कि गोचरस्थ पीडाकर राशि शुभ बलवान् ग्रहके द्वारा दृष्ट होनेपर इस राशिगत जो सब पीडा उक्त हुई है, वह नहीं होती गोचरमें राशि शुभ होनेपर यदि शुभग्रहके द्वारा दृष्ट हो, तो अधिक शुभ होगा, किन्तु गोचरमें शुभ होकरभी यदि पापग्रहके द्वारा दृष्ट हो, तो शुभ नहीं होगा, और गोचरस्थ पीडाकर राशि अशुभग्रहके द्वारा दृष्ट होनेपर अधिक अशुभ होगा ॥ २८ ॥

अथाष्टवर्गः—तत्र सूर्य्यस्य ।

स्वादिनकृच्छुभदः क्षितिपक्षसमुद्रनगादिकपंच-
गतो १। २। ४। ७। ८। ९। १०। ११ स्थ

विभावरीभर्त्तुरुर्यंगदशेशगतो ॥ ३ । ६ । १० । ११ ऽथ कुजादिनवत् १ । २ । ४ । ७ । ८ । ९ । १० । ११ अथ सोमसुतात्रिशरर्त्तुनवादिषु पातः ३ । ५ । ६ । ९ । १० । ११ । १२ अथ देवगुरोर्विषयर्त्तुनवेशगतो ५ । ६ । ९ । ११ ऽथ सुरारिगुरोः समयाचलभास्करयातः ६ । ७ । १२ अथ तीक्ष्णमरीचिसुतादपि भास्करवत् १ । २ । ४ । ७ । ८ । ९ । १० । ११ अथ लग्नगृहात्रिकृतांगदशादिषु यातः ३ । ४ । ६ । १० । ११ । १२ उदयाद्रिभुजंगविलासाभिधानमालादण्डकेनादित्याष्टवर्गः । रविरेखा ४८ ॥ २९ ॥

अष्टवर्ग कथित होताहै जन्मसमयमें राशिचक्र अर्थात् मनुष्यके जन्मसमयमें जो ग्रह जिसराशिमें अवस्थित हो, वह ग्रह उसी उसी राशिमें स्थापन पूर्वक जिस लग्नमें जन्म हो, उसकोभी 'लं' चिह्नसे यथा स्थानमें अंकित करै, फिर जिस जिस स्थानमें रेखापातका अंक है, उसी उसी स्थानमें रेखापात करके वक्ष्यमाण ( कहे हुए ) नियमानुसार शुभाशुभ विचारना चाहिये। रविका अष्टवर्ग करना हो तो रविग्रह जिस स्थानमें स्थित हो उसी स्थानसे पहिले, दूसरे, चौथे सातवें, आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें एक एक रेखापात करै और चन्द्र जिस स्थानमें है, उस घरसे तीसरे, छठे, दशवें और ग्यारहवें घरमें एक एक रेखापात करै । इसप्रकार मंगलसे पहिले, दूसरे, चौथे,

सातवें, आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें बुधसे तीसरे, पांचवें, छठे, नवें, दशवें, ग्यारहवें और बारहवें घरमें बृहस्पतिसे पांचवें, छठे, नवें और ग्यारहवें घरमें, शुक्रसे छठे सातवें और बारहवें घरमें, शनिसे पहिले, दूसरे, चौथे, सातवें, आठवें, नवें, दशवें, और ग्यारहवें घरमें और लग्नसे तीसरे, चौथे, छठे, सातवें, ग्यारहवें और बारहवें घरमें एक एक रेखा अंकित करनी चाहिये। रविके अष्टवर्गमें रेखा ४८ अडतालीस होंगी ॥ २९ ॥

चन्द्रस्य ।

चन्द्रः शुभोऽर्कात्त्रिकालाद्रिदन्तावलाशाशिवस्थः ३ । ६ । ७ । ८ । १० । ११ ततः स्वात्कुराम-र्त्वगाशाशिवस्थः । १ । ३ । ६ । ७ । १० । ११ क्ष्माजाद्विवह्नीषु षडंकादिगीशे २।३।५।६।९।१०।११। ऽथज्ञात्कुरामाब्धिबाणागदन्तावलाशाशिवस्थो १।३।४ । ५ । ७। ८ । १० । ११ ऽथजीवात् कुदृग्वेदशैलेभकाष्ठाशिवस्थो ॥ १ । २ । ४ । ७ । ८ १० । ११ ऽथशुक्रात् त्रिवेदेषुशैलग्रहाशाशिवस्थः । ३ । ४ । ५ । ७ । ९ । १० । ११ तीक्ष्णांशुदेहोद्भवाद्रामबाणर्तुशम्भुस्थितो ३ । ५।६ । ११ ऽथोदयात् हव्यवाहर्तुकाष्ठाशिवस्थः । ३ । ६।१० ११ कामबाणाभिधानमालादण्डकेन चन्द्राष्टवर्गः चन्द्ररेखा ४९ ॥ ३० ॥

चन्द्रके अष्टवर्गमें और रविसे तीसरे, छठे, सातवें, आठवें, दशवें, और ग्यारहवें घरमें, चन्द्रसे पहले, तीसरे

छठे, सातवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें मंगलसें दूसरें तीसरें पांचवें, छठे, नवें, दशवें और ग्यारहवें, घरमें, बुधसे पहले तीसरे, चौथे, पांचवें, सातवें, आठवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें, बृहस्पतिसे पहिले, दूसरे, चौथे, सातवें, आठवें दशवें और ग्यारहवें घरमें, शुक्रसे तीसरे चौथे, पांचवें, सातवें, नौमें, दशवेंऔर ग्यारहवें, घरमें शनिसे तीसरे पांचवें, छठे, और ग्यारहवें घरमें और लग्नसे तीसरे छठे दशवें और ग्यारहवें घरमें रेखापात करै । चन्द्रके अष्टवर्गमें ४९ उनचास रेखा पतित होंगी ॥ ३० ॥

कुजस्य ।

कुजोऽर्कात्त्रिभोवह्निबाणर्तुदिक्शम्भुगो ३।५।६। १०। ११ ऽथेन्दुतोरामकालेशग ३। ६। ११ स्ततः स्वात् कुदृग्वेदसप्ताष्टदिक्शम्भुगो १। २ ४। ७। ८। १०। ११ ऽनिशानाथपुत्राद् गुणे ष्वङ्गरुद्रोपयातः ३। ५। ६। ११ ततो जीवतः कालकाष्ठाशिवार्कोपयातो ६। १०। ११। १२ ऽथ देवारिपूज्याद्दनेहोगजेशार्कयातः ६। ८। ११। १२ ततः सूर्य्यपुत्रात् कुवेदागनागग्रहाशाभवस्थो १। ४। ७। ८। ९। १०। ११ऽथ लग्नात् कुरामाङ्ग दिक् शम्भुयातः १। ३। ६। १०। ११ सिंहलीलाभिधानमालादण्डकेन भौमाष्टवर्गः । कुजरेखा ३९ ॥ ३१ ॥

मंगलके अष्टवर्गमें रविसे तीसरें, पांचवें, छठें, दशवें, और ग्यारहवें घरमें, चन्द्रसे तीसरे, छठे और ग्यारहवें

घरमें, मंगलसे पहिले, दूसरे, चौथे, सातवें, आठवें, दशवें, और ग्यारहवें घरमें, बुधसे तीसरे, पांचवें, छठे, और ग्यारहवें घरमें बृहस्पतिसे छठे, दशवें, ग्यारहवें और बारहवें घरमें शुक्रसे छठे, आठवें, ग्यारहवें और बारहवें घरमें, शनिसे पहिले, चौथे, सातवें, आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें और लग्नसे पहिले, तीसरे छठे, दशवें, और ग्यारहवें घरमें रेखापात करै मंगलके अष्टवर्गमें ३९ उनतालीस रेखा पडेंगी ॥ ३१ ॥

बुधस्य ।

ज्ञः शुभोऽर्कात् शरर्त्तुगःशिवार्कगो ५ । ६ । ९ । ११ । १२ऽथ चन्द्रतो द्विवेदकालनागदिङ्महेश्वरेषु २ । ४ । ६ । ८ । १० । ११ भूमिजात् कुदृक्कृतांगनागगोदशेशगः १ । २ । ४ । ६ । ८ । ९ । १० । ११ ततः स्वतः कुवह्निपञ्चषण्णवादिषु १ । ३ । ५ । ६ । ९ । १० । ११ । १२ वाक्पतेरसाष्टशम्भुसूर्य्यगो ६।८।११।१२ऽशुक्रतः कुबाहुवह्निवेदपञ्चनागगोशिवेषु १।२।३।४।५।८।९।११ पङ्गुतः कुदृक्कृतागनागपञ्चकास्थितो १।२।४।७।८।९।१०।११।१२ऽथ लग्नतः क्षितिद्विवेदकालनागदिक्शिवेषु १।२।४।६।८।१०।११ अशोकमञ्जरीसंज्ञकमालादण्डकेन बुधाष्टवर्गः । बुधरेखा ५५ ॥ ३२ ॥

बुधके अष्टवर्गमें रविसे पांचवें, छठें, नवें, ग्यारहवें, और बारहवें घरमें, चंद्रसे दूसरे, चौथे, छठे, आठवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें, मंगलसे पहले, दूसरे चौथे, सातवें आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें बुधसे पहले, तीसरे, पांचवें, छठे, नवें, ग्यारहवें और बारहवें घरमें, वृहस्पतिसे छठे, आठवें, ग्यारहवें और बारहवें घरमें, शुक्रसे पहले दूसरे, तीसरे चौथे पांचवें, आठवें, नवें और ग्यारहवें घरमें शनिसे पहले, दूसरे, चौथे, सातवें, आठवें, दशवें, ग्यारहवें और बारहवें घरमें और लग्नसे पहिले, दूसरे चौथे, छठे, आठवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें रेखापात करे। बुधके अष्टवर्गमें ५५ रेखा पडेंगी ॥ ३२ ॥

गुरोः।

सुरराजगुरुः शुभदो रवितः कुयमानलवेदनगादिक-पञ्चगतः । १।२।३।४।५।७।८।९।१०।११ अथ विधोर्द्विशराचलगो शिवगो २।५।७।९।११ वसुधातनयात् कुयमाब्धिनगाष्टदशेशगतः॥ १।२।४।७।८।१०।११अथ बुधात् क्षितियुग्मकृतेषुरसग्रह दिग्गिरिशोपगतः १। २। ४।५। ६ ।९।१०।११ तदनुस्वतएकयमानलवारिधिपर्व्वतनागदशेशगतः १ । २ । ३ । ४ ।७।८। १० । ११ अथसिताद् यमपंचरसग्रहदिक्शिवगः २ । ५ । ६ । ९ । १० ११ रविनन्दनतो दहनेषुरसार्कगतः ३ । ५ । ६ । १२ अथ लग्नगृहात् कुयमाब्धिशरर्त्तुनगग्रहदिग्-

गिरिशोपगतः १ । २ । ४ । ५ । ६ । ७ । ९ । १० ११ कुसुमस्तबकाभिधानमालादंडकेन बृहस्पते-रष्टवर्गः । गुरुरेखा ५६ ॥ २३ ॥

बृहस्पतिके अष्टवर्गमें रविसे पहिले, दूसरे, तीसरे, चौथे, सातवें, आठवें, नवें, दशवें, और ग्यारहवें, घरमें चन्द्रसे दूसरे पांचवें, सातवें, नवें, और ग्यारहवें घरमें, मंगलसे पहिले दूसरे चौथे, सातवें, आठवे, दशवें, और ग्यारहवें, घरमें बुधसे पहिले, दूसरे, चौथे, पांचवें, छठे, नवें, दशवें, और ग्यारहवें, घरमें बृहस्पतिसे पहिले दूसरे तीसरे, चौथे, सातवें आठवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें शुक्रसे दूसरे, पांचवें, छठे, नवें, दशवें और, ग्यारहवें, घरमें शनिसे तीसरे, पांचवें, छठे, और बारहवें, घरमें और लग्नसे पहिले, दूसरे, चौथे, पांचवें, छठे, सातवें, नवें दशवें और ग्यारहवें घरमें रेखापात करै, बृहस्पतिके अष्ट वर्गमें ५६ रेखा पडेंगी ॥ २३ ॥

शुक्रस्य ।

भृगुः शुभो रवेर्गजेशसूर्यगो ८ । ११ । १२ ऽथ-न्द्रतः क्ष्मादिपंचकाष्टगोशिवार्कगः १।२।३।४।५ ८।९।११।१२ कुजात् । त्रिवेदकालगोशिवार्कगो ३ । ४ । ६ । ९ । ११ । १२ । बोधनात् त्रिबाण-कालनन्दरुद्रसंस्थितः ३ । ५ । ६ । ९ । ११ गुरोः शराष्टनन्ददिङ् महेशस्ततः ५ । ८ । ९ । १० । ११ स्वात्कुपंचकाष्टनन्ददिक्शिवोपगः १। २ । ३ । ४ । ५ । ८ । ९ । १० । ११ शनेर्गुणा-

ङ्घिपंचनागगोदशेशगो ३। ४।५।८।९। १०। ११ऽथ लग्नतः कुपंचकाष्ठगोशिवस्थितः १।२। ३।४।५।८।९। ११ अनंगशेखराभिधानमालादण्डकेन भार्गवस्याष्टवर्गः। शुक्ररेखा ५२॥ ३४॥

शुक्रके अष्टवर्गमें रविसें आठवें, ग्यारहवें और बारहवें घरमें, चन्द्रसे पहले दूसरे, तीसरे, चौथे, पांचवें, आठवें, नवें, ग्यारहवें और बारहवें घरमें, मंगलसे तीसरे, चौथे, छठे, नवें, ग्यारहवें और बारहवें घरमें, बुधसे तीसरे पांचवें, छठे, नवें और ग्यारहवें घरमें, बृहस्पतिसे पांचवें, आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें, शुक्रसे पहिले दूसरे, तीसरे, चौथे, पांचवें, आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें, शनिसे तीसरे चौथे, पांचवें, आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें, और लग्नसे पहिले, दूसरे, तीसरे, चौथे, पांचवें, आठवें, नवें और ग्यारहवें घरमें रेखापात करनी चाहिये शुक्रके अष्टवर्गमें ५२ रेखा पडेंगी॥ ३४॥

शनेः।

शुभः पङ्गुरकात् क्ष्मायमाम्भोधिशैलाष्टदिक्शम्भुगो १।२।४।७।८।१०।११ऽथेन्दुतो रामकालेशगः ३।६।११ क्ष्मासुताद्वह्निबाणर्तुकाष्ठाशिवार्कोपगः ३।५।६। १०।११।१२ अथ ज्ञतः कालदन्तावलाद्रिस्थितः ६।८।९।१०। ११। १२ जीवतोबाणकालेशमार्त्तण्डयातः ५।

६ । ११ । १२ ततो दैत्यपूज्यादनेहःशिवार्कोपयातः ६ । ११ । १२ ततः स्वात् रामेषुकालेशयातः ३ । ५ । ६ । ११ ततो लग्नतः क्ष्मागुणाम्भोधिषड्दिङ्महेशस्थितः १ । ३।४।६।१०।११ मत्तमार्त्तंगलीलाकराभिधानमालादण्डकेन शनैश्चराष्टवर्गः । शनिरेखा ३९ ॥ ३५ ॥

शनिके अष्टवर्गमें रविसे पहले, दूसरे, चौथे, सातवें, आठवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें, चन्द्रसे तीसरे, छठे और ग्यारहवें घरमें, मंगलसे तीसरे, पांचवें, छठे, दशवें, ग्यारहवें और बारहवें घरमें बुधसे छठे, आठवें नवें, दशवें ग्यारहवें और बारहवें घरमें, बृहस्पतिसे पांचवें, छठे, ग्यारहवें और बारहवें घरमें शुक्रसे छठे, ग्यारहवें और बारहवें घरमें शनिसे, तीसरे, पांचवें, छठे और ग्यारहवें घरमें और लग्नसे पहिले, तीसरे, चौथे, छठे, दशवें और ग्यारहवें घरमें रेखापात करै । शनिके अष्टवर्गमें ३९ उनतालिस रेखा पड़ेंगी ॥ ३५ ॥

## लग्नाष्टवर्गः ।

लग्नं शुभमर्कात् वह्निरसागदशेशगतं ३।६।७।१०। ११ अथेन्दुतो वह्निवेदाङ्काष्टदशेशगतं ३।४।६।८। १०।११ महीजाद्द वह्निनागदिक्शिवार्कोपगतं ३।८।१०।११।१२ निशानाथपुत्रात् । कुवह्नीषु शैलाष्टगं १।३।५।७।८ जीवतो द्विवह्नीषुशैलदशस्थितं २। ३।५।७।१० दैत्यपूज्याद् वह्निवेदगो

दशेशगतं ३।४।९।१०।११ अथशनेर्गुणाब्धिगो दिङ्महेश्वरेषु ३।४।९।१०।११ ततः स्वतस्त्रिकालदिक्शिवेषु ३।६।१०।११ लग्नरेखा ४० ॥ ३६ ॥

लग्नाष्टवर्गमें रविसे तीसरे, छठे, सातवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें, चन्द्रसे तीसरे, चौथे, छठे, आठवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें, मंगलसे तीसरे, आठवें, दशवें ग्यारहवें और बारहवें घरमें, बुधसे पहिले, तीसरे, पांचवें और आठवें घरमें बृहस्पतिसे दूसरे तीसरे पांचवें सातवें और दशवें घरमें शुक्रसे तीसरे, चौथे, नवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें, शनिसे तीसरे, चौथे, नवें, दशवें और ग्यारहवें घरमें और लग्नसे तीसरे छठे दशवें और ग्यारहवें घरमें रेखापात करनी चाहिये। लग्नाष्टवर्गमें ४० चालीसरेखा पड़ेंगी ॥ ३६ ॥

राहोरष्टवर्गः।

राहुःशुभोऽर्काद्भुजवह्निवेदर्त्तुग्रहगः२।३।४।६।९। चन्द्रात् कुरामवेदाङ्गगः ॥ १।३।४।६ कुजाद् वह्निवाणाङ्गरन्ध्रगः ३।५।६।९ बुधाच्छशिपक्षवह्निबाणरन्ध्रगः १।२।३।५।९।जीवात कव्यवाहवेदाङ्गरन्ध्रगतः ३।४।६।९ शुक्रात् पक्षवह्निबाणरन्ध्रगः २।३।५।९ सौरात् पक्षबाणर्तुगः २।५।६ स्वतःक्षितिवेद बाणर्तुरन्ध्रगः १। ४। ५। ६। ९ लग्नात् वेद रन्ध्रादिगः ४।९। १०। ११। १२ राहुरेखा २९ ॥ ३७ ॥

राहुके अष्टवर्गमें रविसे दूसरे, तीसरे, चौथे, छठे और नवें घरमें, चन्द्रसे पाहिले, तीसरे, चौथे, और छठे घरमें, मंगलसे तीसरे, पांचवें, छठे और नवें घरमें, बुधसे पाहिले दूसरे, तीसरे, पाचवें, और नवें घरमें, बृहस्पतिसे तीसरे चौथे, छठे, और नवें, घरमें, शुक्रसे दूसरे, तीसरे, पाचवें और नवें घरमें, शनिसे दूसरे, पाचवें और छठे घरमें, राहुसे पहिले, चौथे, पांचवें, छठे, और नवें घरमें और लग्नसे चौथे, नवें, दशवें, और ग्यारहवें, और बारहवें घरमें रेखापात करै, राहुके अष्टवर्गमें उनतालीस३९रेखा पड़ेंगी ॥ ३७ ॥

अत्रायं विशेषः। यस्मिन् कोष्ठे यावानंको भवति तावन्तं द्विगुणीकृत्य अष्टाभिर्हरेत्। शेषेऽङ्कअंकश्च युग्मएव भवति न्यूने बिन्दुः बिन्दवश्च युग्मएव इति राहोरष्टवर्गः ॥

यावतीयावतीरेखा ग्रहाणामष्टवर्गके। तावतीर्द्विगुणीकृत्य चाष्टाभिः परिशोधयेत् ॥ ३८ ॥ अष्टोपरि भवेद्रेखा अष्टहीने च बिन्दवः। अष्टाभिश्च समो यत्र समस्तत्र निगद्यते ॥ ३९ ॥

जिस राशिमें जितनी रेखा पड़ें, उन सब रेखाओंको दूना करकै आठसे घटानेपर अवशिष्टाङ्क युग्म होगा और रेखाको दूना करनेपर यदि आठसे कमहो तो युग्मबिंदु होताहै, इसप्रकारसे राहुका अष्टवर्ग करना चाहिये लग्नाष्टवर्ग और राहुका अष्टवर्ग किसी किसी पुस्तकमें है इसकारण इसग्रन्थमेंभी दियागया। गणनाक्रम कथित होताहै पूर्वोक्त प्रणालीसे रेखा पातकरनेपर जिसघरमें जितनी रेखा

पडें, इनको दूना करके आठसे घटाना चाहिये। आठसे घटानेपर यदि अवशिष्ट अंक रहै उसको उसीघरमें रक्खे। दूना करनेपर यदि आठसे कम हों तो जितने बिन्दु हों, आठ होसकतेहैं, उसीपरिमाणसे बिन्दु उस उस घरमें अंकित करै और दूना करनेसे यदि आठ हों तो उसी घरमें सम लिखना चाहिये ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

पुस्तकान्तरे।

शून्ये तु बिन्दवश्चाष्टौ रेखैके रसबिन्दवः।
चत्वारो बिन्दवो युग्मे द्विबिन्दू रामरेखके ॥ १ ॥
समो रेखाचतुर्थे तु पंचमे नेत्ररेखके।
षड्रेखासु चतूरेखा सप्तमे रसरेखिका ॥ २ ॥
श्रीरानन्दन्तथा श्रेयो भोगो राज्यप्रदस्तथा।
द्व्यादिद्विगुणरेखानां फलमेतदनुक्रमात् ॥ ३ ॥
मलिनोऽथ विपद्धानिर्योगो मृत्युप्रदस्तथा।
द्व्यादिद्विगुणबिन्दूनां फलमेतदनुक्रमात् ॥ ४ ॥
इति निगदितमिष्टं नेष्टमन्यद्विशेषादधिकफलविपाका जन्मभात्तत्र दद्युः। उपचयगृहमित्रस्वोच्चगाः पुष्टमिष्टं त्वपचयगृहनीचारातिभेनेष्टसम्पत् ॥ ४० ॥
शुभा रेखाः समाख्याता अशुभा विन्दवः स्मृताः।
यत्र रेखा न बिन्दुश्च तत्समं परिकीर्त्तितम् ॥ ४१ ॥

जिसघरमें रेखापात न हो, उस स्थानमें आठ शून्य लिखे। इसप्रकार जिसघरमें रेखा पडे, उस स्थानमें छै

१ क्रमाष्टवर्गात् इत्यंतरे टिप्पणिर्नास्ति।

शून्य, जिसस्थानमें दो रेखा पडे, उसस्थानमें चार शून्य और जिस स्थानमें तीन रेखा पडें, उस घरमें दो शून्यलिखे और जिस घरमें चार रेखा पडें, उस स्थानमें सम, जिस स्थानमें पांच रेखा पडे, उस घरमें दो अंक, जिस घरमें छटा रेखा पडे, उसस्थानमें चार अंक और जिस स्थानमें सात रेखा पडे, उस घरमें छटा संख्यक अंक लिखे। इत्यादि संख्याका फल इस प्रकार देखे। यथा दो रेखा (अंक) में श्रीलाभ, चार रेखामें आनन्द अनुभव, छै रेखामें मंगल, और आठ रेखा होनेसे राज्यप्राप्ति होती है। पूर्वोक्त "स्वातदिनकृत् शुभदः" इत्यादि श्लोकमें जिस जिस स्थानमें इष्ट (शुभ) फल कथित हुआ है, उसी उसी स्थानमें रेखा प्रदान करै और जिस स्थानमें कुछभी उक्त नहीं हुआ है उस स्थानसे अनिष्ट सूचक बिन्दुप्रदान करना चाहिये। उक्तप्रकारसे जन्मसमयकी ग्रहाक्रान्त राशिसे रेखापात करै। रेखापात करके शुभाशुभ फल शोधन पूर्वक अधिक होनेपर सञ्चारवशतः समस्त ग्रह उस राशिमें शुभ फल देते हैं। लग्न वा चन्द्रसे उपचय अर्थात् तृतीय, एकादश षष्ठ और दशमगत वा स्व-गृहस्थित अथवा मित्रगृहगत या तुङ्ग-राशि-स्थित ग्रह पूर्वोक्तप्रकारसे शुभ अर्थात् रेखागत होनेपर अधिक शुभफल प्रदान करते हैं और लग्न वा चन्द्रसे अनुपचय अर्थात् पूर्वोक्त उपचय-भिन्न स्थानगत वा नीचस्थ अथवा शत्रुगृहस्थित होकर रेखागत होनेसे अधिक शुभ फल प्रदान न करके यत्किंचित शुभफल दाता होंगे। तृतीय, एकादश, षष्ठ और दशमके अतिरिक्त अन्य-स्थानगत वा नीचस्थ अथवा शत्रुगृहगत होकर

ग्रहगण बिन्दुप्राप्त होनेपर अत्यन्त अशुभ फल दाता होतेहैं–एवं तृतीय, एकादश, षष्ठ और दशम स्थानगत वा स्वगृहगत अथवा मित्र गृहस्थित या उच्च राशिमें स्थित ग्रहगण बिन्दुगत होनेसे विशेष अशुभ फल देकर यत्किंचित शुभ फल देते हैं। अष्टवर्गके जिस घरमें रेखापात हो, वह स्थान शुभ है। बिन्दु पडनेसे अशुभ होना और जिस स्थानमें रेखा वा बिन्दु कुछ न हो उसको सम कहा जाताहै, उस स्थानमेंभी अशुभ नहीं होगा ॥ ४० ॥ ४१ ॥

इत्यष्टवर्गः।

अथ चन्द्रबलाद् ग्रहशुद्धिः।

याहशेन शशांकेन ग्रहः सञ्चरते नृणाम्।
ताहशं फलमाप्नोति शुभं वा यदि वाशुभम् ॥ ४२ ॥

चन्द्रशुद्धिद्वारा ग्रहोंका गोचर और अष्टवर्गका अपवाद कथित होताहै। चंद्रवर्जित जिस किसी ग्रहके संचार कालमें यदि मनुष्यकी चन्द्रशुद्धि हो तो ग्रहगण गोचरादिमें अशुभ होकरभी अशुभफलके दाता नहीं होते और गोचरमें शुभ होनेपर चन्द्रशुद्धिके कारण अधिकशुभ फल देते हैं अन्यग्रहोंके संचारकालमें यदि चन्द्र अशुभ हो तो गोचरमें शुभ होनेपरभी ग्रहगण शुभ फल नहीं देते। और संचार कालमें चन्द्र शुद्धि न होनेसे यदि गोचरमें अशुभ हों तो अधिक अशुभ फल देतेहैं ॥ ४२ ॥

ग्रहाणां त्रिविधशान्तिकथनम्।

प्रयोज्यसौषधिस्नानं ग्रहविप्रसुरार्चनम्।
ग्रहानुद्दिश्यहोमो वा ग्रहाणां प्रीतिमिच्छता ॥ ४३ ॥

ग्रहगणोंके गोचरादिमें अशुद्ध होनेपर उनका प्रतीकार कथित होताहै। यदि ग्रहोंके प्रसन्न होनेकी इच्छा करै तो सिद्धार्थ ( श्वेत सरसों ) लोध्र इत्यादि वक्ष्यमाणोक्त औषधिसे स्नान, रक्तपुष्पादि द्वारा ग्रहपूजा दक्षिणा और भोजनादि द्वारा ब्राह्मणार्च्चन, विशेषकर दैवज्ञ ब्राह्मणकी अर्चना गणपति और नारायणादि देवताकी गंध पुष्प और नैवेद्यादि द्वारा पूजा अथवा आककी समिधद्वारा ग्रहोंके उद्देशसे होम करै ॥ ४३ ॥

ग्रहस्नानम् ।

सिद्धार्थलोध्ररजनीद्वयमुस्तधान्यलामज्जकं सफलिनी सवचा च मांसी । स्नानं कुरु ग्रहगणप्रशमाय नित्यं सर्व्वे रविप्रभृतयः सुमुखी भवन्ति४४॥

ग्रहोंकी प्रीतिके निमित्त औषधि स्नान कथित होताहै सिद्धार्थ ( श्वेत सरसों ) लोध्र, हलदी, दारुहलदी, मोथा धनियाँ, वीरणमूल ( औषधिविशेष ) प्रियंगु, वच और जटामासी ( वालछड ) इन समस्त द्रव्योंसे स्नान करने पर रवि इत्यादि सब ग्रह सन्तुष्ट होतेहैं ॥ ४४ ॥

ग्रहपूजा ।

रक्तैः पुष्पैर्गन्धैस्ताम्रैः कनकवृषसुरभिकुसुमैर्दिवाकरभूसुतौ भक्त्या पूज्या न्विदुर्धैन्वासितकुसुमसुरभिमधुरैः सितश्च मदप्रदैः ॥ कृष्णैर्द्रव्यैः सौरिः सौम्यो मणिरजतकुवलकुसुमैर्गुरुस्तु परिपीतकैः प्रीतैः पीडा न स्यादुच्चात् यदि पतति विशति वा भुजंगविजृम्भितम् ॥ ४५ ॥

ग्रहपूजा कथित होती है, रवि और मंगल ग्रहके कुपित होनेपर रक्तवर्ण पुष्प और चंदनद्वारा ताम्रमयी प्रतिमाकी पूजा करै, आभरणभी ताम्रमय दान करै, सूर्यकी पूजामें कनक और बैलकी दक्षिणा देवे, मंगलकी पूजामें ताम्र कनक और मूँगेकी दक्षिणा देनी चाहिये। सुरभिकुसुम अर्थात् सर्ववर्ण सुगंधित पुष्पद्वाराभी इसकी पूजा करी जातीहै। चन्द्रकी पूजामें गायकी दक्षिणा देवे और शुक्लपुष्प, सुगन्धिद्रव्य तथा मधुर द्रव्यद्वारा चन्द्रकी पूजा करनी चाहिये चन्द्रकीही समान शुक्रग्रहकीभी शुक्लपुष्प सुगंधिद्रव्य मधुर और मत्तता जनकद्रव्यसे पूजा करनी उचितहै दक्षिणामें अलंकृता तरुण स्त्रीदे। शनिग्रहकी कृष्णवर्णपुष्प और कृष्णद्रव्य द्वारा लोहेकी प्रतिमामें पूजा करनी चाहिये दक्षिणा काले गहनोंसे भूषित वृद्धदासी, बुधग्रहकी दक्षिणा मणि और चांदी है। और बकुलपुष्पसे इसकी पूजा करनी होतीहै। वृहस्पतिकी स्वर्णमयी प्रतिमा बनाकर पीतद्रव्य और पीतवर्ण गन्ध पुष्पद्वारा पूजा पूर्वक सुवर्णयुक्त अश्वदाक्षिणा दे ग्रहोंकी उक्तप्रकारसे पूजा करनेपर वह प्रसन्न होकर पीडा नहीं देते। यही क्या ग्रहोंको पूजाद्वारा संतुष्ट करनेपर मनुष्य ऊंचे स्थानसे गिरकर वा सर्पके विस्तीर्ण मुखमें प्रवेश करनेपरभी किसी प्रकारसे पीडित नहीं होता॥ ४५॥

नैवेद्यविधिः।

गुडभक्तसघृतपायसहविष्यसक्षीरदधिघृतान्नानि ।
तिलपिष्टमाममांसं चित्रौदनमर्कतो दद्यात् ॥४६॥

ग्रहोंका विशेष नैवेद्य कथित होताहै । रविका नैवेद्य गुड-मिश्रित अन्न, चन्द्रका सघृत परमान्न, मंगलका हविष्यान्न, बुधका सदुग्धान्न, बृहस्पतिका दही और अन्न शुक्रका सघृतान्न, शनिका तिलपिष्टक, राहुका आममांस( कच्चा-मांस ) और केतुका नैवेद्य चित्रौदन ( चित्रान्न ) कहा-गया है ॥ ४६ ॥

चित्रौदनकथनम् ।

अजाक्षीरेण संमिश्रा यवाश्च तिलतण्डुलाः ।
अजकर्णस्य रक्तेन रक्ताश्चित्रान्नसंज्ञिताः ॥ ४७ ॥

चित्रौदन कथित होताहै । अजाक्षीरमिश्रित यव तण्डुल और तिल तण्डुल छाग कर्ण रक्तसे रंजित होने-पर उनको चित्रान्न कहा जाताहै ॥ ४७ ॥

शान्त्यर्थं औषधिधारणम् ।

मूलं धार्यं त्रिशूल्याः सवितरि विगुणे क्षीरिकामूल-मिन्दौ जिह्वाहेर्भूमिपुत्रे रजनिकरसुते वृद्धदारस्य मूलम् । भाङ्गर्चाजीवेऽथ शुक्रे भवति शुभकरं सिंह-पुच्छस्य मूलं वाट्यालं चार्कपुत्रे तमसि मलयजं केतुदोषेऽश्वगन्धम् ॥ ४८ ॥

ग्रहदोष शांतिके अर्थ बाहुमें औषधिका धारण करना कथित होता है । रविग्रहके विरुद्ध होनेपर बाहुमूलमें बिल्वमूल धारण करे । इसीप्रकार चन्द्रमाके विरुद्ध होनेपर क्षीरीवृक्षकी जड, मंगलके विरुद्ध होनेपर नाग-जिह्वा ( नागदौन ) की जड, बुधके विरुद्ध होनेपर वृद्ध

दारुमूल ( बृहच्छत्रक ) बृहस्पतिके विरुद्ध होनेपर भार्ङ्गी अर्थात् ब्राह्मणयष्टिकी जड, शुक्रके विरुद्ध होनेपर सिंहपुच्छ की जड, शनिके विरुद्ध होनेपर वाट्यालकी जड, राहुके विरुद्ध होनेपर चन्दन और केतुग्रहके विरुद्ध होनेपर अश्वगन्धा ( असगन्ध ) की जड धारण करे ॥ ४८ ॥

धातुद्रव्यधारणम्।

सूर्य्यादिदोपशान्त्यै धार्य्याणि भुजेन ताम्रशङ्खौ च।
विद्रुमकाञ्चनमुक्तारजतत्रपुलोहराजपट्टानि ॥ ४९ ॥

ग्रहके विरुद्ध होनेपर धारण करनेका धातु द्रव्य कथित होताहै। यथा–सूर्यग्रहके विरुद्ध होनेपर बाहुमूलमें ताम्र धारण करे इसीप्रकार चन्द्रके विरुद्धमें शंख, मंगलके विरुद्ध होनेपर प्रवाल ( मूंगा ) बुधके विरुद्ध होनेपर कांचन, बृहस्पतिके विरुद्ध होनेपर मोती, शुक्रके विरुद्ध होनेपर चांदी, शनिके विरुद्ध होनेपर सीसा, राहुके विरुद्ध होनेपर लोहा, और केतुके विरुद्ध होनेपर बाहुमूलमें राजपट्ट ( राईके आकारकी मणिविशेष ) धारण करना चाहिये ॥ ४९ ॥

माणिक्यं विगुणे सूर्य्ये वैडूर्य्यं शशलाञ्छने।
प्रवालं भूमिपुत्रे च पद्मरागं शशाङ्कजे ॥ ५० ॥
गुरौ मुक्तां भृगौ वज्रमिन्द्रनीलं शनैश्चरे। राहौ
गोमेदकं धार्य्यं केतौ मरकतं तथा ॥ ५१ ॥

ग्रहोंके विरुद्धमें रत्नधारण कथित होताहै, यथा सूर्यके विरुद्धमें माणिक्य, चन्द्रके विरुद्धमें वैदूर्यमणि, मंगलके

विरुद्धमें प्रवाल ( मूंगा ) बुधके विरुद्धमें पद्मराग, बृहस्पतिके विरुद्धमें मोती, शुक्रके विरुद्धमे हीरक, शनिके विरुद्धमें इन्द्रनीलमणि, राहुके विरुद्धमें गोमेदकमणि और केतुग्रहके विरुद्ध होनेपर बाहुमूलमें मरकतमणि धारण करै ॥ ५० ॥ ५१ ॥

ग्रहसमिधः।

अर्कः पलाशः खादिरस्त्वपामार्गोऽथ पिप्पलः।
उदुम्बरशमीदूर्व्वाकुशाश्च समिधः क्रमात् ॥ ५२ ॥

ग्रहोंकी होमसमिध कथित होतीहै रविकी होमसमिध अर्क ( आक ) चन्द्रकी पलाश ( ढाक ) मंगलकी खादिर ( खैर ) बुधकी अपामार्ग ( चिरचिरा ) बृहस्पतिकी अश्वत्थ ( पीपल ) शुक्रकी उदुम्बर ( गूलर ) शनिकी शमी राहुकी दूर्वा और केतुकी होमसमिध, कुश उक्त हुईहै ॥ ५२ ॥

ग्रहहोमः।

एकैकस्याप्यष्टशतमष्टाविंशतिरेव वा ॥
होतव्या मधुसर्पिर्भ्यां सहस्रं चाष्टसंयुतम् ॥ ५३ ॥

होमसंख्या कथित होतीहै एक एक ग्रहकी होमसमिध अष्टोत्तरशत अष्टाविंशति वा अष्टोत्तरसहस्र ग्रहण करके मधु और घृतसे होम करै ॥ ५३ ॥

दक्षिणाविवेकः।

धेनुः शंखस्तथा नड्वान् हेम वासो हयस्तथा ॥
कृष्णा गौरायसं छाग एता वै ग्रहदक्षिणाः ॥ ५४ ॥

होमदक्षिणा कथित होतीहैं, रविके होममें धेनु, चन्द्रके होममें शंख, मंगलके होममें वृष, बुधके होममें

सुवर्ण, बृहस्पतिके होममें वस्त्र, शुक्रके होममें अश्व, शनिके होममें काली गाय, राहुके होममें लोहा और केतुकी होमदक्षिणामें छाग देना चाहिये ॥ ५४ ॥ इति महीन्तायनीय पंडित श्रीश्रीनिवासविरचितायां शुद्धिदीपिका भाषाटीकायां ग्रहनिर्णयो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

---

## तृतीयोऽध्यायः।

### चन्द्रताराशुद्धिप्रशंसा।

सर्वकर्मण्युपादेया विशुद्धिश्चन्द्रतारयोः।
तच्छुद्धावेव सर्वेषां ग्रहाणां फलदातृता ॥ १ ॥

अब चन्द्रशुद्धि और ताराशुद्धिकी प्रशंसा कथित होतीहै संपूर्ण कर्मोंमेंही चन्द्रताराकी शुद्धिका उत्कर्ष अभिहित हुआहै, क्योंकि चन्द्रताराकी शुद्धि होनेसेही ग्रहगण शुभ फल देते रहते हैं ॥ १ ॥

### चन्द्रशुद्धिः।

सप्तमोपचयाद्यस्थश्चन्द्रः सर्वत्र शोभनः।
शुक्लपक्षे द्वितीयस्तु पंचमो नवमस्तथा ॥ २ ॥

चन्द्रशुद्धि कथित होतीहै। मनुष्यका जन्मचन्द्र और जन्मचन्द्रकी अपेक्षा सातवां, तीसरा, ग्यारहवां, छठा और दशवां चन्द्र सदाही शुभ फल देताहै, शुक्लपक्षमें दूसरा पांचवां अथवा नवां चन्द्र भी शुभ होताहै ॥ २ ॥

### चन्द्रस्य वामवेधेन शुद्धिः।

सितशनिकुजजीवार्कास्त इन्दुर्नराणां
व्ययसुखनवमस्थोऽपीष्टदाताथ तेषाम्।

खसुतनिधनगश्चेन्मृत्युपुत्रार्थगोऽपि प्रथित
( प्रचुर ) शुभफलं स्याद्वामवेधेन शुद्धिः ॥ ३ ॥

चंद्रकी वामवेध शुद्धि कथित होती है, मनुष्यके बारहवें, चौथे और शुक्लपक्षमें नवमस्थ विरुद्धचन्द्र यदि शुक्र, शनि, मंगल, बृहस्पति वा रविके सातवें स्थानमें स्थितहों तो वामवेधमें शुद्धहोकर शुभफल देता है। इसीप्रकार मनुष्यके अष्टमस्थ विरुद्धचन्द्र यदि शुक्र, शनि, मंगल, बृहस्पति वा रविके दशवें स्थानमें हों तो शुभ होता है और कृष्णपक्षमें पंचमस्थविरुद्ध चन्द्र यदि शुक्र शनि, मंगल बृहस्पति वा रविके पांचवें स्थानमें स्थित हो तो शुभ होताहै और कृष्णपक्षमें द्वितीयस्थ विरुद्ध चन्द्र यदि शुक्र, शनि, मंगल, बृहस्पति वा रविके आठवें स्थानमें स्थित हो तो वामवेधमें शुद्ध होकर प्रचुर शुभ फल देताहै ॥ ३ ॥

चन्द्रस्य विशेषशुद्धिः।

उपचयकरयुक्तःसव्यगःशुक्लपक्षे शुभमभिलपमाणः-
सौम्यमध्यास्थितो वा ॥ सखिवशिग्रहयुक्तः कार-
कर्क्षेऽपि चेन्दुर्जयधनसुखदाता तत्प्रहर्त्तान्य-
थातः ॥ ४ ॥

चन्द्रके सम्बन्धमें विशेष शुद्धि कथित होतीहै गोचरमें हो, वा दशामें हो. जो सब ग्रह उपचयकर अर्थात् वृद्धिकर ( शुभकर ) कहके अभिहित हुए हैं उन सब ग्रहों के सहित यदि अशुभकर चन्द्रयुक्त हो तो जय धन और सुख देता है, उत्तरचारी चन्द्रमा शुक्लपक्षमें और शुभफल देनेवाले गृहमें गमनोन्मुख चन्द्रभी श्रेष्ठ होता है।

शुभग्रहोंके मध्यस्थित चन्द्र और मित्र गृहावस्थितचन्द्र शुभदायक होता है, जन्मकालीन चन्द्रसे दशमस्थग्रहको वशी कहाजाता है चन्द्रमा यदि उसी राशिग्रहके घरमें स्थित हो तो शुभ होगा और स्वगृहस्थित तुङ्गस्थ मूल त्रिकोणावस्थित और परस्परकेन्द्रस्थग्रहोंको कारकग्रह कहाजाताहै। इन कारकसंज्ञकग्रहोंके घरमें चन्द्रके स्थित होनेपर जय, धन और सुखदाता होताहै अर्थात् अशुभ होनेसे भी शुभफल देताहै। अनुपचय अर्थात् गोचरमें हो वा दशामें हो अशुभकारकग्रहके संग चन्द्रके मिलित होनेपर जय धन और सुखका नाशक होताहै और दक्षिण चन्द्रमा कृष्णपक्षमें एवं पापग्रहाभिलाषी, पापग्रहके मध्यस्थित और शत्रुग्रहस्थित चन्द्रभी जय, धन और सुखका नाशक होताहै ॥ ४ ॥

पक्षादौ चन्द्रशुद्धिकथनम्।

सितपक्षादौ शुभे चन्द्रे शुभं पक्षमशुभमशुभे च।
कृष्णे गोचरशुभदो न शुभः पक्षः शुभोऽतोऽन्यः॥५॥

चन्द्रशुद्धिवशतः पक्षका शुभाशुभ कथित होताहै। शुक्लपक्ष वा तिथिमें यदि चन्द्र शुभद हो तो वही पक्ष शुभ होताहै और शुक्लपक्ष वा तिथिमें चंद्रके अशुभ होनेपर वह पक्ष अशुभ होता है। इसीप्रकार कृष्णपक्ष वा तिथिमें चन्द्रके शुभद होनेपर वह पक्ष अशुभ और कृष्णमें चन्द्रके अशुभ होनेपर वह पक्ष शुभद होगा ॥ ५ ॥

चन्द्रदोषशान्तये स्नानम्।

उशीरं च शिरीषं च चन्दनं पद्मकं तथा।
शंखे न्यस्तमिदं स्नानं चंद्रदोषोपशांतये ॥ ६ ॥

चन्द्रदोषकी शान्तिके लिये स्नान कथित होताहै। उशीर अर्थात् सफेदखसकी जड, सिरस, चन्दन और पद्मकाष्ठ ( पद्माख ) मिश्रित जल शंखमें रखकर उसके द्वारा स्नान करनेसे चन्द्रग्रहका दोष शांत होताहै ॥ ६ ॥

चन्द्रदोषोपशांतये देयद्रव्याणि।

श्वेतं वासः सिता धेनुः शंखो वा क्षीरपूरितः।
देयो वा राजतश्चंद्रश्चंद्रदोषोपशांतये ॥ ७ ॥

चन्द्रदोषशांतिके लिये दान कथित होताहै। सफेद-वर्णवस्त्र, सफेदवर्णगाय, क्षीर ( दुग्ध ) पूर्ण शंख अथवा चांदीका बना चन्द्रमा दान करनेसे चन्द्रग्रहका दोष शांत होताहै ॥ ७ ॥

तारानिर्णयः।

तारास्तु जन्मसम्पद्विपत्क्षेमपापशुभकष्टाः।
मित्रातिमित्रसंज्ञाश्चैताः संज्ञानुरूपफलाः ॥ ८ ॥

ताराशुद्धि कहीजातीहै। सत्ताईस नक्षत्र, जन्मनक्षत्रसे तीन २ बार गणना करनेसे जन्म, सम्पत, विपत, क्षेम, पाप, शुभ, कष्ट, मित्र और अतिमित्र इस नौ संज्ञामें अभिहित होतेहैं। यह सब तारा नामानुरूप फल देतेहैं। अर्थात् जन्म, विपत्, पाप, और कष्ट तारा अशुभदायक और सम्पत क्षेम शुभ एवं अतिमित्र यह सब शुभ दायक हैं ॥ ८ ॥

पञ्चमादि ताराफलम्।

पापाख्यास्त्रिविधाः पंचचतुर्दशाविंशतित्रियुताः।
सिद्धिफला वृद्धिकरी विनाशसंज्ञा क्रमात्क-थिता ॥ ९ ॥

पापताराके संबंधमें कहाजाता है। तीन पापतारा (जन्मनक्षत्रसे पंचमनक्षत्र चतुर्दशनक्षत्र और त्रयोविंशतिनक्षत्र) यह क्रमशः सिद्धिफला वृद्धिकरी और विनाशसंज्ञामें अभिहित होतेहैं अर्थात् नक्षत्रसे पंचम (५) तारा सिद्धिफल प्रद चतुर्दश (१४) तारा वृद्धिफल प्रद और त्रयोविंशति (२३) तारा विनाशिनी होतीहै ॥ ९ ॥

तारामतीकारः।

विपत्तारे गुडं दद्याच्छाकं दद्यात्त्रिजन्मनि।
प्रत्यरौ लवणं दद्यान्निधने तिलकांचनम् ॥ १० ॥

तारादोषका प्रतीकार कहाजाताहै। विपत्ताराका दोष शान्त होनेके लिये गुड दान करना चाहिये, इसीप्रकार निधन (वध) तारामें तिलके सहित कांचन दान प्रत्यरि (तीनों पापतारा) में लवण दान और तीनों जन्मतारामे शाक दान करे ॥ १० ॥

नाडी-नक्षत्राणि।

जन्माद्यं कर्म ततोऽपि दशमं साङ्घातिकं षोडशमम्।
समुदयमष्टादशमं विनाशसंज्ञं त्रयोविंशम् ॥११॥
आद्यात्तु पंचविंशं मानसमेवं नरः षड्नक्षत्रः।
नवनक्षत्रो नृपतिः स्वजातिदेशाभिषेकर्क्षैः ॥ १२॥

नाडीनक्षत्र कथित होताहै। जिस नक्षत्रमें मनुष्यने जन्म लिया हो, वही नक्षत्र उसका जन्म नाडी है, जन्मनाडीसे गणनामें दशवां नक्षत्र कर्मनाडी, सोलहवां नक्षत्र सांघातिक नाडी, अठारहवां नक्षत्र समुदायनाडी तेईसवां नक्षत्र विनाशनाडी और पच्चीसवें नक्षत्रका

नाम मानसनाडी है यह छै नक्षत्र मनुष्यके षन्नाडी नक्षत्र कहकर प्रसिद्ध हैं । राजाओंके औरभी तीन नाडी नक्षत्र हैं, स्वजातिनाडी, देशनाडी और अभिषेकनाडी, अत एव राजाओंके सब समेत नवनाडी नक्षत्र हैं । स्वीयजातिनिरूपित नक्षत्रका नाम स्वजातिनाडी देशनामानुसार जो नक्षत्र हो, उसका नाम देशनाडी, और जिस नक्षत्रमें राजा अभिषिक्त हो, उसका नाम अभिषक नाडीहै ॥ ११ ॥ १२ ॥

नाडीनक्षत्रशुभाशुभकथनम् ।

नामानुरूपमेषां सदसत्फलमिष्टपापगुणदोषात् ।
प्रकृतिस्थितामिष्टं वैकृत्योल्कादिपीडनं पापम् १३

अन्यच्च ।

ईहादेहार्थहानिः स्याज्जन्मर्क्षेचोपतापिते ।
कर्मर्क्षे कर्मणां हानिः पीडा मनसि मानसे ॥ १४ ॥
मूर्त्तिद्रविणबन्धूनां हानिः सांघातिके तथा ।
सन्तप्ते सामुदायिके मित्रभृत्यार्थसंक्षयः ।
वैनाशिके विनाशः स्याद्देहद्रविणसम्पदाम् ॥ १५ ॥

नाडीनक्षत्रका शुभाशुभफल वर्णित होताहै। इष्टपाप गुणदोषमें जन्मादिनक्षत्रका सदसत् ( शुभाशुभ ) फल होताहै अर्थात इष्टगुणमें संज्ञानुरूप-शुभफल और पापदोषमें नामानुरूप अशुभफल होताहै। प्रकृतिस्थित ( स्वभावस्थित ) शुभग्रहयुक्त नक्षत्र इष्टफल प्रदान करताहै और अस्तादि वा पापग्रहके योगसे विकारको प्राप्त होकर अथवा उल्कापात सूर्यचन्द्रके ग्रहण और भूकम्पादि उत्पातद्वारा पीडित होनेपर नक्षत्र

पाप ( अशुभ ) होताहै । नामानुरूपफल इसप्रकार देखना चाहिये । यथा; जन्मनक्षत्र इष्टगुणयोगसे जन्मशुभ अर्थात् जातकका देह शुभ होताहै और पापयोगसे देह अशुभ होताहै । इसीप्रकार कर्म ( दशम ) नक्षत्रमें इष्टगुणयोगसे कर्मकी सिद्धि और पापयोगसे कर्मकी हानि होतीहै । सांघातिक ( सोलहवें ) नक्षत्रमें इष्टयोगसे शरीरकी दुःस्थता ( बुरी हालत ) धन और बन्धुप्राप्ति, पापदोषसे शरीरभङ्ग, धन और बन्धुकी हानि, सामुदायिक (अठारहवें ) नक्षत्रमें इष्टगुणसे द्रव्यकी वृद्धि, पापयोगसे द्रव्यका नाश वैनाशिक ( तेइसवें ) नक्षत्रमें इष्टयोगसे आरोग्यप्राप्ति, पापदोषसे पीडा और ( पच्चीसवें ) नक्षत्रमें इष्टगुणसे चित्तहर्ष और पापदोषसे चित्तोद्वेग होताहै । और राजाओंका जाति नक्षत्र उपतापित होनेपर उनके जातीय सब मनुष्योंको परिताप, और जातिनक्षत्र सुस्थ होनेपर तज्जातीय सबकी सुस्थता, देशनक्षत्र उपतापित होनेपर देशवासी मनुष्योंको ताप, और देशनक्षत्र सुस्थ होनेपर देशवासियोंकी सुस्थता और अभिषेकनक्षत्र उपतापित होनेपर राजाके चित्तमें उद्वेग और अभिषेकनक्षत्र सुस्थित होनेपर राजाके चित्तमें सुस्थता उत्पन्न होतीहै और इसके विपरीत होनेपर देह धन और संपत्तियोंका विनाश होताहै ॥

पुस्तकान्तरके वचनोंसे नाडीनक्षत्रका फल वर्णित होताहै । मनुष्यका जन्मनाडी ( जन्मनक्षत्र ) उपतापित होनेपर चेष्टा, देह और अर्थकी हानि होतीहै । इसीप्रकार कर्मनाडी अर्थात् जन्मनक्षत्रसे दशवें नक्षत्रके उपतापित होनेपर कर्मकी हानि, मानसनाडी उपतापित होनेपर पीडा, सांघातिकनाडी उपतापित होनेपर देह, धन और

बन्धुकी हानि, सामुदायिकनाडी उपतापित होनेपर मित्र, भृत्य और अर्थका क्षय एवं वैनाशिक नाडीके उपतापित होनेपर शरीर, धन और सम्पद नष्ट होतीहै ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

नाडीनक्षत्रफलम्।

रोगाद्यागमवित्तनाशकलहाः संपीडिते जन्मभे। ❀
सिद्धिं कर्म न याति कर्मणि हते भेदस्तु सांघातिके।
द्रव्यस्योपचितस्य सामुदयिके संपीडिते संक्षयो
वैनाशे तु भवन्ति कायविपदश्चित्तासुखं मानसे ॥१६॥

नाडीनक्षत्रका फल कहा जाताहै। जन्मनक्षत्र पीडित होनेपर रोगोत्पत्ति, वित्तनाश और कलह आदि घटित होतीहै, कर्मनक्षत्र पीडित होनेपर कार्यकी सिद्धि नहीं होती, इसीप्रकार सांघातिकनक्षत्रके पीडित होने-पर भेद ( विच्छेद ) सामुदायिकनक्षत्रके पीडित होनेपर संचितद्रव्यका क्षय, वैनाशिक नक्षत्रके पीडित होनेपर शारीरिक विपद्, और मानसनक्षत्रके पीडित होनेपर मनुष्यके चित्तको सुख नहीं होता ॥ १६ ॥

निरुपद्रवसोपद्रवनाडीनक्षत्रकथनम्।

निरुपद्रुतभो निरामयः सुखभुङ् नष्टरिपुर्वेला-न्वितः। सोपद्रुतभो विनश्यति त्रिभिरन्यैश्च सहा वनीश्वरः ॥ १७ ॥

---

❀ "रोगाद्यागम" इत्यादि वचन किसी किसी आदर्शपुस्तकमें पाया जाता, इसकारण इसग्रन्थमेंभी दियागया।

निरुपद्रुत और सोपद्रुत नाडी नक्षत्र कथित होताहै नाडीके प्रकृतिस्थ अर्थात् ग्रहविहीन होनेपर वा शुभग्रह से युक्त होनेपर उसको निरुपद्रुत कहते हैं और नाडीनक्षत्र यदि अस्त ग्रह पापग्रह अथवा वक्रीग्रहयुक्त हो, या सूर्य चन्द्रके ग्रहण और भूकम्पादि अनिष्ट द्वारा पीडित हो तो वह सोपद्रुत कहाताहै । नाडीनक्षत्रके निरुपद्रुत होनेपर मनुष्य निरोगी सुखी शत्रुका नाश करनेमें समर्थ और बलयुक्त होताहै और नाडी नक्षत्रके सोपद्रुत होने पर मनुष्य रोगयुक्त, दुःखी, शत्रुविनाशमें: असमर्थ और बलहीन होता है।राजाओंकाभी नवनाडीनक्षत्र द्वाराही उक्तप्रकारसे फल विचारना चाहिये ॥ १७ ॥

नाडीनक्षत्रशान्तिः ।

सर्वेषां पीडायां दिनमेकमुपोषितोऽनलं जुहुयात्
सावित्र्या क्षीरतरोः समिद्भिरमरद्विजार्चनरतः॥१८॥

नाडी नक्षत्रके दोषका प्रतीकार कथित होताहै। समस्त नाडी नक्षत्र हों वा जो कोई एक नाडी नक्षत्र हो, यदि पीडित, हो तो एक दिन उपवास करके देवद्विजार्चनरत मनुष्य गायत्री पाठपूर्वक क्षीरीवृक्षकी अष्टाधिकसहस्र ( एक हजार आठ ) समिधाओंसे अग्निमें होम करे तथा देवार्चन और ब्राह्मण भोजनादि कराना चाहिये ॥ १८ ॥

ग्रहणगतनाडीनक्षत्रफलम् ।

ग्रहणं रविचंद्रमसोर्नाडीनक्षत्रवासरे यस्य ।
अब्दा द्वाभ्यंतरतो दोषो नाडीसमस्तस्य ॥ १९ ॥

ग्रहणगतनाडी नक्षत्रका फल कथित होता है। यदि किसी मनुष्यके नाडीनक्षत्रमें सूर्य वा चन्द्रका ग्रहण हो

तो छै महीनेमें उस मनुष्यका सब नाडीनक्षत्र दूषित होता है ॥ १९ ॥

ग्रहणगतनाडीनक्षत्रस्नानम्।

ग्रहणग्रहपीडितनाडीनक्षत्रदोषोपशमनाय। सह शतपुष्पैः स्नायात्फलिनीफलचन्दनोशीरैः ॥ २० ॥

ग्रहणपीडित नाडीनक्षत्रके प्रतीकारार्थ स्नान कथित होताहै। ग्रहणकालीन यदि किसी मनुष्यका नाडीनक्षत्र पीडित हो तो वह मनुष्य नाडीनक्षत्रका दोष शान्त होनेके लिये शतपुष्प प्रियंगु चन्दन और सफेद खसकी जडयुक्त जलमें स्नान करै ॥ २० ॥

नाडीनक्षत्रेण पापग्रहसंक्रमणफलम्।

नाडीनक्षत्रदिवसे रविभौमशनैश्चराः।
संक्रांतिं यस्य कुर्वंति तस्य क्लेशोऽभिजायते ॥ २१ ॥

नाडी नक्षत्रमें पापग्रहके संक्रमणका फल वर्णित होता है। यदि रवि मंगल वा शनैश्चर किसी मनुष्यके नाडीनक्षत्रगत होकर अथवा नाडीनक्षत्र दिनमें एक राशिसे अन्य राशिमें जाय तो उस मनुष्यको अतिशय क्लेश होता है ॥ २१ ॥

नाडीनक्षत्रेण पापग्रहसंक्रान्तिप्रतीकारः।

गोमूत्रसर्षपैः स्नानं सर्वौषधिजलेन वा। विशुद्धं काञ्चनं दद्यान्नाडीदोषोपशांतये ॥ २२ ॥ (१)

नाडीनक्षत्रमें पापग्रहके संचारकका फल कथित होता है। यदि किसी मनुष्यके नाडी नक्षत्रमें पापग्रहका

---

(१) ग्रहं संपूज्य तं दद्याद्द्विजाय कनकोत्तमम्। इति क्वचित् पुस्तके पाठः।

संचार हो तो गोमूत्र, सरसो, और सर्वौषधियुक्त जलमें स्नान करें और ब्राह्मणको विशुद्ध कांचन दान करना चाहिये। उक्तप्रकारसे स्नानादि करनेपर नाडीनक्षत्र दोष शान्त होताहै ॥ २२ ॥

विषुवादिसंक्रान्तिनिर्णयः।

विषुवन्मेपतुलयोरयनं मकरे रवौ कुलीरे च।
षडशीतिर्द्विशरीरे विष्णुपदी च स्थिरे राशौ ॥ २३ ॥

अब विषुवादि रविसंक्रान्ति वर्णित होती हैं। मेष और तुलाराशिमें रविसंक्रमणकालका नाम विषुवसंक्रान्ति, मकर और कर्कराशिमें रविके प्रवेशकालका नाम अयनसंक्रान्ति, मिथुन, कन्या, धनु और मीनराशिमें रविसंक्रमणकालका नाम षडशीतिसंक्रान्ति, एवं वृष, सिंह, वृश्चिक और कुंभराशिमें रविसंक्रमण होनेपर उसको विष्णुपदी संक्रान्ति कहतेहैं ॥ २३ ॥

रविशुद्धिः।

जन्मराशेः शुभः सूर्यस्त्रिषष्ठदशलाभगः।
द्विपञ्चनवगोऽपीष्टस्त्रयोदशदिनात्परम् ॥ २४ ॥

रविकी विशेष शुद्धि कही जातीहै। मनुष्यकी जन्मराशिसे तीसरी छठी, दशवीं और ग्यारहवीं राशिमें स्थित रवि सदा शुभफल देते हैं और जन्मराशिकी अपेक्षा दूसरी, पांचवी अथवा नवीं राशिमें स्थित रवि तेरह दिनके पीछे शुभ होतेहैं ॥ २४ ॥

रविशान्तिस्नानम्।

मञ्जिष्ठात्वथ पत्रांगकुंकुमं रक्तचन्दनम्।
ताम्रकुम्भे कृतं पूर्णे स्नानं तेनार्कशान्तये ॥ २५ ॥

रविग्रह गोचरमें अशुभ होनेपर उसकी शान्ति कथित होतीहै । माञ्जिष्ठा ( मजीष्ठ ) तेजपत्र ( तेजपात ) कुंकुम (रोली ) और रक्तचन्दनयुक्त तांबेके घटमें भरकर उसके द्वारा स्नान करनेसे रविके गोचरका दोष नष्ट होताहै॥२५॥

जन्मनक्षत्रेण रविसंक्रमणफलम् ।

यस्य जन्मर्क्षमासाद्य रविसंक्रमणं भवेत् ।
तन्मासाभ्यन्तरे तस्य रोगक्लेशधनक्षयाः ॥ २६ ॥

नाडीनक्षत्रमें रविसंक्रमण होनेपर जो दोष होताहै, वह पहिले सामान्यरूपसे कहागया है, अब केवल जन्म नाडीनक्षत्रमें रविसंचारका विशेष दोष कथित होताहै यथा;–यदि किसी मनुष्यके जन्मनक्षत्रमें रवि एकराशिसे अन्यराशिमें जाय तो उस सौरमासमें उक्तमनुष्यका रोग, क्लेश और धनक्षय होताहै ॥ २६ ॥

जन्मर्क्षे रविसंक्रान्तिस्नानम् ।

तगरसरोरुहपत्रैरजनीसिद्धार्थलोध्रसंयुक्तैः । स्नानं जन्मनक्षत्रदिने रविसंक्रान्तौ नृणां शुभदम् ॥ २७॥

जन्मनक्षत्रमें रविसंक्रमण होनेपर उसका प्रतीकार कथित होताहै जिसकिसी मनुष्यके जन्मनक्षत्रमें रविका संचार होनेपर तगर पुष्प, पद्मपत्र, हलदी, सफेद सरसों और लोध्रयुक्त जलसे वह मनुष्य स्नान करै, तो जन्मनक्षत्रमें रविसंक्रमणका दोष नष्ट होताहै ॥ २७ ॥

स्वनक्षत्रेण जन्मदिवसफलम् ।

जन्मर्क्षयुक्ता यदि जन्ममासे यस्य ध्रुवं जन्मतिथि र्भवेच्च । भवन्ति संवत्सरमेव यावन्नैरुज्यसम्मान-सुखानि तस्य ॥ २८ ॥

स्वनक्षत्रमें जन्मतिथिका फल वर्णित होताहै। किसी मनुष्यकी जन्मतिथि यदि जन्मके महीनेमें जन्मनक्षत्रयुक्त हो, तो उसवर्षमें उसको रोग नहीं होता, बरन सन्मान और सुखके सहित काल व्यतीत करताहै ॥ २८ ॥

अनृक्षयोगेन शनिभौमयोर्वासरे जन्मदिनफलम्।

कृतान्तकुजयोर्वारे यस्य जन्मदिनं भवेत्।
अनृक्षयोगसंप्राप्तौ विघ्नस्तस्य पदे पदे ॥ २९ ॥

जन्म नक्षत्रयुक्त न होकर शनि मंगलवारमें जन्मतिथि होनेपर उसका फल कहाजाताहै। यदि किसी मनुष्यकी शनिवार अथवा मंगलवारमें जन्म नक्षत्रयुक्त जन्म तिथि न हो तो उस वर्षमें उसको पद्पद्पर विघ्न होता है॥२९॥

जन्मनक्षत्रेण भौमशनिवारफलम्।

जन्मन्यृक्षे यदि स्यातां वारौ भौमशनैश्चरौ।स मासः
कल्मषो नाम मनोदुःखप्रदायकः ॥ ३० ॥

शनि मंगलवारमें जन्मनक्षत्रयोगका फल कथित होता है। जिस किसी महीनेमें जन्मनक्षत्रमें यदि मंगलवार अथवा शनिवार हो, तो वह मास उसका पापमासके नामसे अभिहित होताहै और उस मनुष्यको उस महीने में अनेकप्रकारका मनोदुःख होताहै ॥ ३० ॥

जन्मदिनशान्तिः।

तस्य सर्व्वौषधिस्नानं ग्रहविप्रसुरार्चनम्।
सौरारयोर्दिने मुक्ता देयाऽनृक्षे तु काञ्चनम् ॥ ३१ ॥

शनि मंगलवारमें जन्मतिथियोगमें और जिस किसी मासमें जन्मनक्षत्रयोगमें दोषका प्रतीकार कथित होताहै जन्मतिथि और प्रतिमासमें जन्मनक्षत्रमें शनिवार

अथवा मंगलवार योग होनेपर जो दोष कहागयाहै, उस की शान्तिके निमित्त सर्वौषधियुक्त जलमें स्नान, ग्रह ब्राह्मण और देवताकी पूजा करे । शनि मंगलवारमें जन्म तिथि और जन्मनक्षत्रका दोष शान्त होनेके लिये मोती दान और जन्मनक्षत्र विहीन जन्मतिथिमें काञ्चन दान करे ॥ ३१ ॥

सर्व्वौषधिः ।

मुरा मांसी वचा कुष्ठं शैलेयं रजनीद्वयम् ।
शुंठी चम्पकमुस्तञ्च सर्व्वौषधिगणः स्मृतः ॥ ३२ ॥

सर्वौषधि कथित होतीहैं । मुरा, मांसी (मुलैठी), वच, कुष्ठ, ( कूट ) शैलेय, हलदी, दारुहलदी, शुंठी, ( सोंठ ) चम्पक ( चंपा ) और मोथा इन सब द्रव्योंको सर्व्वौषधि कहतेहैं ॥ ३२ ॥ इति भाषाटीकायां चन्द्रताराशुद्धि स्तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

---

## चतुर्थोऽध्यायः ।

वारगुणाः ।

सितेंदुबुधजीवानां वाराः सर्वत्र शोभनाः ।
भानुभूसुतमंदानां शुभकर्मसु केष्वपि ॥ १ ॥

वारफल कथित होताहै । शुक्र, सोम, बुध और बृह-स्पति सभी कार्योंमें शुभ होताहै और रवि मंगल तथा शनिवार किसी किसी कार्यमें शुभ होताहै ॥ १ ॥

देशान्तरे–वाराधिकारः ।

रेखापूर्वापरयोर्व्वाराः सूर्योदयात्परस्तात्प्राक् ।
देशांतरयोजनमितविघटीभिः पादहीनाभिः ॥ २ ॥

प्रतिदेशमें वार इत्यादिका काल कथित होताहै। रेखाके पूर्व और अपरदेशमें क्रमशः सूर्योदयके पीछे पूर्वमें वारप्रवृत्ति होतीहै अर्थात् रेखाकी पूर्वदिशामें सूर्योदयके पीछे और रेखाके अपरदेशमें ( पश्चिमभागमें ) सूर्योदयके पहिले वारप्रवृत्ति होतीहै। देशान्तरयोजनपरिमितपलको चतुर्थांशविहीन करनेसेही उसके द्वारा वारप्रवृत्तिके सूक्ष्मकालका निर्णय होताहै। सूर्यसिद्धान्तने कहाहै "राक्षसालय (लंका) और देवौकः शैल अर्थात् सुमेरुपर्वत इन दोनोंके मध्यमें सूत्रग, रौहीतक, अवन्ती और कुरुक्षेत्र इत्यादि देश हैं, इनदेशोंकोही रेखा कहकर कल्पना करीजातीहै" अत एव रौहीतक और अवन्ती इत्यादि देशोंकी पूर्वदिशामें जो सब देश हैं, उन सब स्थानोंमें सूर्योदयके पीछे वारप्रवृत्ति और रौहीतक इत्यादि देशोंके पश्चिमभागमें सूर्योदयके पहिले वारप्रवृत्ति होतीहै। वास्तविक रेखासंज्ञक रौहीतक और अवंती इत्यादि देशवासी मनुष्यगण जिस समय सूर्यका दर्शन करतेहैं उसी समय सभी देशोंमें वारप्रवृत्ति होतीहै।देशान्तरयोजनभी सूर्यसिद्धान्तके द्वारा वर्णित हुआहै यथा. "गौडदेशमें ११५ पञ्चदशाधिकशतयोजन, वंगमें सुवर्णग्रामादिदेशमें १४० चत्वारिंशदधिकशतयोजन और बाराणसीमें १०८ अष्टाधिकशतयोजन देशान्तर होताहै। इसीप्रकार अन्यान्य देशोंमेंभी देशान्तर योजनका अनुमान करलेना चाहिये। वंगमें सुवर्णग्रामादिदेशमें देशान्तर १४० एकसौचालीसयोजन उक्त हुआहै। इसका चतुर्थांश ३५ पल घटानेसे १०५ एकसौपांच पल होतेहैं" अत एव १।४५ एकदण्ड पैतालीसपलके समय वंगदेशमें

सुवर्णग्रामादिस्थानमें वारप्रवृत्ति होगी, इसीप्रकार समस्तलोक वारप्रवृत्ति ग्रहण करतेहैं, किन्तु सूर्यसिद्धान्तने "अहोरात्रमें वारप्रवृत्ति होतीहै" ऐसाभी कहाहै ॥ २ ॥

विशेषतो वारफलम् ।

**उपचयकरस्य वारे ग्रहस्य कुर्यात्स्ववारविहितञ्च ।**
**अपचयकरग्रहदिने कृतमपि सिद्धिं न याति यतः॥३॥**

रविशुद्धिविषयमें विशेष कथित होताहै । गोचरमें हो वा दशामें हो जो ग्रह उपचय कर अर्थात मंगल कर हो, उसग्रहके वारमें पूर्वोक्त स्वस्ववार विहितकर्म करनेसे शुभ होगा, किन्तु गोचरादिमें अपचय अर्थात् मंगलकर ग्रहके वारमें स्वस्ववारविहितकर्म करने परभी वह कर्म सिद्ध नहीं होगा ॥ ३ ॥

तिथीनां नामानुरूपफलकथनम् ।

**नन्दा भद्रा जया रिक्ता पूर्णा च नामसदृशफलाः ।**
**न्यूनसमेष्टाः शुक्ले कृष्णे तिथयः प्रतीपाताः ॥४॥**

प्रतिपदादि पन्द्रह तिथिकी नन्दादिसंज्ञा कथित होतीहै । यथा;—प्रतिपदादि तिथि क्रमशः, त्रिरावृत्तिद्वारा नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा, इन पांचसंज्ञामें अभिहित होतीहैं अर्थात् दोनों पक्षकी पड़वा, छट और एकादशी तिथि नन्दा, दोयज, सप्तमी और द्वादशीतिथि भद्रा, तीज, अष्टमी और तेरसतिथि, जया, चौथ, नवमी और चौदशतिथि रिक्ता, और पंचमी, दशमी तथा पंचदशी ( पूर्णिमा और अमावस्या ) तिथिको पूर्णा कहाजाताहै । नन्दादि पांचतिथि नामानुरूप फल देतीहैं, किन्तु इसमें विशेष यह है कि शुक्लपक्षमें पड़वा

आदि ( पंचमीतिथिपर्यन्त ) पांचतिथि अल्पफलप्रद् छट इत्यादि दशमीतक पांच तिथि मध्यमफलप्रद् और एकादशी इत्यादि पूर्णमासीतक पांच तिथि पूर्णफलदायक होतीहैं। कृष्णपक्षमें इसके विपरीतहोताहै अर्थात पडवा इत्यादि पंचमीपर्यन्त पांचतिथि पूर्णफलप्रद्, छट इत्यादि दशमीपर्यन्त पांचतिथि मध्यमफलप्रद् और एकादशी इत्यादि अमावस्यापर्यंत पांचतिथि अल्पफलप्रद् होतीहैं ॥ ४ ॥

अवमत्र्यहस्पर्शविवेकः।

तिथ्यन्तद्वयमेको दिनवारः स्पृशति यत्र तद्भवति।
अवमदिनं त्रिदिनस्पृक् तिथिस्पर्शनादह्नः॥ ५ ॥

अवम और त्र्यहस्पर्श कथित होताहै। एक सावनदिन ( दिनरात्रि ) में यदि दो तिथिका अंत हो, तो उसको अवमादिन कहतेहैं और एक सावन दिनमें तीन तिथिका स्पर्श होनेपर उसको त्र्यहस्पर्शदिन कहाजाताहै। पहिले दिन वारप्रवृत्तिके परकालसे परदिवस सूर्योदयके पूर्वमें यदि दो तिथिका अन्त हो अर्थात् जिसप्रकार दो दण्ड एकतिथि रहकर परातिथि षट्पञ्चाशत् ( छप्पन ) दण्डात्मिका होनेपर वह दिन अवम होगा। और सूर्योदयके पीछे दो तिथिके मिलनेपर उसका नाम त्र्यहस्पर्श है यथा सूर्योदयके पीछे और वारप्रवृत्तिके पहिले जो कोई तिथि एक दण्ड रहकर परातिथि यदि सप्तपंचाशत् ( सत्तावन ) दण्डात्मिका हो और इसके पीछे अन्यतिथिके मिलनेपरही उसदिनको त्र्यहस्पर्श कहेंगे॥ ५ ॥

त्र्यहस्पर्शनिन्दा।

त्र्यहस्पृशन्नाम यदेतदुक्तमत्र प्रयत्नः कृतिभिर्विधेयः। विवाहयात्रा शुभपुष्टिकर्म सर्व्वं न कार्यं त्रिदिनं स्पृशेत्तु॥ ६॥

त्र्यहस्पर्शकी निन्दा कथित होतीहै। जो दिन त्र्यहस्पर्श कहकर कथित हुआहै, उसमें विवाह यात्रा और शुभ पौष्टिक समस्तकर्म पण्डितगण यत्नपूर्वक त्याग करें। किन्तु गोविन्दानन्दने कहाहै कि, तिथि विशेषविहित व्रतारंभ इत्यादि त्र्यहस्पर्शमेंभी करसकताहै॥६॥

नक्षत्रदेवताकथनम्।

अश्वियमदहनकमलजशशिशूलभृददितिजीवफणिपितरः। योन्यर्य्यमदिनकृत्त्वष्टृपवनशक्राग्निमित्राश्च॥७॥
शक्रो निर्ऋतिस्तोयं विश्वाविरिञ्चिहरिर्व्वसुर्व्वरुणः। अजपादोऽहिर्बुध्न्यः पूषा चेतीश्वरा भानाम्॥ ८॥

अश्विन्यादि नक्षत्रके अधिपति (अधिष्ठात्री ) देवता कथित होते हैं। अश्विनीके अधिपति अश्वि, (अश्विनी कुमार ) भरणीके अधिपति यम, कृत्तिकाके अधिपति अग्नि, रोहिणीके अधिपति ब्रह्मा, मृगशिराके अधिपति चन्द्र, आर्द्राके अधिपति शिव, पुनर्वसुके अधिपति अदिति पुष्यके अधिपति बृहस्पति, आश्लेषाके अधिपति सर्प, मघाके अधिपति पितृगण, पूर्वाफाल्गुनीके अधिपति योनि, उत्तराफाल्गुनीके अधिपति अर्यमा, हस्तके अधिपति सूर्य, चित्राके अधिपति त्वष्टा, स्वातीके अधिपति पवन, विशाखाके अधिपति शक्राग्नि, अनुराधाके अधि-

पति मित्र, ज्येष्ठाके अधिपति इन्द्र, मूलके अधिपति नैर्ऋति, पूर्वाषाढके अधिपति तोय, उत्तराषाढके अधिपति विश्व, अभिजित्के अधिपति विरिञ्चि, श्रवणके अधिपति हरि, धनिष्ठाके अधिपति वसु, शतभिषाके अधिपति वरुण, पूर्वाभाद्रपदके अधिपति अजपाद, उत्तराभाद्रपद के अधिपति अहिर्बुध्न्य, और रेवतीनक्षत्रके अधिपति पूषा होतेहैं, अश्विनी इत्यादिनक्षत्रमें जो जो देवता उक्त हुआ है, प्रायः उस उस देवताके पर्यायशब्दसे भी नक्षत्रको समझना चाहिये। अश्विनी नक्षत्रके अश्विनी कुमार देवताहैं अश्विनी कुमारपर्यायकशब्द और अश्वपर्यायकशब्द सेभी अश्विनीनक्षत्र जानना चाहिये, पूर्वाफल्गुनीनक्षत्रके योनि देवता हैं भगपर्यायकशब्दसेभी पूर्वाफाल्गुनीनक्षत्र समझा जाताहै, उत्तराफाल्गुनीके देवता अर्यमा हैं, यहां पर पर्यायकशब्द नहीं है अर्यमाका स्वरूप मात्र है हस्तनक्षत्रके दिनकृत देवताहैं रविपर्यायकशब्दसेभी हस्त जानना चाहिये चित्रानक्षत्रके त्वष्टा देवता हैं, यहांपरभी स्वरूपमात्र है, स्वातीके देवता पवन हैं, पवनवाचकशब्दसेभी स्वातीनक्षत्रको समझना, पूर्वाषाढाके अधिपति तोयहैं जलपर्यायकशब्दसे पूर्वाषाढाको जानना चाहिये, अभिजितनक्षत्रके अधिपति विरिञ्चि हैं, यहां स्वरूपमात्र है, रेवतीनक्षत्रके देवता पूषा हैं, यहांभी स्वरूपमात्र है, किन्तु पौष्णपदसे रेवतीनक्षत्रको जानना चाहिये ॥ ७ ॥ ८ ॥

अशुभनक्षत्रगणः।

नक्षत्रमपटुकिरणं पश्चात्सन्ध्यागतं ग्रहैर्भिन्नम्।
क्रूरनिपीडितमुत्पातदूषितं चाशुभं सर्वम् ॥ ९ ॥

अशुभनक्षत्रोंका निर्णय कियाजाताहै । अश्विनी इत्यादि सत्ताईसनक्षत्रमें अपटुकिरण अस्फुटरश्मि अर्थात् रविभोग्यनक्षत्रका पूर्व और परनक्षत्र अल्परश्मियुक्त होताहै । यह दोनों नक्षत्र, पश्चात् सन्ध्यागत ( रविभोग्य ) नक्षत्र, और शुभाशुभग्रहयोगद्वारा भिन्ननक्षत्र, पापग्रहभोग्यनक्षत्र और उल्कापातादि विविधोत्पातदूषित नक्षत्र अशुभनक्षत्र कहागया है, उक्त सब अशुभ नक्षत्रोंमें कोई शुभकार्य नहीं करना चाहिये ॥ ९ ॥

ऊर्द्धाननक्षत्रगणः ।

रोहिण्यार्द्रसतिष्यमूलवसवो विष्णुस्त्रयोऽप्युत्तरा एतान्यूर्द्धमुखानि भानि नव च ज्योतिर्विदो मेनिरे । एभिश्चित्रसितातपत्रभवनप्रासादहर्म्यांङ्घ्रिपप्राकाराट्टविहारतोरणपुरप्रारम्भणं शस्यते॥१०॥

ऊर्द्धमुखनक्षत्र कथित होतेहैं । रोहिणी, आर्द्रा, पुष्य, मूल, धनिष्ठा, श्रवण, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, और उत्तराभाद्रपदा इन सब नक्षत्रोंको ज्योतिर्विदोंने ऊर्द्धमुखगण कहकर निरूपित किया है, चित्रकार्य, श्वेतच्छत्रधारण, गृहारम्भ, राजपुरगठन और अट्टालिकारम्भमें यह नौ नक्षत्र श्रेष्ठ होतेहैं और वृक्षारोपणमें प्राचीरगठनमें ( दीवार बनाना या मरम्मत कराना ) वणिक्गृहारम्भमें ( दुकान या वैश्यकाघर बनानेमें) विहारकर्ममें, एवं बहिर्द्वार और पुरीगठन ( नगरके निर्माण ) मेंभी उक्त सब नक्षत्र श्रेष्ठ होतेहैं ॥ १० ॥

पार्श्वाननक्षत्रगणः ।

मैत्राखण्डलचन्द्रवाणितुरगाश्चित्रा तथा स्वातयो रेवत्योऽथ पुनर्वसुश्च कथितः पार्श्वास्यनामा गणः ।

एभिर्यन्त्ररथादिपोतकरणं सद्मप्रवेशोऽपि वा शस्तोऽयं गजवाजिगर्दभगवां ग्राहे तथा यंत्रणे॥११॥

पार्श्वमुखनक्षत्र कथित होतेहैं। अनुराधा, ज्येष्ठा, मृगशिरा, हस्त, अश्विनी, चित्रा, स्वाती, रेवती, और पुनर्वसु, इन सब नक्षत्रोंको पार्श्वमुख नक्षत्र कहते हैं। उक्त सब नक्षत्रोंमें यन्त्रादि करण, रथनिर्माण, नौकादिगठन, और गृहप्रवेश आदि प्रशस्त होताहै ॥ ११ ॥

अधोमुखनक्षत्रगणः।

आश्लेषवह्नियमपित्र्यविशाखयुक्तं पूर्वात्रयं शतभिषा च नवाप्युडूनि। एतान्यधोमुखगणानि शिवानि नित्यं विद्यार्घभूमिखननेषु च भूषितानि॥ १२ ॥

अधोमुखनक्षत्र कथित होतेहैं। आश्लेषा, कृत्तिका, भरणी, मघा, विशाखा, पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पूर्वाभाद्रपदा, और शतभिषा, यह सब नक्षत्र अधोमुखगण कहेगयेहैं उक्त सब नक्षत्रोंमें विद्यारंभ अर्घ दान और भूमि खननादि कार्य शुभ होते हैं ॥ १२ ॥

स्थिरनक्षत्रगणः।

त्रीण्युत्तराणि तेभ्यो रोहिण्यश्च ध्रुवाणि तैः कुर्यात्। अभिषेकशान्ति तरुनगरबीजवापध्रुवारम्भान्॥ १३ ॥

ध्रुवनक्षत्रगण कथित होतेहैं। उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी यह सब नक्षत्र ध्रुवगण हैं इनमें अभिषेक शान्ति तरुरोपण, नगरस्थापन बीजवपन

श्रेष्ठ हैं और कोई कोई पण्डित अधोमुखनक्षत्रविहित वि-
द्यारंभ अर्घदान और भूमिखननादि कार्यभी इसमें
प्रशस्त कहते हैं ॥ १३ ॥

तीक्ष्णनक्षत्रगणः ।

मूलशक्रशिवभुजगाधिपानि तीक्ष्णानि तेषु सिध्य-
न्ति । अभिघातमन्त्रवेतालभेदवधबन्धनस-
म्बन्धाः ॥ १४ ॥

तीक्ष्णगण कथित होते हैं । मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, और
आश्लेषा नक्षत्र तीक्ष्णगण हैं, इनसब नक्षत्रोंमें अभिघात
( मारण आदि ) मंत्रकर्म भूतदानवादि साधन और वध
बन्धनादि कार्य सिद्ध होताहै ॥ १४ ॥

उग्रनक्षत्रगणः ।

उग्राणि पूर्वभरणीपित्र्याण्युत्सादनादिसाध्येषु ।
योज्यानि बन्धविषदहनशस्त्रसंघातादिषु च सिद्धौ १५

उग्रगण कथित होते हैं । पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पूर्वा-
भाद्रपद, भरणी, और मघा यह सब नक्षत्र उग्रगण हैं,
उक्त सब नक्षत्रोंमें शत्रु उच्चाटन, बन्धन, विष प्रयोग,
दहन और शस्त्रघातादि कार्य करनेसे सिद्ध होताहै॥१५॥

क्षिप्रनक्षत्रगणः ।

लघुहस्ताश्विनपुष्याः पण्यरतिज्ञानभूषणकलासु।
शिल्पौषधिपानादिषु सिद्धिकराणि प्रदिष्टानि ॥१६॥

क्षिप्रगण कथित होतेहैं । हस्त, अश्विनी और पुष्य
नक्षत्र क्षिप्र ( ल ) गण हैं उनमें पण्यकर्म ( खरीदफ-
रोख्त ) रति, ज्ञान, भूषण, कला, शिल्पकर्म, औषधि-

पान, ऋणग्रहण ( कर्ज लेना ) और ऋणदान ( कर्ज देना ) प्रशस्त होता है ॥ १६ ॥

मृदुनक्षत्रगणः।

मृदुवर्गस्त्वनुराधा चित्रापौष्णेन्दवानि मित्रार्थे।
सुरतविधिवस्त्रभूषणमंगलगीतेषु च हितानि ॥१७॥

मृदुगण कथित होते हैं। अनुराधा, चित्रा, रेवती, और मृगशिरा नक्षत्र मृदुगण हैं, इन सब नक्षत्रोंमें मित्र, अर्थ,सुरत विधि, वस्त्र, भूषण संग्रह, और गीतादि मंगलकार्य प्रशस्त होतेहैं॥ १७ ॥

मृदुतीक्ष्णनक्षत्रगणः।

हौतभुजं सविशाखं मृदुतीक्ष्णं तद्धिमिश्रफलकारि।
हयवृषभकुञ्जराणां वाहनदमनानि सेतुश्च ॥ १८ ॥

मृदुतीक्ष्णनक्षत्र कथित होतेहैं। कृत्तिका और विशाखानक्षत्र मृदुतीक्ष्ण ( मिश्र ) गण हैं, उक्त नक्षत्रोंमें मृदु और तीक्ष्णगण विहित कर्म मिश्र ( मध्य ) फल होताहै और अश्व, वृष, और हाथी इत्यादिका वहन दमन और सेतुकर्म शुभ होता है ॥ १८ ॥

चरनक्षत्रगणः।

श्रवणात्रयमादित्यानिलौ च चरकर्माणि हितानि।
आरामोद्यानानि कर्माणि भवन्ति चरवर्गे ॥ १९ ॥

चरनक्षत्रगण कथित होते हैं। श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु और स्वाती नक्षत्र चरगण हैं, इन सब नक्षत्रोंमें चर ( अस्थिर ) कर्म, आराम ( उपवन ) और उद्यान ( फलान्वितवन ) का आरम्भ शुभ होताहै ॥१९॥

एककालोग्रादिसप्तनक्षत्रनिर्देशः ।

उग्रः पूर्वमघान्तका ध्रुवगणस्त्रीण्युत्तराणि स्वभु-
र्वातादित्यहरित्रयं चरगणः पुष्याश्विहस्ता लघुः ।
चित्रामित्रमृगान्त्यभं मृदुगणस्तीक्ष्णोऽहिरुद्रेन्द्र-
युङ्मिश्रोऽग्निः सविशाखतः शुभफलाः सर्वे स्वकृत्ये
गणाः ॥ २० ॥

एककालीन उग्रादि सप्तनक्षत्रगण कथित होतेहैं पूर्वा-फाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पूर्वाभाद्रपदा, मघा और भरणी, यह सब नक्षत्र उग्रगण हैं । उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्त-राभाद्रपदा और रोहिणी, यह कई नक्षत्र ध्रुवगण हैं । स्वाती, पुनर्वसु, धनिष्ठा और शतभिषानक्षत्र चरगण हैं । पुष्य, अश्विनी और हस्तनक्षत्र लघुगण हैं । चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा और रेवती यह सब नक्षत्र मृदुगण हैं । आश्लेषा, आर्द्रा, ज्येष्ठा और मूलनक्षत्र तीक्ष्णगण और कृत्तिका एवं विशाखानक्षत्र मिश्रगण हैं । यह सब नक्षत्र अपने अपने कार्यमें शुभकारी होतेहैं ॥ २० ॥

पुंनक्षत्रगणः । ❀

हस्तो मूलः श्रवणः पुनर्वसुर्मृगशिरस्तथा पुष्यः ।
पुंसंज्ञिते च कार्ये पुंनामायं गणः शुभदः ॥ २१ ॥

पुन्नामनक्षत्र कथित होतेहैं हस्त, मूल, श्रवण, पुनर्वसु, मृगशिरा, और पुष्य, इन सब नक्षत्रोंको पुंनक्षत्र कहा-जाता है, पुंसवनादिकार्यमें उक्त सब नक्षत्र शुभदायक होतेहैं ॥ २१ ॥

---

❀ क्वचित् पुस्तके ।

नित्ययोगाः ।

विष्कम्भः प्रीतिरायुष्मान्सौभाग्यः शोभनस्तथा ।
अतिगण्डः सुकर्मा च धृतिः शूलस्तथैव च ॥ २२ ॥
गण्डो वृद्धिर्ध्रुवश्चैव व्याघातो हर्षणस्तथा ।
वज्रश्चासृग्व्यतीपातो वरीयान्परिघः शिवः।सिद्धिः
साध्यः शुभः शुक्रो ब्रह्मेन्द्रौ वैधृतिस्तथा ॥ २३ ॥

नित्ययोग कथित होतेहैं विष्कम्भ, प्रीति, आयुष्मान्, सौभाग्य, शोभन, अतिगण्ड, सुकर्मा, धृति, शूल, गण्ड, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वज्र असृक्, व्यतीपात, वरीयान्, परिघ, शिव, साध्य, सिद्ध, शुभ शुक्र, ब्रह्म, इन्द्र और वैधृति, यह सत्ताईस नित्य योग कहेगये है ॥ २२ ॥ २३ ॥

निषिद्धयोगानां वर्जनीयांशनिर्णयो विहितानां नामाऽनुरूपफलनिर्णयश्च ।

परिघस्य त्यजेदर्द्धं शुभकर्म ततः परम् ।
त्यजादौ पंच विष्कम्भे सप्त शूले च नाडिकाः२४॥
गण्डव्याघातयोः षट्कं नव हर्षणवज्रयोः ।
वैधृतिव्यतिपातौ च समस्तौ परिवर्जयेत् ॥ २५ ॥
शेषा यथार्थनामानः शुभकार्येषु शोभनाः ।
निषिद्धा वर्जितास्तत्र सर्वे नामस्वरूपतः ॥ २६ ॥

निषिद्धयोगका शुभाशुभ निर्णय होताहै। परिघयोगका अर्द्ध त्यागकर शुभकार्य करै। इसीप्रकार विष्कम्भ योगके प्रथम पांचदण्ड, शूलयोगके प्रथम सातदण्ड, गण्ड और व्याघात योगके प्रथम छः दण्ड, हर्षण और

वज्रयोगके प्रथम नौदण्ड, तथा वैधृति और व्यतीपातयोगको समस्त परित्याग करके शुभकार्य करना चाहिये। उक्त सब योगके अतिरिक्त जो योग हैं उनमें शुभकर्म करनेसे शुभ फल प्राप्त होताहै। समस्त विरुद्धयोग नामानुसारभी वर्जित होतेहैं ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

व्यमृतयोगः।

भूमिपुत्रार्कयोरह्नि नन्दा मरुद्वारुणाद्रान्त्याचित्राहिमूलाग्निभिः। भार्गवेणार्कयोरह्नि भद्रा भवेत् फल्गुयुग्माजयुग्मोडुभिः संयुता। सोमपुत्रस्य वारे जया स्यान्मृगोपेन्द्रगुर्विन्दुयाम्याभिजिद्वाजिभिः। गीष्पतेरह्नि युक्ता च रिक्ता यदा विश्वशक्राग्नियुक्पित्रादित्यऽम्बुभिः। सूर्यसुतस्य दिने यदि पूर्णा ब्रह्मदिनाधिपतिद्रविणैः स्यात्। योगवारास्त्रिभिरेव समेताः सर्वसमीहितसिद्धिनियुक्ताः ॥ २७ ॥

व्यमृतयोग कथित होता है। मंगलवार अथवा रविवार में यदि नन्दा अर्थात् पडवा एकादशी या छट तिथि स्वाती, शतभिषा, आर्द्रा, रेवती, चित्रा, आश्लेषा, मूल वा कृत्तिका नक्षत्र हों तो व्यमृतयोग होताहै। इसीप्रकार शुक्रवार वा सोमवारमें भद्रा, ( दोयज, द्वादशी, वा सप्तमी ) तिथि, पूर्वा फाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, पूर्व भाद्रपद वा उत्तराभाद्रपद नक्षत्रमें व्यमृतयोग होता है। बुधवारमें जया अर्थात् तेरस, अष्टमी वा तीज तिथि मृगशिरा, श्रवण, पुष्य, ज्येष्ठा, भरणी, अभिजित, वा अश्विनी नक्षत्र होनेपर व्यमृतयोग होगा। बृहस्पतिवार

में रिक्ता ( चौथ, नवमी वा चौदश ) तिथि, उत्तराषाढ, विशाखा, अनुराधा, पुनर्वसु वा पूर्वाषाढ नक्षत्र होनेपर ऽमृतयोग होता है। शनिवारमें पूर्णा अर्थात् पंचमी, दशमी, अमावस्या वा पूर्णिमा तिथि, एवं रोहिणी हस्त वा धनिष्ठा नक्षत्र होनेपर ऽमृतयोग होता है। यह अमृतयोग सबयोगोंसे श्रेष्ठ है। इस योगमें मनुष्यको वाञ्छितफल प्राप्त होताहै ॥ २७ ॥

अमृतयोगकथनम्।

ध्रुवगुरुकरमूलं पौष्णभं चार्कवारे हरियुगविधि-
युग्मे फल्गुनीभाद्रयुग्मे। दिवसकरतुरङ्गौ शर्वरी-
नाथवारे गुरुयुगनलवातोपान्त्यपौष्णानि कौजे॥२८॥
दहनविधिशताख्या मैत्रभं सौम्यवारे मरुददितिभ-
पुष्या मैत्रभं जीववारे। भगयुगजयुगश्वे विष्णुमैत्रे
सिताहे श्वसनकमलयोनी सौरिवारेऽमृतानि ॥२९॥

नक्षत्रामृतयोगकथितहोताहै। रविवारमेंउत्तराफाल्गुनी उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी, पुष्य, हस्त, मूल, वा रेवती नक्षत्र होनेपर नक्षत्रामृतयोग होताहै। इसीप्रकार सोमवारमें श्रवण, धनिष्ठा, रोहिणी, मृगशिरा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, हस्त वा अश्विनी नक्षत्रमें और मंगलवारमें पुष्य, आश्लेषा, कृत्तिका, स्वाती, उत्तराभाद्रपद वा रेवती नक्षत्रमें नक्षत्रामृत योग होताहै॥ २८ ॥ बुधवारमें कृत्तिका, रोहिणी, शतभिषा, वा अनुराधा होनेपर नक्षत्रामृतयोग होताहै। इसीप्रकार बृहस्पतिवारमें स्वाती, पुनर्वसु, पुष्य अथवा अनुराधा नक्षत्रमें, शुक्रवारमें पूर्वाफाल्गुनी उत्तराफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपद, उत्तरा-

भाद्रपद, अश्विनी श्रवण वा अनुराधानक्षत्रमें और शनिवारमें स्वाती अथवा रोहिणी नक्षत्रमें नक्षत्रामृतयोग होताहै ॥ २९ ॥

अमृतयोगप्रशंसा ।

यदि विष्टिव्यतीपातौ दिनं व्याप्य शुभं भवेत् ।
हन्यतेऽमृतयोगेन भास्करेण तमो यथा ॥ ३० ॥

अमृतयोगका फल कथित होता है, जिसप्रकार तिमिराविनाशी सूर्य अंधकारके समूहका नाश करते हैं, वैसे ही यह नक्षत्रामृतयोग विष्टि भद्रा वैधृति और व्यतीपात इत्यादि दोषोंको नष्ट करताहै ॥ ३० ॥

पापयोगकथनम् । (१)

आदित्यभौमयोर्नन्दा भद्रा शुक्रशशांकयोः ।
बुधे जया गुरौ रिक्ता शनौ पूर्णा च पापदा ॥ ३१ ॥

पापयोग कथित होताहै । रविवार और मंगलवारमें नन्दा अर्थात् पडवा, एकादशी वा षष्ठी तिथि होनेपर पापयोगहोताहै । इसीप्रकार शुक्रवार और सोमवारमें भद्रा ( दोयज द्वादशी और सप्तमी ) तिथि, बुधवारमें जया अर्थात् तेरस, अष्टमी और तृतीया तिथि, बृहस्पतिवारमें ( चौथ, नवमी, चौदश ) तिथि, एवं शनिवारमें पूर्णा अर्थात् पंचमी, दशमी, अमावस्या वा पूर्णिमा तिथि होनेपर पापयोग होता है ॥ ३१ ॥

सिद्धिदग्धपापयमघण्टयोगाः ।

नन्दाद्याः सिद्धियोगा भृगुजबुधकुजार्कीज्यवारैः
प्रशस्ताः सूर्येशाशाग्निषड्दृङ्मुनिमिततिथयोऽ

(१) क्वचित्पुस्तके ।

र्कादिवारैः प्रदग्धाः। पापोऽर्काहे विशाखा त्रयय-
ममुडुपस्याह्नि चित्राचतुष्कं तोयं विश्वाभिजिद्धं
त्वथ कुजदिवसे स्वत्रयं विश्वरुद्रौ ॥ ३२ ॥
ज्ञाहे मूला विशाखा यमधनतुरगाऽन्त्यानि
जीवेऽह्नि पैत्र्यं रोहिण्यार्द्रा यमेन्दू शतभमथ
भृगोरह्नि पुष्यात्रयेन्द्रौ। शौराहे हस्तयुग्माार्य्यमयम-
जलयुक्पौष्णपुष्याधनानि । घण्टोऽखण्डर्क्षयुक्ते
स्वगृहपतिदिने सौम्यवारेऽर्य्यमापि ॥ ३३ ॥

सिद्धियोग, दग्ध, पापयोग और यमघन्टयोग कथित होताहै शुक्र, बुध, मंगल, शनि और बृहस्पति वारमें क्रमशः नन्दादितिथि होनेपर सिद्धियोग होताहै, यथा शुक्रवारमें नन्दा अर्थात् पडवा, एकादशी और छट तिथि होनेपर सिद्धियोग होताहै। इसीप्रकार बुधवारमें भद्रा (दोयज, द्वादशी और सतमी) तिथि, मंगल, वारमें जयाअर्थात् तेरस, अष्टमी और तीज तिथि और शनिवारमें रिक्ता( चौथ, नवमी और चौदश )तिथि और बृहस्पतिवारमें पूर्णा, अर्थात् पंचमी, दशमी अमावस्या, पूर्णिमातिथि होनेपर सिद्धियोग होताहै। रवि इत्यादि सात ग्रहोंके वारमें क्रमशः द्वादशी, एकादशी दशमी तीज, छट दोयज, और सतमी इन सात तिथिका योग होनेपर दग्धयोग होताहै, यथाः–रविवारमें द्वादशी होने से दग्धा होतीहै।इसीप्रकार सोमवारमें एकादशी, मंगल-वारमें दशमी, बुधवारमें तीन, बृहस्पति वारमें छट शुक्रवारमें दोयज, और शनिवारमें सतमी तिथि होने-पर दग्धा होतीहै। रविवारमें विशाखा, अनुराधा,

ज्येष्ठा वा भरणीनक्षत्र होनेपर पापयोग होताहै । ऐसेही सोमवारमें चित्रा स्वाती, विशाखा अनुराधा, पूर्वाषाढा उत्तराषाढा वा अभिजित् नक्षत्र होनेपर और मंगलवारमें धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराषाढा अथवा आर्द्रानक्षत्र होनेपर पापयोग होताहै॥ ३२॥ बुधवारमें मूल, विशाखा, भरणी, धनिष्ठा अश्विनी अथवा रेवतीनक्षत्रके मिलनेसे पापयोग होगा, और बृहस्पतिवारमें मघा, रोहिणी, आर्द्रा, भरणी, मृगशिरा अथवा शतभिषानक्षत्र होनेपर, शुक्रवारमें पुष्य, आश्लेषा, मघा और मृगशिरानक्षत्र होनेपर एवं शनिवारमें हस्त, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, भरणी, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, रेवती, पुष्य अथवा धनिष्ठानक्षत्रके मिलनेपर पापयोग होताहै । नक्षत्रके नौ नौ पादयुक्त एक एक राशि होतीहै । सत्ताईसनक्षत्रात्मक मेषादि बारहराशियोंमें जो अभग्न नक्षत्र हैं, वह सब नक्षत्रक्षेत्राधिपति रव्यादि ग्रहके वारमें युक्त होनेसे यमघंटनामक योग होताहै । यथा मघा, पूर्वाफाल्गुनी, और उत्तराफाल्गुनीका एकपाद सिंहराशि है, इसके अधिपति रवि हैं, अतएव भग्न नक्षत्र उत्तराफाल्गुनीके अतिरिक्त मघा वा पूर्वाफाल्गुनीनक्षत्रके रविवारमें युक्त होनेसे यमघंटयोग होताहै इसीप्रकार पुनर्वसुका चौथापाद पुष्य और आश्लेषा नक्षत्र कर्कराशिके अधिपति चन्द्र हैं पुनर्वसुके चौथे पादके अतिरिक्त ( पुष्य और आश्लेषा ) नक्षत्र सोमवारमें युक्त होनेसे यमघण्टयोग होगा । इसीनियमानुसार मंगलवारमें अश्विनी, भरणी अनुराधा और ज्येष्ठानक्षत्रमें, बुधवारमें आर्द्रानक्षत्रमें बृहस्पतिवारमें मूल, पूर्वाषाढ, उत्तराभाद्रपद और रेवतीनक्षत्रमें शुक्रवारमें रोहिणीनक्षत्रमें एवं

शनिवारमें श्रवण और शतभिषानक्षत्रमें यमघण्टयोग होता है ॥ २३ ॥

उत्पातादियोगः ।

रव्यादि दिवसैर्युक्ता विशाखादि चतुश्चतुः । उत्पाता मृत्यवः काणा अमृतानि यथाक्रमम् ॥ २४ ॥

उत्पातादि योग कथित होताहै। रव्यादि वारमें विशाखादि चार चार नक्षत्र होनेपर क्रमशः उत्पात, मृत्यु, काण और अमृतयोग होताहै। रविवारमें विशाखानक्षत्र युक्त होनेपर उत्पातयोग, अनुराधा होनेपर मृत्यु, ज्येष्ठा होनेपर काण और मूलनक्षत्र होनेपर अमृतयोग होताहै । इसीप्रकार सोमवारमें पूर्वाषाढानक्षत्र होनेपर उत्पात उत्तराषाढा नक्षत्र होनेपर मृत्यु, अभिजित् होनेपर काण और श्रवणनक्षत्र होनेपर अमृतयोग होगा। मंगलादिवारमें धनिष्ठादि चार चार नक्षत्रमें क्रमशः उत्पातादियोग जानने चाहिये ॥ २४ ॥

क्रकचयोगः ।

वाजिचित्रोत्तराषाढामूलपाशीज्यभान्तकाः ।
सूर्यादिवारसंयुक्ता योगास्ते क्रकचाः स्मृताः ॥२५॥

क्रकचयोग कथित होताहै। रविवारमें अश्विनीनक्षत्र होनेसे क्रकचयोग होता है। इसी प्रकार सोमवारमें चित्रानक्षत्रमें मंगलवारमें उत्तराषाढा नक्षत्रमें, बुधवारमें मूलनक्षत्रमें, बृहस्पतिवारमें शतभिषानक्षत्रमें, शुक्रवारमें पुष्यनक्षत्रमें, और शनिवारमें रेवतीनक्षत्र होनेसे क्रकचनामक योग होताहै ॥ २५ ॥

यमघण्टमृत्युयोगादीनां त्याज्यकालनिर्णयः।

यमघंटे त्यजेदष्टौ मृत्यौ द्वादशनाडिकाः।
अन्येषां पापयोगानां मध्याह्नात्परतः शुभम् ॥३६॥

यमघंटादियोगका त्याज्यकाल कथित होताहै। यथा यमघंटयोगमें सूर्योदयके पीछेसे आठ दण्ड और मृत्युयोगमें सूर्योदयके पीछेसे बारह दण्ड त्यागने चाहिये। अन्यान्यसमस्तपापयोग मध्याह्नकालके पीछेही शुभ होते हैं अर्थात् मध्याह्नका पूर्वकाल त्यागना चाहिये ॥ ३६ ॥

क्रकचाद्यपवादः।

क्रकचो मृत्युयोगश्च दिनदग्धं तथा परे।
शुभे चन्द्रे प्रणश्यन्ति वृक्षा वज्रहता इव ॥ ३७ ॥

क्रकचादियोगका अपवाद कथित होताहै। क्रकचयोग, मृत्युयोग, दिनदग्धा और अन्यान्य अनिष्टकारी समस्तयोग गोचरमें चन्द्रशुद्ध होनेपर वृक्ष जिसप्रकार वज्राघातसे नष्ट होताहै उसीप्रकार नाशको प्राप्त होतेहैं ३७

देशविशेषे योगव्यवस्था।

सर्वेषु देशेषु विशेषतोऽमी विकम्भकाद्या मुनिभिः प्रदिष्टाः। वारर्क्षयोगास्तिथिवारयोगा वंगेषु योज्या न तु तेऽन्यदेशे ॥ ३८ ॥

समस्त शुभाशुभयोगकाही देशविशेषमें फल कथित होताहै। सबदेशोंमेंही विष्कम्भ इत्यादि सत्ताईस योगोंका फल होताहै, किन्तु अमृतयोग, पापयोगादि, और नक्षत्रामृतादियोग तथा तिथि वार नक्षत्रादि योगमें जो सिद्धि और दग्धादि योग होताहै, इन

समस्तयोगद्वारा शुभाशुभ फलका बल वंगदेशमेंही होताहै, अन्य किसीदेशमें इसका व्यवहार नहीं है, दोष गुण कुछ नहीं होता ॥ ३८ ॥

साधिपववादिकरणकथनम्।

बवबालवकौलवतैतिलगरवणिजविष्टिसंज्ञानाम् ।
पतयःस्युरिन्द्रकमलजमित्रार्य्यमभूश्रियःसयमाः ३९॥

साधिपववादि करण कथित होतेहैं।बव,बालव, कौलव तैतिल, गर, वणिज और विष्टि इन सात करणके क्रमशः इन्द्र, ब्रह्मा, मित्र, अर्यमा, पृथिवी, लक्ष्मी और यम यह सात देवता अधिपति होतेहैं ॥ ३९ ॥

ववादिकरणोत्पत्तिकथनम्।

शुक्लादितिथिशेषार्द्धात्पञ्चमे तत्तुरीयके ।
आद्यन्तार्द्धात्क्रमेण स्युरष्टावृत्त्याबवादयः ॥ ४० ॥

ववादिकरणोत्पत्ति अर्थात् किसतिथिमें कौन करण होताहै, वह वर्णित होताहै ।यथाः-शुक्लपडवाका शेषार्द्ध शुक्लपंचमीका पूर्वार्द्ध, शुक्लाष्टमीका शेषार्द्ध, शुक्लद्वादशीका पूर्वार्द्ध, पूर्णिमाका शेषार्द्ध,कृष्णा चौथका पूर्वार्द्ध, कृष्णसप्तमीका शेषार्द्ध और कृष्णएकादशीका पूर्वार्द्ध बवकरण है ।शुक्लदोयजका पूर्वार्द्ध,शुक्लपंचमीका शेषार्द्ध, शुक्लनवमीका पूर्वार्द्ध, शुक्लद्वादशीका शेषार्द्ध, कृष्णपडवाका पूर्वार्द्ध, कृष्णचौथका शेषार्द्ध,कृष्णाष्टमीका पूर्वार्द्ध और कृष्णएकादशीका शेषार्द्ध बालवकरण है । शुक्लदोयजका शेषार्द्ध, शुक्लछठका पूर्वार्द्ध, शुक्लनवमीका शेषार्द्ध, शुक्लतेरसका पूर्वार्द्ध,कृष्णपडवाका शेषार्द्ध,कृष्णपंचमीका पूर्वार्द्ध,कृष्णाष्टमीका शेषार्द्ध और कृष्णद्वादशीका पूर्वार्द्ध

कौलवकरण। शुक्लतीजका पूर्वार्द्ध, शुक्लछठका शेषार्द्ध, शुक्ल दशमीका पूर्वार्द्ध, शुक्लतेरसका शेषार्द्ध, कृष्णदोयजका पूर्वार्द्ध, कृष्णपंचमीका शेषार्द्ध, कृष्णनवमीका पूर्वार्द्ध, और कृष्णद्वादशीका शेषार्द्ध तैतिलकरण। शुक्लदोयजका शेषार्द्ध, शुक्लसप्तमीका पूर्वार्द्ध, शुक्लदशमीका शेषार्द्ध शुक्लचौदशका पूर्वार्द्ध, कृष्णदोयजका शेषार्द्ध, कृष्णछठका पूर्वार्द्ध, कृष्णनवमीका शेषार्द्ध और कृष्णतेरसका पूर्वार्द्ध गर करण। शुक्लचौथका पूर्वार्द्ध, शुक्लसप्तमीका शेषार्द्ध, शुक्लएकादशीका पूर्वार्द्ध, शुक्लचौदशका शेषार्द्ध, कृष्णतीजका पूर्वार्द्ध, कृष्णछठका शेषार्द्ध, कृष्णदशमीका पूर्वार्द्ध और कृष्णतेरसका शेषार्द्ध वणिजकरण। शुक्लचौथका शेषार्द्ध, शुक्लाष्टमीका पूर्वार्द्ध, शुक्लएकाशीका शेषार्द्ध, पूर्णिमाका पूर्वार्द्ध, कृष्णतीजका शेषार्द्ध, कृष्णसप्तमीका पूर्वार्द्ध, कृष्णदशमीका शेषार्द्ध और कृष्णचौदशका पूर्वार्द्ध विष्टिकरण है॥ ४० ॥

साधिपशकुन्यादिकथनम्।

कृष्णचतुर्दश्यन्तार्द्धात् ध्रुवाणि शकुनिचतुष्पदनागाः॥ किंस्तुघ्नमथ च तेषां कालवृषफणिमारुताः पतयः ॥ ४१ ॥

साधिपशकुन्यादि करणकथित होते हैं। कृष्णचौदशके शेषार्द्धसे शुक्लपडवाके पूर्वार्द्धतक तिथ्यर्द्धभोगक्रमसे शकुनि, चतुष्पद, नाग, और किंस्तुघ्न यह चार करण होते हैं अर्थात्, कृष्णचौदशका शेषार्द्ध शकुनि, अमावस्याका पूर्वार्द्धचतुष्पद, अमावस्याका परार्द्ध नाग, और शुपक्कडवाका प्रथमार्द्ध किंस्तुघ्न करण होता। यह करण चार ध्रुव ( निश्चल ) कहकर विख्यात हैं। काल, वृष,

फणि और मारुत यह क्रमानुसार उक्तचार करणके अधिपति होते हैं ॥ ४१ ॥

भद्रा--कथनम्।

तृतीया दशमी शेषे तत्पञ्चम्योस्तु पूर्वतः।
कृष्णे विष्टिः सिते तद्वत्तासां परतिथिष्वपि ॥ ४२ ॥

विष्टि ( भद्रा ) कथित होती है। कृष्णपक्षकी तीज और दशमी तिथिका शेषार्द्ध विष्टिभद्रा ( विष्टिकरण ) होती है। इसीप्रकार उक्तदोनों तिथिकी पंचमी कृष्णसप्तमी और कृष्णचौदशका पूर्वार्द्ध विष्टिकरण होता है। शुक्लपक्षमें तीज और दशमीके पीछे परातिथि अर्थात चौथ और एकादशीका परार्द्ध और तत्पंचमतिथि अष्टमी एवं पूर्णिमाका पूर्वार्द्ध विष्टिभद्रा होती है ॥ ४२ ॥

विष्ट्युपयोगकथनम्।

केषु केष्वपि कार्य्येषु सर्व्वाण्येवं तु योजयेत्।
विहाय विषरौद्राणि विष्टिं सर्वत्र वर्जयेत् ॥ ४३ ॥

करणोंका फल कथित होताहै किसी किसी कार्यविशेषमें ववादि सब करण प्रशस्त होते हैं। यात्रादिकार्यमें गर, वाणिज और विष्टिकरण अवश्य त्यागना चाहिये। विष्टिकरण ( विष्टिभद्रा ) विषप्रदान और युद्धादि कार्यमें श्रेष्ठ होताहै, अन्य किसी कार्यमें शुभदायक नहीं होता, केवल विष्टिभद्राकी पुच्छ ( शेषतीनदण्डका समय ) सब कार्योंमें शुभ होताहै ॥ ४३ ॥

योगादि प्रतीकारः।

योगस्य हेमकरणस्य च धान्यमिन्दोःशंखं च तंडुलमणीतिथिवारयोश्च। ताराबलाय लवणान्यथ

गाश्च राशेर्दद्यात् द्विजाय कनकं शुचिनाडि
कायाः ॥ ४४ ॥

योगादि विरुद्ध होनेपर उनका प्रतीकार कहा जाता है। विष्कम्भादि योगके दोषका प्रतीकार करनेके लिये सुवर्णदान करै। इसी कारणके दुष्ट होनेपर धान्य दान चन्द्रके दूषित होनेपर दूधसे भराहुआ शंखदान, तिथि दुष्ट होनेपर पुरुषके आहारयोग तण्डुलदान, वार दोष में मणिदान, तारादुष्ट होनेपर लवणदान, राशिदोषमें गोदान, और जन्मादि नाडी दूषित होनेपर उसके प्रती-कारार्थ ब्राह्मणको विशुद्ध सुवर्णदान करना चाहिये४४॥

वारवेला।

कृतमुनियमशरमङ्गलरामत्तुंबुभास्करादि यामार्द्धे ।
प्रभवति हि वारवेला न शुभा शुभकार्यकरणाय४५॥

वारवेला कथित होतीहै। अष्टधा विभक्तादिनके एक एक भागको यामार्द्ध कहा जाता है। रविवारमें चतुर्थ यामार्द्धं वारवेला होतीहै अर्थात् डेढपहरके पीछे एक यामार्द्ध वारवेला होती है। इसीप्रकार सोमवारमें सप्तम यामार्द्ध, मंगलवारमें द्वितीय यामार्द्ध, बुधवारमें पंचम यामार्द्ध। बृहस्पतिवारमें अष्टमयामार्द्ध, शुक्रवारमें तृतीययामार्द्ध, और शनिवारमें षष्ठयामार्द्ध, अर्थात् ढाईपहरके पीछे एकयामार्द्ध वारवेला होतीहै, इन समस्त वारवेलामें शुभाशुभ कोई कार्य नहीं करना चाहिये ॥ ४५ ॥

कालवेला।

कालस्य वेला रवितः शराक्षी कालानलागाम्बु-

धयो गजेन्द्र। दिने निशायामृतुवेदनेत्रनगेषु रामा विधुदन्तिनौ च ॥ ४६ ॥

कालवेला वर्णित होती है। रविवारमें पंचमयामार्द्ध, कालवेला होती है इसीप्रकार सोमवारमें द्वितीययामार्द्ध मंगलवारमें षष्ठयामार्द्ध, बुधवारमें तृतीययामार्द्ध, बृहस्पतिवारमें सप्तमयामार्द्ध, शुक्रवारमें चतुर्थयामार्द्ध, और शनिवारमें प्रथमयामार्द्ध, कालवेला होती हैं। यह सब कालवेला दिनमें होती है। रात्रिके समय रविवारमें षष्ठयामार्द्ध, कालरात्रि, सोमवारमें चतुर्थयामार्द्ध, कालरात्रि, मंगलवारमें द्वितीययामार्द्ध कालरात्रि, बुधवारमें सप्तमयामार्द्ध कालरात्रि, बृहस्पतिवारमें पंचमयामार्द्ध कालरात्रि, शुक्रवारमें तृतीययामार्द्ध कालरात्रि, और शनिवारमें रात्रिमें प्रथमयामार्द्ध तथा अष्टमयामार्द्ध कालरात्रि होती है ॥ ४६ ॥

कालवेलायास्त्याज्यताकथनम्।

यात्रायां मरणं काले वैधव्यं पाणिपीडने। व्रते ब्रह्मवधः प्रोक्तः सर्व्वकर्मसु तं त्यजेत् ॥ ४७ ॥ ❀

कालवेलाका फल कथित होता है कालवेलामें यात्रा करनेसे करनेवालेकी मृत्यु होतीहै। विवाहमें स्त्री विधवा होती है, और उपनयन ( जनेऊ ) होनेपरब्रह्मवधका पाप होता है, अतएव कालवेलामेंसमस्तकार्य परित्याग करे ॥ ४७ ॥

दिवसस्य पञ्चदशमुहूर्त्ताधिपनक्षत्रकथनम्।

शिवभुजगमित्रपितृवसुजलविश्वविरिञ्चिपंकजप्रभवाः। इन्द्राग्नींद्रनिशाचरवरुणार्य्यमयोनयश्चाह्नि ॥ ४८ ॥

---

❀ इदममूलतया प्रतिभाति।

दिवामें पन्द्रह मुहूर्त्तके अधिपतिनक्षत्र कथित होते हैं । दिनमानको पन्द्रहभागमें विभक्तकरनेसे शेषके एकएक भागका नाम मुहूर्त्त है । पहिले मुहूर्त्तका अधिपति आर्द्रा नक्षत्र होता है, इसीप्रकार दूसरे मुहूर्त्तका अधिपति आश्लेषा नक्षत्र, तीसरे मुहूर्त्तका अधिपति अनुराधा नक्षत्र, चौथे मुहूर्त्तका अधिपति मघा नक्षत्र, पांचवें मुहूर्त्तका अधिपति धनिष्ठा नक्षत्र, छठें मुहूर्त्तका अधिपति पूर्वाषाढा नक्षत्र, सातवें मुहूर्त्तका अधिपति उत्तराषाढनक्षत्र आठवें मुहूर्त्तका अधिपति अभिजित् नक्षत्र, नवमुहूर्त्तका अधिपति रोहिणी नक्षत्र, दशवें मुहूर्त्तका अधिपति विशाखा नक्षत्र, ग्यारहवें मुहूर्त्तका अधिपति ज्येष्ठा नक्षत्र, बारहवें मुहूर्त्तका अधिपति मूलनक्षत्र, तेरहवें मुहूर्त्तका अधिपति शतभिषा नक्षत्र, चौदहवें मुहूर्त्तका अधिपति उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र, और पन्द्रहवें मुहूर्त्तका अधिपति पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र होता है ॥ ४८ ॥

रात्रेःपञ्चदशमुहूर्त्ताधिपनक्षत्रकथनम् ।

रुद्रोऽजोऽहिर्बुध्न्यः पूषदस्रान्तकाग्निधातारः । इन्द्रदितिहरिगुरुरवित्वष्टृनिलाख्याः क्षमा रात्रौ ॥ ४९ ॥

रात्रिमुहूर्त्तके अधिपति नक्षत्र कथित होते हैं । रात्रिमानकोभी पंद्रहभागमें विभक्तकरनेसे एक एक भागका नाम मुहूर्त्त है । रात्रिमें पहिले मुहूर्त्तका अधिपति आर्द्रा नक्षत्र, दूसरे मुहूर्त्तका अधिपति पूर्वाभाद्रपदनक्षत्र, तीसरे मुहूर्त्तका अधिपति उत्तराभाद्रपद नक्षत्र, चौथे मुहूर्त्तका अधिपति रेवती नक्षत्र, पांचवें मुहूर्त्तका अधिपति अश्विनी नक्षत्र, छठे मुहूर्त्तका अधिपति भरणी नक्षत्र, सातवें मुहूर्त्तका अधिपति कृत्तिका नक्षत्र, आठवें

मुहूर्त्तका अधिपति रोहिणी नक्षत्र, नवें मुहूर्त्तका अधिपति मृगशिरानक्षत्र, दशवें मुहूर्त्तका अधिपति पुनर्वसु नक्षत्र, ग्यारहवें मुहूर्त्तका अधिपति श्रवणनक्षत्र, बारहवें मुहूर्त्तका अधिपति पुष्यनक्षत्र, तेरहवें मुहूर्त्तका अधिपति हस्तनक्षत्र, चौदहवें मुहूर्त्तका अधिपति चित्रानक्षत्र और पन्द्रहवें मुहूर्त्तका अधिपति स्वातीनक्षत्र होता है ॥ ४९ ॥

मुहूर्त्तसंज्ञा।

अह्नः पंचदशांशो रात्रेश्चैवं मुहूर्त इति संज्ञा। नक्षत्रे यद्विहितं तत्कार्यं तन्मुहूर्तेऽपि ॥ ५० ॥ इति महिन्तापनीयश्रीश्रीनिवासविरचितायां शुद्धिदीपिकायां वारादिनिर्णयो नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

दिनमानको पन्द्रहभागमें विभक्तकरनेसे उसके एक एक भागका नाम मुहूर्त्त है। रात्रिमानकोभी पन्द्रहभागमें विभक्तकरनेसे एकएकभागको मुहूर्त्तकहा जाता है, जिसनक्षत्रमें जो कार्य्य विहित हैं, वह उस नक्षत्रके मुहूर्त्तमें भी किया जासकताहै ॥ ५० ॥ इति श्रीभाषाटीकायां वारादिनिर्णयो नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

---

## पंचमोऽध्यायः।

सौम्यादीनां स्थानविशेषादिशुभाशुभकथनम्।

सर्वत्र कार्यं बुधजीवशुक्राः केन्द्रत्रिकोणोपगताः प्रशस्ताः। तृतीयलाभारिगताश्च पापास्तिथिर्विरिक्ता शुभदस्य चाहः ॥ १ ॥

साधारणकार्यमें सौम्यादिग्रहोंके स्थान विशेषमें शुभाशुभ कथित होता है । कर्मकालीन लग्नमें और लग्नके चौथे, सातवें, वा दशवें स्थानमें बुध, बृहस्पति और शुक्र ग्रहके स्थित होनेपर तीसरे, ग्यारहवें, और छठे, स्थानमें पापग्रह होनेपर रिक्ताके अतिरिक्त तिथिमें और शुभग्रहके वारमें प्रायः समस्त कार्यही प्रशस्त ( शुभ ) होते हैं ॥ १ ॥

चन्द्राद्यशुभकथनम् ।

इन्दुद्दमगान् पापान् वर्ज्जयेन्निधनं विलग्नस्य।चन्द्रं च निधनसंस्थं सर्वारम्भप्रयोगेषु ॥ २ ॥

समस्त कार्योंमें ही चन्द्रगत पापग्रह और लग्नगत, पापग्रह त्यागना चाहिये और चन्द्र तथा लग्नके अष्टम स्थित पापग्रहभी त्यागने योग्य हैं ॥ २ ॥

निरंशादिवर्ज्जनम् ।

निरंशं दिवसं विष्टिं व्यतीपातंच वैधृतिम्।केन्द्रं चापि शुभैः शून्यं पापाहमपि वर्ज्जयेत् ॥ ३ ॥

निरंश अर्थात रवि-संक्रान्तिदिन, विष्टि ( भद्रा ) व्यतीपात और वैधृतियोग और केंद्रमें शुभग्रह न होनेपर वह लग्न, और पापग्रहका वार, यह प्रायः समस्त कार्योंमेंही त्यागना चाहिये ॥ ३ ॥

कालाशुद्धिकथनम् ।

गुर्वादित्ये गुरौ सिंहे नष्टे शुक्रे मलिम्लुचे ।
याम्यायने हरौ सुप्ते सर्वकर्माणि वर्ज्जयेत् ॥ ४ ॥

अनन्तरकालाशुद्धिकथित होतीहै। बृहस्पति और रवि एकनक्षत्रमें जाकर एकराशिमें स्थिति करैं अथवा भिन्ननक्षत्रमें रहकरभी एकराशिमें स्थितहों, तो गुर्वादित्य योग होता है। उक्तयोग होनेपर, बृहस्पतिके सिंहराशिमें होनेपर शुक्र वृद्ध सन्ध्यागत अस्त वा बाल्यागत ( बाल्यभावको प्राप्त हुआ ) होनेपर एवं मलमास, दक्षिणायन और हरिशयनमें समस्तकाम्यकर्म परित्याग करै ॥ ४ ॥

उद्वाहाद्यशुद्धिः।

अनिष्टे त्रिविधोत्पाते सिंहिकासूनुदर्शने।
सप्तरात्रं न कुर्व्वीत यात्रोद्वाहादिमङ्गलम् ॥ ५ ॥

दिव्य भौम और आन्तरिक्ष इस त्रिविध उत्पातमें तथा ग्रहण होनेपर सातदिनतक यात्रा अथवा विवाहादि मंगलकार्य न करै ॥ ५ ॥

जीवातिचारादिषु व्रतोद्वाहनिषेधः।

अतिचारं गते जीवे वक्रे चास्तमुपागते।
व्रतोद्वाहौ न कुर्व्वीत जायते मरणं ध्रुवम् ॥ ६ ॥

बृहस्पतिके अतिचारी होनेपर, वक्रगमन करनेपर अथवा अस्तादि होनेपर उपनयन और विवाहादि कार्य न करै यदि कोई उक्त सब कार्य करेगा, तो मृत्यु फल होगा, इसमें सन्देह नहीं ॥ ६ ॥

जीवातिचारापवादः।

त्रिकोणजायाधनलाभराशौ वक्रातिचारेण गुरुः प्रयातः। यदा तदा प्राह शुभे विलग्ने हिताय पाणिग्रहणं वसिष्ठः ॥ ७ ॥

बृहस्पतिके वक्रातिचारसम्बन्धमें प्रतिप्रसवकथित होता है। बृहस्पति वक्री अथवा अतिचारी होकर यदि कर्म कर्त्ताकी नवीं, पांचवीं, सातवीं, दूसरी वा ग्यारहवीं राशिमें स्थित हों, तो शुभ लग्नमें विवाह होसकता है। वसिष्ठमुनिने कहा है। यह विवाह मंगलदायक होगा॥७॥

यामित्रवेधः।

रविमन्दकुजाक्रान्तमृगाङ्कात्सप्तमं त्यजेत्।
विवाहयात्राचूडासु गृहकर्मप्रवेशने ॥ ८ ॥

यामित्रवेधकथित होता है। चंद्र जिस राशिमें स्थित है, उसस्थानसे सातवीं राशिमें यदि रवि शनि वा मंगल वास करे तो यामित्र वेध होता है, इसमें चूडा, विवाह, गृहारम्भ और गृहप्रवेश नहीं करसकता ॥ ८ ॥

विद्धनक्षत्रवर्ज्जनम्।

कर्णवेधे विवाहे च व्रते पुंसवने तथा।
प्राशने चाद्य चूडायां विद्धमृक्षं विवर्ज्जयेत् ॥ ९ ॥

विद्धनक्षत्रवर्जन कथित होता है। कर्णवेध ( कर्णछेदन ) विवाह, उपनयन ( जनेऊ ), पुंसवन, अन्नप्राशन और चूडाकार्यमें विद्धनक्षत्र त्यागकरै अर्थात उक्त सब कार्योंमें दशयोगभंगका विचार करना चाहिये। दशयोगभंगका नामान्तर खर्ज्जूरवेध है ॥ ९ ॥

खर्ज्जूरवेधः।

तिथ्यंगवेदैकदशोनविंशमैकादशाष्टादशविंशसंख्या।
इष्टोडुना सूर्य्ययुतोडुनाच योगादमूश्चेद्दशयोग-
भङ्गः॥ १० ॥

खर्जूरवेधकी प्रणाली कथित होतीहै। कर्मकालीन नक्षत्रके सहित रवि भुज्यमान नक्षत्रके योग करनेसे यदि पन्द्रह, छय, चार, एक, दश, उन्नीस, ग्यारह, अठारह, वा वीश, इस सब संख्यामें जो कोई अंक हो खर्जूरवेध होगा। सत्ताइसके अधिक होनेसे खर्जूरवेध देखना चाहिये ॥ १० ॥

विद्धनक्षत्रपादवर्जनम्।

आद्यपादे स्थिते सूर्ये तुरीयांशः प्रदुष्यति।
द्वितीयस्थे तृतीयस्तु विपरीतमतोऽन्यथा ॥ ११ ॥

खर्जूरवेधका प्रतिप्रसव कथित होताहै। रवि यदि नक्षत्रके आद्यपादमें स्थित हों, तो कर्मकालीन नक्षत्रके चतुर्थपाद और द्वितीयपादमें होनेसे तृतीयपाद दुष्ट होगा और यदि चतुर्थपादमें रवि हों, तो प्रथमपाद और तृतीय पादमें होनेसे द्वितीयपाद दूषणीय होगा ११

सप्तशलाकावेधः।

कृत्तिकादिचतुःसप्तरेखा राशौ परिभ्रमन्।
ग्रहश्चेदेकरेखास्थो वेधः सप्तशलाकजः ॥ १२ ॥

अनन्तर सप्तशलाकावेध वर्णित होताहै। कृत्तिकादि अट्ठाईस रेखामें चन्द्र सदाही भ्रमण करताहै, किन्तु चन्द्रातिरिक्त ग्रह यदि कर्मकालीन नक्षत्रमें वा उसके सहित वेधनक्षत्रमें स्थित हों तो सप्तशलाकवेध होताहै १२

अभिजिन्नक्षत्रनिर्णयोऽभिजिद्रोहिण्योरन्योऽन्यवेधनिर्णयश्च।

वैश्वस्य चतुर्थेऽशे श्रवणादौ लिप्तिका चतुष्के च।
अभिजित्तु खेचरे विज्ञेया रोहिणी सहिता ॥ १३ ॥

उत्तराषाढनक्षत्रके शेष चतुर्थांश और श्रवणके आद्य चार दण्डका नाम अभिजित् है। इस अभिजित्नक्षत्रमें ग्रह होनेसे रोहिणीनक्षत्रके सहित वेध हुआ जाने ॥१३॥

सप्तशलाकवेधे विवाहनिषेधः।

यस्याः शशी सप्तशलाकभिन्नः पापैरपापैरथवा विवाहे। रक्तांशुकेनैव तु रोदमाना श्मशानभूमिं प्रमदा प्रयाति ॥ १४ ॥

विवाहकालीन सप्तशलाकचक्रमें चन्द्रके संग पापग्रहका अथवा शुभग्रहका वेध होनेसे वह कन्या विवाहके रक्तवस्त्र पहरतेही रोतीहुई श्मशानभूमिमें जातीहै अर्थात विधवा होतीहै ॥ १४ ॥

कन्यालक्षणम्।

अव्यंगांगीं सौम्यनाम्नीं हंसवारणगामिनीम्।
तनुलोमकेशदशनां मृद्वंगीमुद्वहेत्स्त्रियम् ॥ १५ ॥

अब कन्याके लक्षण कहतेहैं। अविकलांगी, शुभनामिका ( शुभनामवाली ) हंस और हाथीकी समान गतियुक्त और जिसके रोम केश तथा दांत अत्यन्त सूक्ष्म हैं, ऐसी कोमलांगी कन्यासे विवाह करै ॥ १५ ॥

विवाहप्रश्नसमये वादित्रादिरवश्रवणेन वृषादिदर्शनेन च दम्पत्योः शुभकथनम्।

वादित्रवेदध्वनिदन्तिनादः सशंखवीणाध्वनितूर्य्यघोषः। वृषध्वजच्छत्ररथेभशंखपद्मानि चेत्तत्र शुभं तदानीम् ॥ १६ ॥

विवाह प्रश्न द्वारा दम्पतिका शुभाशुभ कथित होताहै नृत्य, गीत, वाद्य ध्वनि, वेदनाद, हस्तिरव, शंख और वीणाध्वनि अथवा तूर्यघोषके समय विवाह विषयक प्रश्न होनेपर अथवा विवाहके प्रश्न; समयमें वृष, ध्वज, छत्र, रथ, हाथी, शंख और पद्म, निकट उपस्थित होनेसे उस विवाहमें दम्पतिका मंगल होताहै ॥ १६ ॥

विवाहप्रश्नसमये कुक्कुरादिरवश्रवणेन वरस्य व्याध्याद्यशुभकथनम् ।

श्वाजाविकोलूकशृगालकानां नादो यदि स्यान्महिषोष्ट्रयोर्वा । व्याधिप्रवासक्षयवैरिशोका वाच्या स्तदानीं पुरुषस्य तस्य ॥ १७ ॥

विवाह प्रश्नसमयमें यदि कूकर ( कुत्ता ) छाग, मेष, उल्लू, गीदड, महिष, वा ऊंटका शब्द सुनाई दे, तो उस विवाहमें वरको रोग, प्रवास ( परदेश ), शत्रुभय, और शोक प्राप्त होता है ॥ १७ ॥

विवाहप्रश्नसमये कन्यायाः कृकलासादिस्पर्शनेन कुलटात्वनिर्देशः शय्यादिभंगेन वैधव्यादिनिर्देशश्च ।

संश्लेषणंचेत्सरटप्लवंगखरोरगाणां कुलटा तदा-स्यात् । शय्योदकुम्भासनपादुकानां भंगे तु वाच्या विधवांगनैव ॥ १८ ॥

विवाहके प्रश्नसमयमें यदि कृकलास (छुट्टमडई), वानर, गधे और सर्पसे अंगस्पर्श हो तो विवाहिता कन्या कुलटा होती है और शय्या जलका घडा आसन और पादुका विवाहके प्रश्नसमयमें टूटजानेपर विवाहिताकन्या विधवा होतीहै ॥ १८ ॥

विवाहप्रश्नसमये कन्याया जन्मराश्यादिभिर्दम्पत्योः शुभकथनम्।

स्वर्क्षं स्वलग्नञ्च तयोश्च नाथौ तयोस्त्रिषष्ठायगृहं यदि स्यात्। नवांशको वा सशुभं नृभं वा प्रश्नोदये स्यात्कुशलं तदानीम्॥ १९॥

विवाहप्रश्नकालमें कन्याकी जन्मराशि अथवा जन्मलग्न यदि प्रश्नलग्न हो तो विवाहमें दोनोंको शुभ होगा। कन्याकी जन्मराशिका अधिपति ग्रह अथवा कन्याके जन्मलग्नका अधिपति ग्रह प्रश्नलग्नमें अवस्थान करनेपर भी विवाहमें दम्पतिका मंगल होताहै। कन्याकी जन्मराशि वा जन्मलग्नका तीसरा, छठा, और ग्यारहवां स्थान प्रश्नलग्न हो, तोभी विवाहमें शुभ होगा। कन्याकी जन्मराशि वा जन्मलग्नका नवांशाधिपतिभी यदि प्रश्नलग्नका अधिपति हो, तोभी शुभ होगा। नृभ अर्थात् नरराशि अर्थात मिथुन, तुला, कुंभ, कन्या और धनुका पूर्वार्द्ध प्रश्नलग्न होनेपर भी उस विवाहमें दम्पतिका मंगल होता है॥ १९॥

प्रश्नलग्नाद्गुरुदृष्ट्यादिस्थचन्द्रेण दम्पत्योः सम्पत्ति कथनम्।

त्रिपञ्चायदशास्तेषु प्रश्नलग्नान्निशाकरः। सम्पत्करस्तु दम्पत्योर्गुरुणा यदि वीक्षितः॥ २०॥

विवाह प्रश्नकालमें प्रश्नलग्नके तीसरे पांचवें, ग्यारहवें, दशवें, अथवा सातवें स्थानमें चन्द्रग्रह होनेसे और बृहस्पतिग्रहके उक्त चन्द्रको देखनेसे विवाहमें दम्पतिका मंगल होता है॥ २०॥

प्रश्नोदयादष्टमादिस्थचन्द्रादिभिर्वैधव्यकथनं तत्कालनिर्णयश्च।

प्रश्नोदयाच्छशधरः परिणेतुरेव वर्षेऽष्टमे निधनदो निधनारिसंस्थः। वर्षेषु सप्तसुमदोदयगौ च पापौ मासेऽष्टके शशिकुजावुदयास्तसंस्थौ ॥ २१ ॥

विवाह प्रश्नकालमें प्रश्नलग्नके आठवें वा छठे स्थानमें चन्द्रग्रह होनेसे परिणेता ( पति ) की विवाहके पीछे अष्टवर्षमें मृत्यु होतीहै। विवाहप्रश्नलग्नमें और उसके सातवें स्थानमें पापग्रह होनेसे सप्तमवर्षमें वरकी मृत्यु होतीहै। यदि प्रश्नलग्नमें चन्द्रग्रह और उसके सातवें स्थानमें मंगलग्रह हो तो आठवें महीनेमें परिणेता ( पति ) की मृत्यु होगी ॥ २१ ॥

प्रश्नलग्नात्सप्तमस्थभौमादिभिः कन्याया मरणादिकथनम्।

जामित्रसंस्थे म्रियते महीजे प्रजाविहीना कुलटा च सूर्ये। सुरारिपूज्ये रजनीकरे वा कन्याऽन्यरक्ता पतिघातिनी च ॥ २२ ॥

विवाहप्रश्नकालमें प्रश्नलग्नके सातवें स्थानमें मंगल ग्रह होनेसे विवाहमें उस कन्याकी मृत्यु होतीहै। प्रश्नलग्नके सातवें स्थानमें रविग्रह होनेसे कन्या कुलटा और सन्तानहीन होतीहै। और यदि रविग्रह लग्नमें स्थितहो, तो कन्या कुलटा होतीहै। चन्द्र और शुक्र प्रश्नलग्नके सातवें स्थानमें होनेसे विवाहिता कन्या परपुरुषगामिनी और पतिघातिनी होतीहैं ॥ २२ ॥

### एकराश्यादिमेलकानां शुभफलकथनम्।

एकराशौ च दम्पत्योः शुभं स्यात्समसप्तके। चतुर्थे दशके चैव तृतीयैकादशे तथा ॥ २३ ॥ (१)

अब योटकशुद्धि कथित होतीहै। योटक (षडष्टकादि) गणनासे स्त्री पुरुषकी एकराशि होनेपर शुभ होताहै। अभिन्न नक्षत्र होकर एकराशि होनेपर अतिशय शुभ होता है। और वरकी राशिसे कन्याकी राशि अथवा कन्याकी राशिसे वरकी राशि यदि समसप्तक अर्थात् समराशि होकर सप्तम हो तो शुभदायक होगी। दोनों की राशि परस्परगणनासे यदि चौथी, दशवीं, तीसरी वा ग्यारहवीं हो तो शुभ है। इस वचनसे योटकको राज योटक कहा जाताहै ॥ २३ ॥

### नाडीषडष्टकादिमेलकानामशुभकथनम्।

मरणं नाडीयोगे कलहः षट्काष्टके विपत्तिर्वा। अनपत्यता त्रिकोणे द्विर्द्वादशे च दारिद्र्यम् ॥ २४ ॥

अशुभ योटक वर्णित होताहै। योटकगणनासे वर और कन्याका नाडीवेध होनेपर विवाहमें मृत्यु होती है। षड ष्टकयोगमें कलह और मरण होता है अर्थात् मित्रषडष्टक में (२) विवाह होनेपर कलह और अरिषडष्टक

---

(१) नक्षत्रमेकं यदि भिन्नराशिर्न दम्पती तत्र सुखं लभेताम्। अभिन्नराशिर्यदि चैकमृक्षं कार्यो विवाहो बहुसौख्यदाता ॥ १ ॥ एकर्क्षा च यदा कन्या राश्येका च यदा भवेत्। धनपुत्रवती साध्वी भर्ता च चिरजीवकः ॥ इति क्वचित् पुस्तके मूलम् ॥

(२) मकर, मिथुन, कन्या, कुंभ, सिंह,मीन, वृष, तुला, वृश्चिक, मेष एवं कर्क और धनु, इन सब षडष्टकका नाम मित्रषडष्टक है।

में ( १ ) विवाह होनेपर मृत्यु होतीहै । नवमपंचकयोगमें विवाह होनेपर अनपत्यता ( सन्तानहीनता ) दोष उत्पन्न होताहै और द्विर्द्वादशयोगमें विवाह होनेपर दरिद्र होताहै ॥ २४ ॥

द्विर्द्वादशनवपञ्चकयोरपवादः ।

पुंसो गृहात्सुतगृहे सुतहा च कन्या धर्मे स्थिता सुतवती पतिवल्लभा च। द्विर्द्वादशे धनगृहे धनहा च कन्या रिष्फे स्थिता धनवती पतिवल्लभा च॥२५॥

द्विर्द्वादशक और नवपंचक दोषका अपवाद कथित होताहै। यदि वरकी राशिसे कन्याकी राशि पांचवी हो, तो वह विवाहिता कन्या मृतपुत्रवाली होतीहै ( अर्थात् गर्भसे मृतकसन्तानकी उत्पन्न करनेवाली ) और अन्य राशिकी अपेक्षा कन्याकी राशि नवम होनेपर विवाहिता कन्या पुत्रवती और पतिको प्यारी होतीहै । द्विर्द्वादशगणनासे पुरुषकी राशिसे कन्याकी राशि दूसरी होनेपर कन्या धनक्षयकरनेवाली होतीहै।वरकी राशिकी अपेक्षा कन्याकी राशि बारहवीं होनेपर वह विवाहिता कन्या धनवती और पतिप्रिया होतीहै ॥ २५ ॥

अन्यच्च ।

एकाधिपत्यं भवनेशमैत्रं वश्यं यदि स्यादुभयोर्कुशुद्धौ । द्विर्द्वादशे वा नवपञ्चमे वा कार्य्यो विवाहो न षडष्टके तु ॥ २६ ॥

---

( १ ) मकर, सिंह, कन्या, मेष, मीन, तुला, कर्क, कुंभ, वृष, धन एवं वृश्चिक और मिथुन, इन सब षडष्टकको अरिषडष्टक कहतेहैं । यदि कन्याकी जन्मराशिके आठवें स्थानमें वरकी जन्मराशि और वरकी जन्मराशिके छठे स्थानमें कन्या की जन्मराशि हो तो यह षडष्टक अत्यन्त निन्दित होगा । अधिकतर उक्त षडष्टकदेवताओंकोभी त्यागना योग्य है ॥

द्विर्द्वादश और नवपंचकादि दोषका अपवादान्तर कथित होताहै । यदि वर और कन्याकी राशिका अधिपति एकग्रह हो वा परस्परकी मित्रता हो अथवा दोनों राशिमें एकराशि अन्यके वश्य हो वा एकके नक्षत्रसे गणनामें अन्यका नक्षत्र शुद्ध हो तो द्विर्द्वादश वा नवपंचक होनेपरभी विवाह होसकताहै किन्तु षडष्टकमें विवाह निषिद्ध है ॥ २६ ॥

भ्रमप्रमादोत्पन्नषडष्टकादिमेलकप्रतीकारः ।

षट्काष्टके गोमिथुनं प्रदेयं कांस्यं सरूप्यं नवपंचके तु । द्विर्द्वादशाख्ये कनकान्नताम्रं विप्रार्चनं हेम च नाडिदोषे ॥ २७ ॥

भ्रमप्रमादोत्पन्नषडष्टकादिदोषका प्रतीकार कथित होताहै । भ्रम वा प्रमादवश यदि कदाचित् षडष्टकादियोगमें विवाह हो, तो उस दोषकी शान्तिके लिये दान करै । षडष्टकयोगमें गोयुग्म ( गौ और बली बैल ) दानकरना चाहिये । इसप्रकार नवपंचकमें चांदीके सहित कांसीका पात्र, द्विर्द्वादशमें कंचन, तण्डुल ताम्र दान और नाडीदोषमें विप्रार्चन तथा कांचनदान करै ॥ २७ ॥

वरणादिषु वैवाहिकातिथिनक्षत्रादिभिः शुद्धिग्रहण-प्रतिपादनम् ।

वरणप्रदानपरिणयशचीपरिकर्माभिषेककर्म्माणि । शुभे तिथौ विलग्ने न भवन्ति किलाल्पपुण्यानाम् ॥ २८ ॥

वरण ( विवाहके पहिले वरकी अर्चना ) प्रदान ( कन्यादान ) परिणय ( पाणिग्रहण ) शचीपरिकर्म ( शचीपूजा ) अभिषेककर्म ( विवाहार्थ उद्वर्त्तनादि ) इन समस्त कर्मोंका अल्प पुण्य मनुष्यके पक्षमें शुभतिथि और शुभलग्नमें निर्वाह होना संभव नहीं है, किन्तु भाग्यवान् मनुष्यकोही शुभतिथि और शुभ लग्नादिउपस्थित होतीहैं ॥ २८ ॥

हस्तोदकविधिः ।

सुरभिकुसुमगन्धैरर्चयित्वा द्विजेन्द्रान् शुभतिथिदिवसर्क्षे दैववित्संप्रदिष्टे । उभयकुलविशुद्धे ज्ञातशीले सुरूपे प्रथमवयसि दद्यात्कन्यकां यौवनस्थे ॥ २९ ॥

अब कन्याके वाग्दानकी विधि कथित होतीहै। सुगन्धि पुष्प और चन्दनद्वारा ब्राह्मणकी पूजा करके दैवज्ञादिष्ट ( ज्योतिषीके बताएहुए ) शुभतिथि और शुभ नक्षत्र दिनमें, दोनों कुल विशुद्ध और ज्ञातशील रूपवान् और युवा, ऐसे पात्रको कन्यादान अर्थात् वाग्दान करै ॥ २९ ॥

विवाहे पुरुषस्य सूर्यात्मकत्वात रविशुद्धेः कन्यायाः सोमात्मकत्वात् चन्द्रशुद्धेश्चावश्यकर्त्तव्यताकथनम्।

गोचरशुद्धाविन्दुं कन्याया यत्नतः शुभं वीक्ष्य। तीग्मकिरणञ्च पुंसः शेषैरबलैरपि विवाहः ॥ ३० ॥

विवाहमें रविशुद्धि और चन्द्रशुद्धिकी आवश्यकता प्रतिपादित होतीहै। विवाहके समय कन्याके गोचरमें चन्द्रशुद्धि होनेपर और पुरुषके गोचरमें रविशुद्धि होने-

पर तथा दोनोंके गोचरमें गुरुशुद्धि होनेपर अन्य शुद्ध न होनेसेभी विवाह होसकताहै, फलतः वर और कन्या दोनोंकीही रवि और चन्द्रशुद्धि देखनी चाहिये। किन्तु विशेष यही हैं कि कन्याकी रविशुद्धि न होनेपर अगत्या ( अपनी राशिसे मध्यम ) रविग्रहकी अर्चनादि प्रती- कार कराकर विवाह करसकताहै, किन्तु चन्द्रशुद्धि न होनेपर कभी विवाह न करै। वरके सम्बन्धमेंभी विशेष यही है कि चन्द्रशुद्धि न होनेपर चन्द्रग्रहकी अर्च- नादि प्रतीकार कराकर विवाह करै। किन्तु रविशुद्धि न होनेपर कभी विवाह न करै॥ ३०॥

वैवाहिकनक्षत्रादिकथनम्।

रेवत्युत्तररोहिणीमृगशिरो मूलानुराधामघाहस्ता-
स्वातिषु तौलिषष्ठमिथुनेषूद्यत्सु पाणिग्रहः। सप्ता-
ष्टान्तबहिःशुभैरुडुपतावेकादशाद्रित्रिगे क्रूरैस्त्र्याय-
षडष्टगैर्न तु भृगौ षष्ठे कुजे चाष्टमे॥ ३१॥

वैवाहिक नक्षत्रादि कथित होते हैं। रेवती, उत्तरा- फाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, मृगशिरा, मूल, अनुराधा, मघा, हस्त, और स्वाती नक्षत्रमें तुला कन्या और मिथुन लग्नमें विवाह प्रशस्त ( शुभ ) होताहै यदि प्रशस्तलग्नके सातवें, आठवें और बारहवें स्थानमें शुभग्रह न हो और लग्नकी अपेक्षा चन्द्र यदि ग्यारहवें, दूसरे वा तीसरे स्थानमें स्थित हो और पापग्रह तीसरे ग्यारहवें, छठे और आठवें, स्थानमें हों, तो शुभदायक होतेहैं, किन्तु लग्नके छठे स्थानमें शुक्र और आठवें स्थान में मंगलग्रह होनेसे निषिद्ध है॥ ३१॥

दम्पत्योर्द्विनवाष्टराशिरहिते दारानुकूले रवौ चन्द्रे चार्ककुजार्किशुक्रवियुते मध्येऽथवा पापयोः। त्यक्त्वा च व्यतिपातवैधृतिदिनं विष्टिं च रिक्तां तिथिं क्रूराहायनचैत्रपौषरहिते लग्नांशके मानुपे ॥ ३२ ॥

दम्पतीका अर्थात् वर और कन्याका द्विर्द्वादशक, नव पंचक, और षडष्टकादि दोष न होनेपर, वरकी रविशुद्धि और कन्याकी चन्द्रशुद्धि होनेपर एवं रवि, मंगल, शनि और शुक्रके सहित युक्त चन्द्र वा दोनों पापमें चन्द्रके स्थित न होनेपर और व्यतीपात तथा वैधृतियोग विष्टि करण, रिक्ता तिथि, पापग्रहका वार दक्षिणायन चैत्र और पौष मास त्यागकर द्विपदलग्नके नवांशमें विवाह श्रेष्ठ होताहै ॥ ३२ ॥

वैवाहिकनक्षत्राणां गण्डपादवर्ज्जनम्।

आद्ये मघा चतुर्भागे नक्रतस्याद्य एव च।
रेवत्यन्तचतुर्भागे विवाहः प्राणनाशकः ॥ ३३ ॥

विवाहमें विहितनक्षत्र मघा मूल और रेवतीके संबंधमें विशेष कथित होताहै, यथाः—मघानक्षत्र और मूलनक्षत्रके प्रथमपादमें एवं रेवतीनक्षत्रके शेष पादमें विवाह होनेसे प्राणनाश होताहै, इसकारण मघा और मूलनक्षत्रका आद्यपाद और रेवतीनक्षत्रका अन्त ( शेष ) पाद त्यागकर विवाह करें ॥ ३३ ॥

कन्यादिलग्नस्य नवांशस्योत्कर्षकथनम्।

कन्यातुलाभृन्मिथुनेषु साध्वी शेषेष्वसाध्वी धनवर्जिता च। निंद्येऽपि लग्ने द्विपदांश इष्टः कन्यादिलग्नेष्वपि नान्यभागः ॥ ३४ ॥

कन्या, तुला और मिथुनलग्नमें विवाहिता कन्या साध्वी होतीहै । वृश्चिक, धनु, मकर, कुंभ, मीन, मेष, वृष, कर्क और सिंह लग्नमें विवाहिता कन्या असाध्वी और धनहीन होतीहै । निन्दित लग्नमें भी कन्या, तुला और मिथुनके नवांशमें विवाह इष्टफलदायक होताहै और कन्या, तुला, मिथुनलग्नमेंभी कन्यादिका नवांशही श्रेष्ठ होताहै ॥ ३४ ॥

स्वस्वामिनिरीक्षितलग्नजामित्रनवांशवशेन दम्पत्योः शुभकथनम् ।

यस्यांशः कल्पिते लग्ने सचेत्स्वाम्यवलोकितः ।
तदा पुंसः शुभं विद्यात्सप्तमांशे ततः स्त्रियाः ॥३५॥

विवाहमें जिसजिसराशिका नवांश उक्त हुआहै, वह वह राशि यदि अपने अपने अधिपति ग्रहसे दृष्ट हो तो विवाहमें पुरुषका शुभ होगा और यदि उस उस नवांश-राशिकी सातवीं राशि अपने अधिपतिसे दृष्ट हो तो कन्याका शुभ होताहै ॥ ३५ ॥

सुतहिबुकयोगः ।

सुतहिबुकवियद्धिलग्नधर्मेष्वमरगुरुर्यदि दानवार्चितो वा । यदशुभमुपयाति तच्छुभत्वं शुभमपि वृद्धिमुपैति तत्प्रभावात् ॥ ३६ ॥

सुतहिबुकादियोग कथित होताहै वैवाहिक लग्नमें वा लग्नके पांचवें, चौथे, दशमें अथवा नवें स्थानमें यदि बृहस्पति वा शुक्र ग्रह स्थितहो, तो लग्नादिमें जो दोष हो, उससबका खण्डन होताहै । विशुद्ध लग्न अधिकतर श्रेष्ठ होताहै ॥ ३६ ॥

गोधूलियोगः।

सन्ध्यातपारुणितपश्चिमदिग्विभागे व्योम्नि स्फुरद्विमलतारकसन्निवेशे। ऊर्द्धं गवां खुरपुटोद्गलितै रजोभिर्गोधूलिरेष कथितो भृगुजेन योगः॥ २७॥

अब गोधूलियोग कथित होताहै। सूर्यकी किरणोंसे पश्चिमदिशा लालवर्ण होनेपर आकाशमण्डलमें जिस-समय समस्त नक्षत्र (तारे) विमलभावसे प्रकाशित होतेहैं, जिससमय गोष्ठसे गायोंके वरजानेमें उद्यत होने-पर खुरपुटोद्गलित (खुरोंके लगनेसे उडीहुई) धूली ऊपरकी ओर उडती है, भृगु मुनिने उसी समयको गोधूलि कहाहै॥ २७॥

गोधूलिप्रशंसा।

नास्मिन्ग्रहा न तिथयो न च विष्टिवारा ऋक्षाणि नैव जनयन्ति कदापि विघ्नम्। अव्याहतः सततमेव विवाहकाले यात्रासु चायमुदितो भृगुजेन योगः॥२८॥

गोधूलिके समय विवाह होनेपर ग्रहशुद्धि, तिथिशुद्धि विष्टि भद्रादोष, वारशुद्धि और नक्षत्रशुद्धि, इनका कुछ विचार करना नहीं होता। क्योंकि गोधूलि योगमें ग्रह, नक्षत्र वा वारादि विघ्न उत्पन्न नहीं करसकते। केवल विवाहकालमेंही गोधूलियोग श्रेष्ठ नहीं है वरन् यात्रा-कालमेंभी गोधूलियोग ग्रहण कराना चाहिये, ऐसा भृगु-मुनिने कहाहै॥ २८॥

गुणबाहुल्यादल्पदोषस्याफलत्वकथनम्।

न सकलगुणसम्पल्लभ्यतेऽल्पैरहोऽभिर्बहुतरगुण-

युक्तं योजयेन्मङ्गलेषु । प्रभवति हि न दोषो भूरिभावे गुणानां सलिललव इवाग्नेः संप्रदीप्तेन्धनस्य ३९

यद्यपि समस्तगुण युक्त दिन प्रायः नहीं मिलता, किन्तु तोभी विवाहादिमंगलकार्यमें वह गुणयुक्त दिनही ग्रहण करै। क्योंकि जलताहुआ काष्ठ जिसप्रकार जलकी बूंदोंके गिरनेसे नहीं बुझसकता, इसीप्रकार बहुगुणयुक्त दिनभी अल्पदोषसे दूषित नहीं होता ॥ ३९ ॥

एकस्याप्यतिमहतो दोषस्याविरोधिगुणबाहुल्येऽपि परित्यागकथनम्।

गुणशतमपि दोषः कश्चिदेकोऽतिवृद्धः क्षपयति यदि नान्यस्तद्विरोधी गुणोऽस्ति। घटमिव परिपूर्णं पंचगव्येन सद्यो मलिनयति सुराया बिन्दुरेकोऽपि सर्व्वम् ॥ ४० ॥

एक भारी दोषसे सैकडों गुण नष्ट होतेहैं, यदि इस दोषका विरोधी कोई गुण न हो जिसप्रकार पंचगव्यसे भराहुआ घडा एक बूंद सुरा ( मदिरा ) मिलनेसे दूषित हो जाताहै ॥ ४० ॥

नववध्वागमनम्।

स्त्रीशुध्याजघटालिसंयुतरवौ काले विशुद्धे भृगुं सन्त्यज्य प्रतिलोमगं शुभदिने यात्राप्रवेशोचिते। त्यक्काहस्तु निरंशकं नवबधूयात्राप्रवेशौ पतिः कुर्य्यादेकपुरादिषु प्रतिभृगौ नेच्छन्ति दोषं बुधाः४१

अब नववध्वागमन ( नवीन बहूका आना ) कथित होता है। स्त्रीकी रवि शुद्धि होनेपर सौर ( संक्रान्तिसे

प्रवृत्त होनेवाले ) वैशाख, फाल्गुन, अगहन मासमें, शुद्ध कालमें ( गुर्वादित्यादि दोषरहित कालमें ) प्रतिशुक्र त्यागकर शुभ दिनमें यात्रोचित नक्षत्रादिमें, संक्रान्ति-विहीन दिनमें, पति नव वधूको यात्रा कराकर गृहप्रवेशो-चित नक्षत्रादिमें गृहप्रवेश करावे। पति यदि एक ग्राममें वा एक वरमें एक घरसे अन्य घरमें अथवा दुर्भिक्षादि आपत्कालमें नववधूका द्विरागमन करावे, तो प्रति शुक्रादि दोष ग्राह्य नहीं होगा ॥ ४१ ॥

बालबन्धः।

ध्रुवमृदुलघुवर्गे विष्णुमूलानिलर्क्षे शनिशशिदिन-
वर्जे गोद्विदेहोदयेषु।उपचयगतपापे सत्सु केन्द्रत्रि
कोणे सुतिथिकरणयोगे वालबन्धः शुभेन्दौ ॥४२॥

विवाहके पीछे प्रथम केश बांधनेका शुभ दिन कथित होता है। उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, पुष्य, अश्विनी, हस्त, श्रवण, मूल और स्वाती नक्षत्रमें शनि और सोमके अतिरिक्त वारमें वृष, मिथुन, कन्या, धनु; और मीन लग्नमें, तीसरे ग्यारहवें छठे और दशवें स्थान में पापग्रह स्थित होनेपर लग्न चौथे सातवें दशमें नवें पांचवें स्थानमें शुभग्रह होनेपर शुभतिथि, शुभकरण और शुभयोगमें चन्द्र शुद्ध होनेपर विवाहके पीछे स्त्रीके प्रथम केश बांधने चाहिये ॥ ४२ ॥

फलबन्धः।

रोहिण्यन्तकचित्राहिविशाखशतवर्जिते। भे पुंग्र-
हाहे स्त्रीषु या फलबन्धनमिष्यते ॥४३॥

स्त्रियोंका प्रथम रजोदर्शन होनेपर ऋतुस्नानके पीछे फलबन्धन किया जाताहै। उसका शुभ दिन कथित होता है रोहिणी, भरणी, चित्रा, आश्लेषा, विशाखा और शतभिषा इन सब नक्षत्रोंके अतिरिक्त नक्षत्रमें मंगल, रवि, और बृहस्पतिवारमें स्त्रीके चन्द्र तारा शुद्ध होनेपर प्रथमऋतुस्नानके पीछे फलबन्धन करै ॥ ४३ ॥

ऋतुनिरूपणम्।

पीडाराशौ भौमदृष्टे शशांके मासं मासं योषितामार्तवं यत्। त्र्यंशे शान्तं यच्च रक्तं जपाभं तद्गर्भार्थं वेदनागन्धहीनम् ॥ ४४ ॥

ऋतु निरूपित होती है। अनुपचयराशिस्थित चन्द्र ग्रह मंगल ग्रहके देखनेपर प्रतिमहीनेमें स्त्रियोंकी जो रजः उत्पन्न होतीहै और जो शोणित तीनदिनमेंही शमन होजाताहै और जिस शोणितका वर्ण जपापुष्पकी समान और वेदना गंधादि विहीन है, उसमें निषेक ( ) करनेसे गर्भसंचार होताहै ॥ ४४ ॥

अथ निषेकः।

पापासंयुतमध्यगेषु दिनकृल्लग्नक्षयास्वामिषु तद्यूनेष्वशुभोज्झितेषु विकुजे छिद्रे विपापे सुखे।सद्युक्तेषु त्रिकोणकण्टकाविधुष्वायात्रिषष्ठान्विते पापे युग्मनिशास्वगण्डसमये पुंशुद्धितः सङ्गमः ॥ ४५ ॥

निषेककथित होताहै। यदि रवि, लग्न और चन्द्र पापग्रह युक्त नहो पापग्रहमें अवस्थिति न करै रवि लग्न और चन्द्रके सातवें स्थानमें पापग्रह न हो आठवां मंगल अथवा चौथा पापग्रहसे युक्त न हो और राशि लग्न एवं

लग्नका पांचवां, नवां, चौथा, सातवां और दशवां स्थान शुभग्रहयुक्त हो और लग्नके ग्यारहवें तीसरे और छठे स्थानमें पापग्रह स्थित हो तो युग्मराशिमें, गण्ड-नक्षत्र त्यागकर पुरुषकी चन्द्र शुद्धि होनेपर गर्भाधान करे ॥ ४५ ॥

गर्भाधानादिमासनाथैर्गर्भस्य शुभाशुभकथनम् ।

मासेशैः सितकुजगुरुरविशशिशनिसौम्यलग्नपश-शीनैः । कलुषैः पीडा गर्भस्य पीडितैः पतनमन्यथा पुष्टिः ॥ ४६ ॥

गर्भमासाधिपतिद्वारा गर्भका शुभाशुभ कथित होताहै गर्भधारणसे प्रसवकालपर्यंत क्रमशः दशमासके अधिपति शुक्र, मंगल, बृहस्पति, रवि, चन्द्र, शनि, बुध निषेक-कालके लग्नाधिपति एवं चन्द्र और रवि निर्दिष्ट हैं अर्थात् पहिले महीनेके अधिपति मंगल, तीसरे मही-नेके अधिपति बृहस्पति, चौथे महीनेके अधिपति रवि, पांचवें महीनेके अधिपति चन्द्र, छठे महीनेके अधिपति शनि, सातवें महीनेके अधिपति बुध, आठवें महीनेके अधिपति निषेकलग्नाधिपति, नवें महीनेके अधिपति चन्द्र और दशवें महीनेके अधिपति रवि ग्रह होतेहैं। उक्त सबमासधिपति ग्रहोंमें यदि कोई ग्रह पापयुक्त हो, तो उसी महीनेमें गर्भकी पीडा होगी और यदि कोई ग्रह अस्तादित्रिविधोत्पात वा उपरागादि द्वारा पीडित हो, तो उसी महीनेमें गर्भपात होनेकी शंका है और यदि कोई ग्रह शुभग्रह युक्त वा शुभग्रहके द्वारा दृष्ट हो तो गर्भ पुष्ट होकर शुभ होताहै ॥ ४६ ॥

अथ पुंसवनम् ।

कुर्यात्पुंसवनं सुयोगकरणे नन्दे सभद्रे तिथौ
भाद्रापाढनृभेश्वरेषु नृदिने वेधं विनेन्दौ शुभे ।
अक्षीणे च त्रिकोणकण्टकगते सौम्येऽशुभे वृद्धिषु
स्त्रीशुध्याघटयुग्मसूर्यगुरुभेषूद्यत्सु मासत्रये॥ ४७ ॥

अब पुंसवन कथित होताहै ।गर्भाधानके दिनसे गणना करके तीसरे महीनेमें, शुभयोग और शुभकरणमें, पड़वा, एकादशी, छठ, दोयज, सप्तमी और द्वादशी तिथिमें, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, पूर्वाषाढा, हस्त, मूल, श्रवण, पुनर्वसु, मृगशिरा, पुष्य और आर्द्रा नक्षत्रमें, रवि, मंगल और बृहस्पतिवारमें, यामित्रवेध और दशायोग भंग न होनेपर शुभचन्द्रमें और पूर्णचन्द्रमें, लग्नके त्रिकोण और केन्द्रस्थानमें शुभग्रह एवं तीसरे ग्यारहवें और छठे स्थानमें अशुभग्रह होनेपर स्त्रीके चन्द्रताराकी अनुकूलतामें कुंभ, मिथुन, सिंह, धनु और मीन लग्नमें पुंसवन करे ॥ ४७ ॥

अथ पञ्चामृतम् ।

रेवत्याश्विपुनर्वसुद्वयमरुन्मूलानुराधामघाहस्तासू-
त्तरफल्गुभेषु च भृगौ जीवार्कवारे तथा । लग्नेचोभ-
यशुद्धिगे सुनियतं संत्यज्य रिक्तां तिथिं देयं मासि
तु पंचमे शुभदिने पंचामृतं योषिताम् ॥ ४८ ॥

---

( १ ) पञ्चामृतं पञ्चममास एव अजद्वये त्वाम्बुनि पितृषट्के । विरञ्चि-पञ्चान्त्यचतुष्टयेषु सूर्य्यारशुक्रेज्यदिने शुभेन्दौ । इति क्वचित् पुस्तके वचनान्तरम् ।

पंचामृत शुभदिन कथित होताहै। रेवती, अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य, स्वाती, मूल, अनुराधा, मघा, हस्त और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें, शुक्र बृहस्पति और रविवारमें, शुभलग्नमें, स्त्रीपुरुषके चन्द्र तारा शुद्ध होनेपर, रिक्ताके अतिरिक्त तिथिमें, गर्भ ग्रहणसे पांचवें महीनेमें, शुभ दिनमें स्त्रीको पंचामृत पान करावै ॥ ४८ ॥

घटीदानम्।

मघाष्टकेऽम्बुत्रितयेऽदितिद्वये पौष्णद्वये धातृयुगे गुरूदये। मासे च षष्ठे च चतुष्टये स्त्रियां शुध्याज्ञमन्दाहवरिर्घटी शुभा ॥ ४९ ॥

घटीदान कथित होताहै। मघा, पूर्वाफाल्गुनी उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, श्रवण, पुनर्वसु, पुष्य, रेवती, अश्विनी, रोहिणी और मृगशिरा नक्षत्रमें, धनु और मीन लग्नमें छठे महीने गर्भसमयमें वा चौथे महीनेमें, स्त्रीके चन्द्र तारा शुद्ध होनेपर बुध और शनिके अतिरिक्त वारमें गर्भरक्षाके निमित्त हरिद्राक्त ग्रन्थियुक्त (हल्दीकी गाँठोंसे युक्त) वस्त्राञ्चल स्त्रीके कङ्कनमें बांध दे। उक्त वस्त्राञ्चलकोही घटी कहाजाताहै ॥ ४९ ॥

अथ सीमन्तोन्नयनम्।

मासेशे प्रबले शुभेक्षितविधौ मासे च षष्ठेऽष्टमे मैत्रे पुंसवनोदितर्क्षसहिते रिक्ताविहीने तिथौ। सीमन्तोन्नयनं मृगाजरहिते लग्ने नवांशोदये योज्यं पुंसवनोदितं यदपरं तत्सर्वमत्रापि च ॥ ५० ॥

सीमन्तोन्नयन कथित होताहै। पूर्वोक्तगर्भ मासाधिपति ग्रहके बलवान् होनेपर और चन्द्र शुभग्रहके द्वारा दृष्ट (अवलोकित) होनेपर, छठे वा आठवें महीनेमें, अनुराधा और पुंसवनोक्तनक्षत्रमें, रिक्ताके अतिरिक्त तिथिमें, मकर और मेषके अतिरिक्त लग्नमें, मिथुन, तुला, कुम्भ, और कन्यालग्नके नवांशमें, पुंसवनोक्त वारादिमें स्त्रीका सीमन्तोन्नयन करावे ॥ ५० ॥ इति भाषाटीकायां विवाहनिर्णयो नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

---

## षष्ठोऽध्यायः।

### जातसंप्रत्ययः।

द्वारं वास्तुनि केन्द्रोपगाद्ग्रहादसति वा विलग्नर्क्षात् । दीपोऽर्कादुदयाद्वर्त्तीरिन्दुतः स्नेहनिर्देशः ॥ १ ॥

जातक निर्णय किया जाताहै। बालकके जन्म समय में केन्द्र (लग्न, लग्नसे चौथे सातवें और दशवें) स्थानमें जो ग्रह हो, वह ग्रह जिस दिशाका अधिपति है, उसी दिशामें सूतिका गृहका द्वार होगा। यदि केन्द्रस्थानमें बहुत ग्रह हों तो उनमें जो ग्रह बलवान् है उसीकी दिशा में सूतिका गृहका द्वार होगा। यदि दो ग्रह समान बली हों तो सूतिका गृहके दो द्वार होंगे और केन्द्रके किसी स्थानमें यदि ग्रह न हो, तो जन्मलग्न जिस दिशाकी अधिपति हो उसी दिशामें सूतिकागृहका द्वार जानना चाहिये। रविकी राशि स्थितिसे दीपज्ञान होगा अर्थात् सूर्य यदि किसी चरराशिमें स्थित हो तो उस राशिकी दिशाके अनुसार उसी दिशामें दीप चलायमान होगा

और सूर्य यदि किसी स्थिर राशिमें स्थित हों तो उसी राशिकी दिशाके अनुसार दीप स्थिरभावसे रहेगा। सूर्य यदि द्व्यात्मक राशिमें वास करें तो उसी राशिकी दिशाके अनुसार दीप संचालित और स्थिरभावसे रहता है लग्नके भोगानुसार दीपककी वत्तीका विचार करना चाहिये। अर्थात् लग्नके जितने अंश भोग हों, उतनीही दीपककी वत्ती जलेगी। दीपकके स्नेह अर्थात् तेल घृतादिका चन्द्रकी क्षीणता और पूर्णतासे विचार करै ॥ १ ॥

जारयोगः।

न लग्नमिन्दुं च गुरुर्निरीक्षते न वा शशाङ्कं रविणा समायुतम्। सपापकोऽर्केण युतोऽथवा शशी परेण जातं प्रवदन्ति निश्चयात् ॥ २ ॥

जारज योग कथित होताहै। यदि जन्मकालीन बृहस्पतिग्रह लग्न और चन्द्रको न देखे, तो वह बालक अन्यसे उत्पन्न होगा और यदि लग्नमें बृहस्पतिकी दृष्टि हो, रवियुक्त चंद्रको वह नहीं देखे तो वह बालक जारज होगा। लग्नमें बृहस्पतिकी दृष्टि हो वा न हो, रवियुक्त चन्द्र यदि अन्य पापग्रहके सहित एक घरमें वास करे तो वह बालक निःसन्देह जारज होगा। यह तीन योग पण्डितोंने कहेहैं ॥ २ ॥

जारजयोगभङ्गः।

गुरुक्षेत्रगते चन्द्रे तद्युक्ते वान्यवेश्मनि।
तद्द्रेष्काणे नवांशे वा जायते न परेण सः ॥ ३ ॥

जारजयोगभङ्ग कथित होताहै। यदि चन्द्र बृहस्पतिके घरमें ( धनु वा मीन राशिमें ) हो तो जारज योगमें बालक उत्पन्न होकरभी जारज नहीं है। और धनुमीनके अतिरिक्त अन्य राशिमें चन्द्रके गुरुयुक्त होनेपर बालक परजात ( दूसरेसे उत्पन्न हुआ ) नहीं होता और बृहस्पतिके द्रेष्काणमें वा बृहस्पतिके नवांशमें चंद्रके होनेपरभी उत्पन्न हुआ बालक जारज नहीं है ॥ ३ ॥

त्रिविधरिष्टकथनम्।

रिष्टं त्रिविधं वदन्ति मुनयो नियतमनियतं च योगजं प्राहुः। योगसमुत्थं तावद्लक्ष्ये पश्चात्तु परिशेषौ॥४॥

अब शिशुरिष्ट कथित होताहै। रिष्ट त्रिविध है नियत, अनियत और योगज यही तीन प्रकारकी रिष्टि मुनियोंने निर्दिष्ट कीहै। नियतारिष्टि आयुर्दायरिष्टि दशान्तर्दशामें, योगजशिशुरिष्टि प्रथम योगजरिष्टका निर्णय करके फिर नियत और अनियतरिष्टका निर्णय करै॥४॥

गण्डयोगकथनम्।

अश्विनीमघमूलानां तिस्रो गण्डाद्यनाडिकाः।
अन्त्ये पौष्णोरगेन्द्राणां पञ्चैव यवना जगुः॥ ५॥

गण्डयोग कथित होताहै। अश्विनी, मघा और मूल, नक्षत्रके प्रथम तीन दण्ड, गण्ड कहे गये हैं और रेवती आश्लेषा एवं ज्येष्ठा नक्षत्रके पांच दण्ड गणनामसे कथित हैं॥ ५॥

गण्डकालकथनम्।

मूलेन्द्रयोर्दिवागण्डो निशायां पितृसर्पयोः।
सन्ध्याद्वये तु विज्ञेयो रेवतीतुरगर्क्षयोः॥ ६॥

मूल और ज्येष्ठा नक्षत्रमें जो गण्ड होताहै उसको दिवागण्ड कहतेहैं, मघा और आश्लेषानक्षत्रके गण्डको निशागण्ड कहा जाताहै, और रेवती तथा अश्विनीनक्षत्रमें जो गण्ड होताहै, उसका नाम सन्ध्यागण्ड है ॥ ६ ॥

गण्डरिष्टफलम्।

सन्ध्यारात्रिदिवाभागे गण्डयोगोद्भवः शिशुः।
आत्मानं मातरं तातं विनिहन्ति यथाक्रमम् ॥ ७ ॥

गण्डरिष्टका फल वर्णित होताहै। सन्ध्याकालमें रेवती और अश्विनीनक्षत्रके गण्डसमयमें उत्पन्न हुआ बालक स्वयं नष्ट होताहै। रात्रिकालमें मघा और आश्लेषानक्षत्रके गण्डमें उत्पन्न हुए बालककी माताका मरण होता है और दिनके समय मूल और ज्येष्ठा, नक्षत्रके गंडमें जिस बालकका जन्म होताहै उसके पिता की मृत्यु होतीहै ॥ ७ ॥

गंडशान्तिः।

कुंकुमं चन्दनं कुष्ठं गोरोचनमथापि वा। घृतेनैवान्वितं कृत्वा चतुर्भिः कलशैर्बुधः ॥ ८ ॥ सहस्राक्षेण मन्त्रेण बालकं स्नापयेत्ततः। पितृयुक्तं दिवा जातं मातृयुक्तं च रात्रिजम्। स्नापयेत्पितृमातृभ्यां सन्ध्ययोरुभयोरपि ॥ ९ ॥ कांस्यपात्रं घृतैः पूर्णं गण्डदोषोपशान्तये। दद्याद्धेनुं सुवर्णं च ग्रहांश्चापि प्रपूजयेत् ॥ १० ॥

गंडदोषकी शान्ति कथित होती है। कुंकुम, चन्दन, कुड ( औषधिविशेष ) गोरोचन और घृत चार कलशमें रखकर उनको जलसे भरदे। फिर इन कलशोंके जलसे

"ओम् सहस्राक्षेण शतशारदेन" इत्यादि मंत्र पढकर दिवागंडमें उत्पन्न हुए बालकको पिताके सहित स्नान करावे। इसीप्रकार निशागण्डमें उत्पन्न हुए बालकको माताके सहित और दोनों संध्याके गण्डमें उत्पन्न हुए बालकको पिता और माताके संग स्नान कराना चाहिये और बँबईकी मिट्टी, नदीके तटकी मिट्टी; गोदन्तोद्धृत-मृत्तिका और हाथीके दांतसे उखडी हुई मिट्टी और पंचगव्यतीर्थ जलमें मिश्रित करके उसके द्वारा माता पिता और बालकको स्नान कराकर घृतसे भरा कांसी का पात्र, धेनु और सुवर्ण दान और ग्रहोंकी पूजा करनेसे गण्डदोष नष्ट होगा ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

सूर्यरिष्टम्।

पापास्त्रिकोणकेन्द्रेषु सौम्याः षष्ठाष्टमव्ययगताश्चेत्।
सूर्योदये प्रसूतः सद्यः प्राणांस्त्यजति जन्तुः ॥११॥

सूर्यरिष्ट कथित होता है। पापग्रह यदि जन्मलग्नके नववें पांचवें वा स्वघरमें अथवा चौथे, सातवें वा दशवें घरमें स्थित हों और शुभग्रह यदि लग्नके छठे आठवें वा बारहवें स्थानमें हों तो सूर्योदयके समय उत्पन्न हुए बालककी तत्काल मृत्यु होगी ॥ ११ ॥

चन्द्रारिष्टम्।

षष्ठेऽष्टमेहि चन्द्रः सद्यो मरणाय पापसंदृष्टः।
अष्टाभिः शुभदृष्टो वर्षैर्मिश्रैस्तदर्द्धेन ॥ १२ ॥

चन्द्ररिष्ट कथित होताहै। जातलग्नके छठे वा आठवें स्थानमें यदि चन्द्र स्थित हो, और यदि इस चन्द्रके प्रति पापग्रहकी दृष्टि हो, तो उत्पन्न हुए बालककी तत्काल

मृत्यु होतीहै और शुभग्रहके द्वारा चन्द्रग्रहके दृष्ट होने-पर आठवर्षमें तथा शुभाशुभग्रहके द्वारा दृष्ट होनेपर चारवर्षमें जातबालककी मृत्यु होतीहै ॥ १२ ॥

चन्द्ररिष्टापवादः।

पक्षे सिते भवति जन्म यदि क्षपायां कृष्णे तथा-हनि शुभाशुभदृष्टमूर्त्तिः। तं चन्द्रमा रिपुवि-नाशगतोऽपि यत्नादापत्सु रक्षति पितेव शिशुं न हन्ति ॥ १३ ॥

चन्द्ररिष्टका अपवाद कथित होताहै। शुक्लपक्षकी रात्रिमें उत्पन्न और कृष्णपक्षके दिनमें उत्पन्न बालकको छठा वा आठवांराशिमें स्थित चन्द्र शुभाशुभ ग्रहके द्वारा दृष्ट होनेपरभी यत्नपूर्वक पिताकी समान रक्षा करता है, कभी अनिष्ट नहीं करता ॥ १३ ॥

पापयुक्तचन्द्ररिष्टम्।

सुतमदननवान्त्यरन्ध्रलग्नेष्वशुभयुतो मरणाय शीतरश्मिः। भृगुसुतशशिपुत्रदेवपूज्यैर्यदि बलि-भिर्न युतोऽवलोकितो वा ॥ १४ ॥

पापयुक्त चन्द्ररिष्ट कथित होताहै। जन्मसमयमें चन्द्र यदि किसी पापग्रहसे युक्त होकर लग्नके पांचवें, सातवें, नवें बारहवें वा आठवें स्थानमें स्थित हो और शुक्र बुध वा बृहस्पति यदि इस चन्द्रको न देखें वा उसके संग युक्त न हों, तो उत्पन्नहुए बालककी मृत्यु होतीहै ॥ १४ ॥

पापमध्यगतचन्द्ररिष्टम्।

द्यूनचतुरस्रसंस्थे पापद्वयमध्यगे शशिनि जातः। विलयं प्रयाति नियतं देवैरपि रक्षितो बालः ॥१५॥

चन्द्रका रिष्टान्तर कथित होताहै । जन्मकालमें चन्द्र यदि दो पापोंके मध्यवर्ती होकर लग्नके सातवें चौथे वा आठवें स्थानमें स्थित हो, तो वह बालक देवताओंसे रक्षित होकरभी मृत्युको प्राप्त होताहै, इसके अन्यथा नहीं होता ॥ १५ ॥

क्षीणेन्दुरिष्टम् ।

क्षीणे शशिनि विलग्ने पापैः केन्द्रेषु मृत्युसंस्थैर्वा ।
भवति विपत्तिरवश्यं यवनाधिपतेर्मतञ्चैतत् ॥ १६ ॥

क्षीणचन्द्ररिष्ट कथित होताहै । जन्मकालमें क्षीणचन्द्र यदि लग्नमें वा लग्नके चौथे, सातवें और दशवें अथवा आठवें स्थानमें हो तो उस उत्पन्नहुए बालककी अवश्यही मृत्यु होगी । यवनाचार्यने इसप्रकार कहाहै ॥ १६ ॥

मेषादीनां त्रिंशांशविशेषरिष्टम् ।

नागगोसिद्धिजातीषु क्ष्माब्धित्र्यश्विधृतिनंखाः ।
क्ष्माश्विदिक्चेत्यजाद्यंशे तत्तुल्याब्दैर्विधौ व्यसुः १७॥

चन्द्रका रिष्ट विशेष कथित होताहै । राशिको तीस भागमें विभक्त करनेसे त्रिंशांश कहाजाताहै, इस त्रिंशांशभागमें मेषके अष्टम, वृषके नवम, मिथुनके चौबीस, कर्कके बाईस, सिंहके पांच, कन्याके प्रथम (एक) तुलाके चौथे, वृश्चिकके तेईस, धनुके अठारह, मकरके बीस, कुंभके इक्कीस, और मीनके दशवें अंशमें यदि किसी बालकका जन्म हो, तो उस बालककी उक्त संख्यक वर्षमें मृत्यु होगी ॥ १७ ॥

त्रिविधभौमरिष्टम्।

भौमो विलग्ने शुभदैरदृष्टः षष्ठेऽष्टमे वार्कसुतेन युक्तः। सद्यः शिशुं हन्ति वदेन्मुनीन्द्रः स्वरेयमारौ न शुभेक्षितौ च ॥ १८ ॥

भौमरिष्ट वर्णित होताहै। मंगलग्रह यदि शुक्रग्रहके द्वारा अवलोकित न होकर जन्मलग्नमें स्थित हो अथवा लग्नके छठे वा आठवें स्थानमें शनियुक्त होकर स्थिति करै या सप्तमस्थ शनियुक्त मंगल यदि शुभग्रहके द्वारा दृष्ट न हो तो उत्पन्न हुआ बालक शीघ्रही प्राणत्याग करेगा ॥ १८ ॥

बुधरिष्टम्।

कर्कटधामनि सौम्यः षष्ठाष्टमराशिगो विलग्नक्षात्। चन्द्रेण दृष्टमूर्त्तिर्वर्षचतुष्केण मारयति॥ १९ ॥

बुधरिष्ट कथित होताहै। जन्मसमयमें लग्नके (कुंभ और धनुके) षष्ठ वा अष्टम राशिस्थ बुध यदि कर्कराशिमें हो और चन्द्रग्रहके द्वारा अवलोकित हो, तो उत्पन्नहुआ बालक चार वर्षके बीचमें मृत्युको प्राप्त होगा ॥ १९ ॥

गुरुरिष्टम्।

बृहस्पतिर्भौमगृहेऽष्टमस्थः सूर्य्येन्दुभौमार्कजदृष्टमूर्त्तिः। वर्षैस्त्रिभिर्भार्गवदृष्टिहीनो लोकान्तरं प्रापयति प्रसूतम् ॥ २० ॥

गुरुरिष्ट वर्णित होताहै। जन्मकालमें बृहस्पतिग्रह यदि लग्नके अष्टमस्थ होकर मेषमें वा वृश्चिकमें अव-

स्थान करे और रवि, चन्द्र, मंगल तथा शनिके द्वारा वह दृष्ट हो और शुक्रग्रह उसको न देखे, तो तीन वर्षके भीतर उत्पन्नहुए बालककी मृत्यु होगी । किन्तु शुक्रके द्वारा यह वृहस्पति अवलोकित होनेपर उक्तबालकका रिष्ट भंग होताहै ॥ २० ॥

शुक्ररिष्टम् ।

रविशशिभवने शुक्रो द्वादशरिपुरन्ध्रगोऽशुभैः सर्वैः ।
दृष्टः करोति मरणं षड्भिर्वर्षैः किमिह चि-
त्रम् ॥ २१ ॥

शुक्ररिष्ट कथित होताहै । जन्मसमयमें सिंह वा कर्क राशिस्थ शुक्र यदि जातलग्नके द्वादश, षष्ठ वा अष्टमस्थ होकर समस्त पापग्रहोंसे अवलोकित हो तो छः वर्षके बीचमें बालक नष्ट होगा, इसमें विचित्रता क्या है ? ॥ २१ ॥

शनिरिष्टम् ।

मारयति षोडशाहाच्छनैश्चरः पापवीक्षितो लग्ने ।
संयुक्तो मासेन च वर्ष्याच्छुद्धस्तु मारयति ॥ २२ ॥

शनिरिष्ट वर्णित होताहै । जन्मकालमें शनिग्रह यदि पापग्रहसे दृष्ट होकर लग्नस्थ हो तो सोलह दिनके बीचमें उत्पन्न हुए बालककी मृत्यु होतीहै । और यही शनि पापग्रहयुक्त होनेपर सोलह महीनेमें एवं पापयुक्त वा पापदृष्ट न होकर शुद्ध लग्नस्थ होनेपर सोलह वर्षमें जात बालककी मृत्यु होतीहै । किन्तु बलवान् शुभग्रहके द्वारा दृष्ट वा युक्त होकर शनि यदि लग्नस्थ हो तो रिष्ट भंग होगा ॥ २२ ॥

राहुरिष्टम्।

राहुश्चतुष्टयस्थो मरणाय वीक्षितो भवति पापैः।
वर्षैर्वदन्ति दशभिः षोडशभिः केचिदाचार्य्याः॥२३॥

राहुरिष्ट कथित होताहै। जातलग्नसे चतुर्थस्थान स्थित राहु यदि पापग्रहसे अवलोकित हो तो उत्पन्न हुए बालककी दश वर्षमें मृत्यु होतीहै। कोई कोई पण्डित कहतेहैं कि इस प्रकार होनेसे सोलह वर्षमें मृत्यु होगी ॥ २३ ॥

केतुरिष्टम्।

केतुर्यस्मिन्नृक्षेऽभ्युदितस्तस्मिन्प्रसूयते यस्तु।
रौद्रे सर्पमुहूर्त्ते प्राणैः सन्त्यज्यते चाशु ॥ २४ ॥

केतुरिष्ट वर्णित होताहै। राशिचक्रमें जिस नक्षत्रमें केतु स्थित हो, उस नक्षत्रमें आर्द्रानक्षत्रके मुहूर्त्तमें वा आश्लेषानक्षत्रके मुहूर्त्तमें यदि बालकका जन्म हो, तो यह बालक शीघ्रही प्राणत्याग करेगा ॥ २४ ॥

द्रेष्काणारिष्टम्।

लग्ने ये द्रेष्काणा निगडाहिविहङ्गपाशधरसंज्ञाः।
मरणाय सप्तवर्षैः क्रूरयुता न स्वपतिदृष्टाः ॥ २५ ॥

द्रेष्काणरिष्ट कथित होता है। निगड, सर्प, पक्षी, और पाशधरनामक द्रेष्काण लग्नगत होकर पापग्रहके द्वारा दृष्ट और स्वीय अधिपतिके द्वारा अवलोकित न होनेपर उत्पन्नहुए बालककी सात वर्षमें मृत्यु होतीहै२५॥

लग्नाधिपादिरिष्टम्।

लग्नाधिपजन्मपतौ षष्ठाष्टमरिःफगौ प्रसवकाले।
अस्तमितौ मरणकरौ राशिप्रमितैर्वर्षैः ॥ २६ ॥

लग्नाधिप और राश्यधिपतिका रिष्ट वर्णित होताहै जन्मकालमें लग्नाधिपति ग्रह और राश्यधिपति ग्रह यदि अस्तमित होकर लग्नके छठे, आठवें, वा बारहवें स्थान में स्थित हों तो उत्पन्न हुए बालककी छठे वा आठवें अथवा बारहवें वर्षमें मृत्यु होगी ॥ २६ ॥

सौम्यग्रहरिष्टम् ।

सौम्याः षष्ठाष्टमगाः पापैर्व्वक्रोपसंयुतैर्दृष्टाः ।
मासेन मृत्युदास्ते यदि न शुभैस्तत्र संदृष्टाः ॥२७॥

सौम्यशुभग्रहका रिष्ट कथित होताहै । जन्म समयमें यदि शुभग्रह छठे वा आठवें स्थानमें हो वा उक्त दोनों स्थानोंमें स्थित होकर पापग्रह वा वक्री ग्रहसे अवलोकित हो और उनके प्रति अन्य शुभग्रहकी दृष्टि न हो तो उत्पन्नहुए बालककी एक महीनेमें मृत्यु होतीहै॥२७॥

पापग्रहरिष्टम् ।

एकः पापोऽष्टमगः शत्रुगृही शत्रुवीक्षितो वर्षात् ।
मारयति नरं प्रसूतं सुधारसो येन पीतोऽपि॥ २८॥

पापग्रहका रिष्ट कथित होताहै।यदि एक पापग्रह जात लग्नके अष्टमास्थित होकर शत्रुगृहगत हो और इस पाप ग्रहके प्रति शत्रुग्रहकी दृष्टि हो तो उत्पन्न मनुष्य अमृत पीनेपरभी एकवर्षके बीचमें शमनभवनको गमन करताहै ॥ २८ ॥

मातृरिष्टम् ।

केन्द्रत्रिकोणगः पापो मातृहा सप्तवासरात् ।
स पापाद्धार्गवात्पापो हिबुके मातृनाशकृत्॥२९॥

लग्नाच्चतुर्थगः पापो यदि स्याद्बलवत्तरः ।
तदा मातृवधं कुर्य्यात्तत्केन्द्रे चापरो यदि ॥ ३० ॥

अब मातृरिष्ट कथित होताहै जन्मके समय लग्नमें वा लग्नसे चौथे दशवें, सातवें, नववें और पांचवें स्थानमें यदि बलवान् पापग्रह वास करै, तो उत्पन्नहुए मनुष्यकी सात दिनमें माता मरजातीहै । और पापग्रहयुक्त शुक्रग्रहसे चौथे स्थानमें पापग्रह होनेपरभी जातकका मातृवियोग होताहै अन्यप्रकार मातृरिष्ट कथित होताहै जन्मलग्नसे चौथे स्थानमें यदि बलवान् पापग्रह अवस्थान करै और उसके केन्द्रमें ( उसी स्थानमें चतुर्थ, सप्तम और दशममें ) यदि पापग्रह हो, तो उत्पन्नहुए बालकसे माताका वियोग होताहै ॥ २९ ॥ ३० ॥

रिष्टशान्तियोगः ।

एकोऽपि केन्द्रभवने नव पञ्चमे वा भास्वन्मयूखविमलीकृतदिग्विभागः । निःशेषदोषमपहृत्य शुभं प्रसूतं दीर्घायुषं विगतरोगभयं करोति ॥ ३१ ॥

अब रिष्टभंगयोग कथित होताहै । अस्तादिदोषरहित जो कोई एक शुभग्रह यदि जातलग्नमें वा लग्नकी अपेक्षा चौथे, सातवें, दशवें, नववें अथवा पांचवें स्थानमें स्थिति करे तो उत्पन्नबालकका सबप्रकार रिष्ट नष्ट करके दीर्घायु और रोग भय इत्यादि दूर करताहै । कोई कोई कहतेहैं कि, केवल बृहस्पति ग्रहकेही उक्त स्थानमें होनेसे ऐसा फल होताहै, किन्तु यह बात युक्तिसंगत नहीं है ॥ ३१ ॥

परमोच्चस्थरव्यादिसप्तग्रहाणामायुर्दायः ।

पिण्डायुर्व्वर्षाणां संख्या सूर्य्यादिभिः परोच्चस्थैः ।
अतिधृतितत्त्वतिथिद्वादशतिथिभूहृङ्नखाः क्रमशः ३२

अनन्तर परमोच्चस्थ रव्यादिसप्तग्रहोंका आयुर्दाय ( भोग्यदिन ) कथित होताहै, इसीको पिण्डायुर्दाय कहतेहैं । रवि, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि, यह सात ग्रह परमोच्च ( सूच्च ) स्थानमें स्थित होनेपर क्रमशः उन्नीस, पच्चीस, पन्द्रह, बारह, पन्द्रह, इक्कीस, इक्कीस और बीसवर्ष उत्पन्न मनुष्यकी पिण्डायु-संख्या होंगे अर्थात् मनुष्यके जन्मकालमें रवि परमोच्चस्थ होनेपर पच्चीसवर्ष, मंगल परमोच्चस्थ होनेपर पन्द्रहवर्ष, बुध परमोच्चस्थ होनेपर बारहवर्ष, बृहस्पति परमोच्चस्थ होनेपर पन्द्रहवर्ष, शुक्र परमोच्चस्थ होनेपर इक्कीस-वर्ष और शनिग्रहके परमोच्चस्थ होनेपर बीसवर्ष पिंडायु होगी ॥ ३२ ॥

परमनीचस्थानामायुर्हानिः ।

नीचेऽतोर्द्धं ह्रसति हि ततश्चान्तरस्थेऽनुपातो होरा त्वंशप्रतिममपरे राशितुल्यं वदन्ति । हित्वा वक्रं रिपुगृहगतैर्हीयते स्वात्त्रिभागः सूर्य्योच्छन्नद्युतिषु च दलं प्रोज्झ्य शुक्रार्कपुत्रौ ॥ ३३ ॥

परमनीचस्थ रव्यादिसप्तग्रहका आयुर्दाय कथित होता है । परम उच्चस्थानभ्रष्ट अर्थात् नीचस्थानमें रव्यादिसातग्रहोंके अवस्थित होनेपर पूर्वोक्तपिण्डायुका अर्द्धह्रास होताहै । यथा रविकी नौ वर्ष छः मास, चंद्रकी बारह वर्ष छः मास, मंगलकी सात वर्ष छः मास, बुधकी छः

वर्ष, छः मास बृहस्पतिकी सात वर्ष छःमास, शुक्रकी दश वर्ष छः मास, और शनिग्रहकी दश वर्ष पिण्डायुसंख्या होतीहै, परमउच्च और नीचके मध्यस्थित ग्रहकी पिण्डायुसंख्या अनुपात (गणितके) द्वारा स्थिर होगी। होरा इत्यादिके अंश भोगानुसार आयुका विचार होताहै, कोई कोई पंडित राशिके भोगानुसार आयुका विचार करतेहैं। मंगलग्रहके अतिरिक्त शत्रुगृहस्थित समस्तग्रहोंकेही तृतीयांशका एक अंश आयु ह्रास होगी और शुक्र तथा शनिग्रहके अतिरिक्त अस्तमितग्रहकी दत्तायु अर्द्धहानि होगी ॥ २३ ॥

चक्रपातः।

सर्वार्द्धत्रिचरणपञ्चषष्ठभागाः क्षीयन्ते व्ययभवनादसत्सु वामम्। सत्स्वर्द्धं ह्रसति ततस्तथैकगानामेकोंऽशं हरति वली यथाह सत्यः ॥ २४ ॥

चक्रपातद्वारा आयुका ह्रास कथित होताहै। पापग्रह यदि लग्नके बारहवें स्थानसे क्षयराशिमें, वामावर्त्तमें अर्थात् विपरीतभावसे स्थित हो, तो अपनी अपनी दत्तायुके समस्त अंश, अर्द्ध, त्रिभाग, चतुर्भाग, पंच और षष्ठांश क्रमशः हरण करतेहैं। अर्थात् एक पापग्रह बारहवें स्थानमें होनेसे दत्तायुका समस्त अंश ग्यारहवेंमें होनेसे अर्द्धांश, दशवेंमें तृतीयांश, नवेंमें चतुर्थांश, आठवेंमें पंचमांश और छठेस्थानमें वास करनेसे षष्ठांश हरण करताहै। द्वादशादिस्थानमें शुभग्रह होनेसे पूर्वोक्तहतभागका अर्द्धपरिमाण ह्रास होताहै अर्थात् द्वादशमें शुभग्रह होनेसे अर्द्धांश, एकादशमें चतुरंश, दशममें षष्ठांश इत्यादि। और यदि द्वादशादिस्था-

नमें दो वा बहुत पापग्रह हों तो जो ग्रह बलवान् होगा वही ग्रह यथोक्तभाग हरण करेगा। इसप्रकार सत्याचार्यने कहाहै, यही सर्ववादिसम्मत है॥ ३४॥

अथ पापयुक्ते लग्ने सर्वग्रहाणामायुर्ह्रासः।

साद्धोंदितोदितनवांशहतात्समस्ताद्भागोऽष्टयुक्तशतसंख्य उपैति नाशम्। क्रूरे विलग्नसहिते विधिना त्वनेन सौम्येक्षिते दलमतः प्रलयं प्रयाति॥ ३५॥

लग्नमें पापग्रहके होनेसे परमायुकी हानि कथित होतीहै। लग्नमें यदि पापग्रह स्थित हो तो सभागलग्नके उदित (उत्थित) नवांशद्वारा ग्रहोंकी स्वीय स्वीय प्रदत्त आयुके संख्याङ्कको गुणा करके अष्टोत्तरशतद्वारा हरण कर जो अंक प्राप्तहो उसीपरिमित वर्षादिग्रहकी दी हुई आयुका ह्रास होगा और लग्नस्थ पापग्रहके प्रति शुभ ग्रहकी दृष्टि होनेसे उक्तप्रकार आयुकी हानि न होकर ग्रहप्रदत्त आयुका अर्द्धपरिमित वर्षादि ह्रास होगा॥३५॥

ग्रहाणामंशायुर्गणनम्।

राश्यंशकलागुणिता द्वादशनवभिर्ग्रहस्य भगणेभ्यः। द्वादशहतावशेषेऽब्दमासदिननाडिकाः क्रमशः३६॥

ग्रहोंका अंश आयुर्दाय कथित होता है। ग्रह जिस राशिमें स्थितहो उसी राशि और उसके अंश एवं कलाको अष्टोत्तरशत १०८ द्वारा गुणा करै। फिर राशिके अंकको बारहसे और अंशके अंकको तीससे भाग करने पर जो अंक प्राप्त हो, उसका नाम भगण है। इस भागको

बारहसे घटानेपर जो शेष रहे, उतनीही वर्ष, मास, दिन और दण्डादिग्रहदत्त अंशायु होगी ॥ ३६ ॥

लग्नस्यांशायुर्गणनम्।

**होरादयोऽपि चैवं बलयुक्तान्यानि राशितुल्यानि।**
**वर्षाणि संप्रयच्छंत्यनुपाताच्चांशकादि फलम् ॥ ३७॥**

लग्नका आयुर्दाय कथित होताहै। लग्नायुर्दायमें और लग्न तथा लग्नके अंश और कलाको एकसौ आठद्वारा गुणा करके लग्नके अंशको बारहसे, अंशके अंकको तीस से और कलाके अंकको साठसे भाग करनेपर जो प्राप्त हो उसका नाम भगण है। इस भगणको बारहसे घटानेपर जो बाकी बचे उसीके द्वारा वर्ष, मास, दिनादि, लग्नायुर्दाय होगा किन्तु इसमें विशेषता यह है कि लग्न यदि बलवान् हो तो भुक्तराशिके तुल्य वर्षादि अंशायु होगी और अंश कलाविकलादिका फल आयुके अनुपातद्वारा करना चाहिये ॥ ३७ ॥

शत्रुक्षेत्रादिष्वायुर्हानिः।

**विनारं शत्रुभे त्र्यंशं स्यादर्द्धं नीचसूर्य्यगाः (क)**
**हित्वा सितासितावन्यश्चक्रपातश्च पूर्ववत् ॥ ३८ ॥**

शत्रुगृहस्थित ग्रहप्रदत्त आयुकी हानि कथित होतीहै। मंगलके अतिरिक्त ग्रह शत्रुके घरमें स्थित होनेपर स्वदत्त-आयुके तीन भागमें एकभागकी हानि होतीहै, नीच-स्थानमें ग्रहोंके स्थित होनेपर स्वस्वदत्तायुकी अर्ध हानि होतीहै, शुक्र और शनिके अतिरिक्तग्रहोंके अस्तमित

(क) नीचगोऽस्तग इति पाठान्तरम्।

होनेपर स्वस्वदत्तायुकी अर्द्ध हानि होगी । अन्यान्यस्थानोंमें पूर्वकी समान चक्रपातद्वारा आयु निरूपण करै ॥ ३८ ॥

वर्गोत्तमादिष्वायुर्वृद्धिः।

सवर्गोत्तमस्वराशिद्रेष्काणनवांशके सकृद्द्विगुणः ।
वक्रोच्चयोस्त्रिगुणितो द्वित्रिगुणत्वे सकृत्त्रिगुणः॥३९॥

वर्गोत्तमादिस्थानमें ग्रहोंके अवस्थित होनेपर आयुकी वृद्धि कथित होतीहै । ग्रहगण यदि स्वस्ववर्गोत्तममें स्वस्वराशिमें स्वस्वद्रेष्काणमें और स्वस्वनवांशमें स्थित हों, तो स्वीयदत्तायुका द्विगुण प्रदान करतेहैं और ग्रहगण वक्री वा उच्चगृह स्थित होनेपर स्वस्वदत्तायुका त्रिगुण प्रदान करतेहैं, इस स्थानमें त्रिगुण द्विगुण होनेपरभी एकवारही त्रिगुण समझना चाहिये ॥ ३९ ॥

मानुषादीनां परमायुःसंख्या।

समाः षष्टिर्द्विघ्ना मनुजकरिणां पञ्च च निशा
हयानां द्वात्रिंशत्खरकरभयोः पञ्चककृतिः ॥
विरूपासत्वायुर्वृषमहिषयोर्द्वादश शुनः
स्मृतं छागादीनां दशकसहिताः षट् च परमम्॥४०॥

मनुष्यादिकी परमायुका परिमाण कथित होताहै। मनुष्य और हाथीकी परमायु एकसौ बीस वर्ष पांचदिन होतीहै । इसीप्रकार घोडेकी परमायु बत्तीस वर्ष, गधे और ऊंटकी पचीसवर्ष, गाय और भैंसकी चौबीसवर्ष, कुत्तेकी बारहवर्ष, छाग, मेष और मृगादिके परमायुकी संख्या सोलह वर्ष होताहै ॥ ४० ॥

परमायुषः कोष्ठी।

अनिमिषपरमांशके विलग्ने शशितनये गवि पंच-
वर्षलिप्ते। भवतिहि परमायुषः प्रमाणं यदि सहिताः
सकलाः सुतुङ्गभेषु ॥ ४१ ॥

जातमनुष्यका पूर्णायु योग कथित होताहै। अनिमिष अर्थात् मीनराशिका नवम नवांश यदि लग्न हो, और वृषराशिकी भुक्त पच्चीस कलामें यदि बुधग्रह स्थित हो, और ऊपर सब ग्रह यदि सुतुङ्गस्थानमें हों, तो जातमनुष्यकी एकसौबीस वर्ष पांच दिन परमायु होगी। क्योंकि मीन-राशिका नवम नवांश लग्न होनेपर परमायु नौ वर्ष, रविग्रह तुङ्गस्थ होनेपर उन्नीस वर्ष, चन्द्र सुतुङ्गस्थ होनेपर पच्चीस वर्ष, सुतुङ्गमंगलके चक्रपातद्वारा अर्द्ध हानि होकरभी ७।६ मास, बुध वृषराशिकी पच्चीस कलामें स्थित होनेपर ७।६।५ दिन, बृहस्पति सुतुङ्ग होनेपर १५ वर्ष, शुक्र सुतुङ्गस्थ होनेपर २१ वर्ष, और शनिग्रह सुतुंग होनेपरभी चक्रपातद्वारा अर्द्धहानि होतीहै, इसकारण सोलहवर्ष होतीहै, इसको एकत्र करनेसेही एकसौबीस वर्ष पांच दिन होंगे ॥ ४१ ॥

दशाकथनम्।

शोध्यक्षेप्यविशुद्धः कालो यो येन जीविते दत्तः।
स विचिन्त्यस्तस्य दशास्वदशासु फलप्रदास्ते तु४२

अब सुखदुःखादिज्ञानके निमित्त दशा कथित होतीहै। आयुर्दायमें शोध्य क्षेप्य विशुद्ध अर्थात् ह्रासवृद्धिद्वारा जो शुद्ध काल ( आयु ) जिस जिस ग्रहके द्वारा प्रदत्त होतीहै, उसकालमें उसी उसी ग्रहकी दशा भोग होगी। ग्रहगण स्वस्वदशामेंही सुखदुःखादिफल प्रदान करतेहैं४२॥

## दशानिर्णयः ।

लग्नार्कशशाङ्कानां यो बलवांस्तद्दशा भवेत्प्रथमा ।
तत्केन्द्रपणफरापोक्लिमोपगानां बलाच्छेषाः ॥ ४३ ॥

आयुष्कृतं येन हि यत्तदेव कल्प्या दशा सा प्रबलस्य पूर्व्वा । साम्ये बहूनां बहुवर्षदस्य साम्ये तु तेषां प्रथमोदितस्य ॥ ४४ ॥

दशाक्रम कथित होताहै । लग्न, रवि और चन्द्र इन तीनों ग्रहोंमें जो ग्रह बलवान् होगा, उसी ग्रहकी दशा प्रथम होतीहै । अतएव पिण्डायुगणनासे प्रथम रविकी दशा, अंशायुगणनासे प्रथम लग्नदशा, और निसर्गायुगणनासे प्रथम चन्द्रकी दशा होगी । प्रथम दशाधिपतिको दशाके पीछे उसके केन्द्रस्थित ग्रहकी दशा होतीहै, फिर उसके पणफरस्थग्रहकी दशा, और फिर उसके आपोक्लिमस्थितग्रहकी दशा होतीहै । केन्द्र, पणफर अथवा आपोक्लिममें यदि एकाधिकग्रह अवस्थित हों, तो उनमें जो ग्रह अधिक बलवान् हो, पहिले उसी ग्रहकी दशा होगी । एकाधिकग्रहोंके समान बली होनेपर जिस ग्रहकी बहुवर्ष आयुप्रदत्त हो, प्रथम उसकी दशा और यदि केन्द्रादिस्थित एकाधिकग्रह समसंख्यक बहुवर्ष परमायुप्रदान करें, तो पहिले उदितग्रहकीही प्रथम दशा होगी ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

## शुभदशाफलम् ।

मित्रोच्चस्वग्रहांशोपगतानां शोभना दशाः सर्व्वाः ।
स्वोच्चाभिलाषिणामपि न तु कथितविपर्य्ययस्थानाम् ॥ ४५ ॥

शुभदशाका फल कथित होता है। जो ग्रह मित्रगृहगत उच्चगृहस्थित, स्वक्षेत्रगत और स्वीयनवांशगत होते हैं, उनकी दशामें शुभ फल होता है और जो ग्रह उच्चाभिलाषी अर्थात् उच्चगृह प्राप्तिके अभिमुख ( निकटवर्त्ती ) हैं, उनकी दशामेंभी शुभ फल होता है, किन्तु कथित स्थानके विपरीतस्थानस्थित अर्थात् शत्रुनीचगृहस्थित और शत्रुनीचगृहाभिमुख ग्रहोंकी दशासे शुभ फल नहीं होता ॥ ४५ ॥

लग्नदशा द्रेष्काणफलकथनम् ।

लग्नदशाद्रेष्काणैः पूजितमध्याधमाश्चरे क्रमशः ।
द्विशरीरे विपरीताः स्थिरे तु पापेष्टमध्यफलाः ४६॥

अब लग्नदशाका फल कथित होता है। चरलग्नके प्रथमद्रेष्काणकी दशामें मनुष्य पूजित होता है। इसीप्रकार चरलग्नके दूसरे द्रेष्काणकी दशामें मध्यम (मिश्र) फल और चरलग्नके तीसरे द्रेष्काणकी दशामें अधम फल ( कष्टादि ) होता है । द्व्यात्मक लग्नमें इसके विपरीत होता है अर्थात् द्व्यात्मकके प्रथमद्रेष्काणकी दशामें कष्टफल, दूसरे द्रेष्काणकी दशामें मध्यमफल और तीसरे द्रेष्काणकी दशामें शुभफल होता है। स्थिरलग्नके प्रथमद्रेष्काणकी दशामें कष्टफल, दूसरे द्रेष्काणकी दशामें मध्यमफल और तीसरे द्रेष्काणकी दशामें शुभ फल होता है ॥ ४६ ॥

नैसर्गिकदशाकथनम् ।

एकं १ द्वौ २ नव ९ विंशति २० धृति १८ कृती २० पञ्चाश ५० देषां क्रमाच्चन्द्रारेन्दुजशुक्रजी-

वदिनकृतप्राभाकरीणां समाः । स्वैः स्वैः पुष्टफला निसर्गकथितैः पक्तिर्दशानां पुनस्त्वन्ते लग्नदशा शुभेति यवना नेच्छन्ति केचित्तदा ॥ ४७ ॥

अब नैसर्गिकदशा और उसका फल कथित होताहै। जन्मकालसे एक वर्ष चन्द्रकी दशा फिर क्रमशः दो वर्ष मंगलकी दशा, नौवर्ष बुधकी दशा, बीसवर्ष शुक्रकी दशा, अठारहवर्ष बृहस्पतिकी दशा, बीसवर्ष सूर्यकी दशा, और पचास वर्ष शनिग्रहकी दशा होतीहै, यह सब निसर्गदशाधिपति ग्रह बलवान् वा उपचय स्थानमें स्थित होनेपर दशा मंगलदायक होती है । और बलहीन होने पर दशा अशुभदायक होतीहै । यदि नैसर्गिक दशाकालके सहित अंशायु और पिण्डायु दशाकालका पाक अर्थात् समता हो तो जबतक दशा रहे तबतक पुष्टफल होता है अर्थात् शुभदशा होनेपर अतीव शुभफल और अशुभदशा होनेपर अतीव अशुभ फल होता है। इस नैसर्गिक दशाका परिमाण एकसौबीस १२० वर्ष है इससे अधिक समयतक यदि कोई मनुष्य जीवित रहे, तो उसकी लग्नदशा होगी इस लग्नदशामें शुभफल होता है, यह यवनाचार्यका मत है, किन्तु अन्य किसी आचार्यको यह अभिमेत ( इच्छित ) नहीं है ॥ ४७ ॥

दशाफलनिर्णयः।

आदौ शीर्षोदये राशावन्ते पृष्ठोदये ग्रहाः । उभयोदये च मध्यस्थाः फलं दद्युर्बलाबलात् ॥ ४८ ॥

दशाफल कथित होताहै शीर्षोदय ( मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, और कुम्भ ) राशिस्थ ग्रह दशाके

प्रथम भागमें फल देते हैं। पृष्ठोदय अर्थात मेष, वृष, कर्क, धनु और मकर राशि स्थित ग्रह दशाके शेषभागमें फल देते हैं और उभयोदय ( मीन ) राशिस्थित ग्रह दशाके मध्यभागमें बलाबलवशात: शुभ और अशुभदायक होते हैं ॥ ४८ ॥

अष्टमचन्द्रादिदशाफलम्।

अष्टमेन्दोर्दशा मृत्युं बन्धमस्तमितस्य च । शुभस्य वक्रिणो राज्यं पापस्य व्यसनाटने ॥ ४९ ॥

अष्टम चन्द्रादिकी दशाका फल कथित होता है, जातमनुष्यकी लग्नसे अष्टमस्थानमें चन्द्रके स्थित होनेपर चन्द्रकी दशामेंही मृत्यु होगी। जन्मसमय अष्टम स्थानमें जो ग्रह अस्तमित हो उसकी दशामें बन्धन होता है, वक्री शुभग्रहकी दशामें राज्यप्राप्ति और वक्रीपापग्रहकी दशामें विपत्ति एवं विदेशभ्रमण होताहै ४९॥

शिरश्छेदादिकारकदशाकथनम्।

अङ्गप्रत्यङ्गानां छेदं विदधाति षष्ठशत्रुदशा । द्यूनारिदशाकोणं निधनारिदशाशिरश्छेदम् ॥ ५० ॥

अब छिद्रकारकदशा कथित होतीहै । जातमनुष्यके जन्मलग्नसे षष्ठस्थित लग्नाधिपतिके शत्रुग्रहकी दशामें हाथ, कान इत्यादि अंग प्रत्यंगादिका छेदन होता है, सप्तमस्थित लग्नाधिपतिके शत्रुग्रहकी दशामें मनुष्य पंगु ( लँगडा ) होता है और अष्टमस्थलग्नाधिपतिके शत्रुग्रहकी दशामें शिरश्छेद होता है ॥ ५० ॥

दशारिष्टम्।

क्रूरराशौ स्थितः पापः षष्ठे च निधने तथा ।
तत्स्थितेनारिणा दृष्टः स्वपाके मृत्युदो ग्रहः ॥ ५१ ॥

पापग्रहकी दशामें रिष्ट कथित होता है। जातमनुष्यकी लग्नसे यदि छटे वा आठवें स्थानमें पापग्रह स्थित हो और उसी स्थानमें पापग्रहका घर हो तथा पापग्रहके क्षेत्रस्थित उक्तग्रहका शत्रुग्रह यदि उसको देखे, तो उसी ग्रहकी दशामें मनुष्यकी मृत्यु होगी॥५१॥

अन्तर्दशाविभागः।

एकर्क्षेऽर्द्धं त्र्यंशं त्रिकोणयोः सप्तमे तु सप्तमांशम्।
चतुरस्रयोस्तु पादं पाचयति गतो ग्रहःस्वगुणैः॥५२॥

अन्तर्दशाविभाग कथित होता है। दशाधिपतिके सहित एकराशिमें स्थित ग्रह दशापतिदत्त अन्तर्दशाकालका अर्द्धपरिमाण भोगकरता है, दशाधिपतिकी नवम और पंचमराशिस्थित ग्रह दशापतिदत्त अन्तर्दशाकालके तृतीयांशका एकअंश प्राप्त करता है। दशापतिके सप्तमस्थानस्थित ग्रह दशापतिदत्त अन्तर्दशाकालके सप्तमभागका एक भाग लाभ करता है। दशापतिकी चौथी वा आठवीं राशिमें स्थित ग्रह दशापतिदत्त अन्तर्दशाकालके चौथे भागका एकभाग भोगता है। यदि त्रिकोणादिस्थानमें एकाधिक ग्रह हों, तो जो ग्रह अधिक बलवान् होगा उसीकी प्रथम अन्तर्दशा होगी और ग्रहोंके समान बली होनेपर प्रथमोदित ग्रहही अन्तर्दशाधिपति होता है॥ ५२॥

अन्तर्दशाच्छेदः।

यस्मिन्नंशे भवन्त्येते भागाश्छेदविवर्जिताः।
तत्प्रत्यंशं दशां हत्वा मिलितैर्भागमाहरेत्॥ ५३॥

अन्तर्दशाके अंशकी कल्पना की जाती है। जिस अंकमें यह अर्द्धादि अंश भंगवर्जित अर्थात् अखण्ड हों,

उस अंकके प्रतिभागद्वारा दशापरिमाण अंकको पूर्ण करके समस्त अंकको एकत्र करनेपर जो अंक हो, उससे पूर्वोक्त पूरिताङ्कको घटानेपर जो हो, उसी परिमाण वर्षकी अन्तर्दशाका काल जानना चाहिये ॥ ५३ ॥

रव्यादिसप्तदशासु अन्तर्दशाकथनम् ।

चन्द्रारजीवा बुधजीवशुक्रा दिवाकरेन्दू रविजीव-
शुक्राः । रवीन्दुशुक्रा बुधजीवसौरा जीवज्ञशुक्रा
रवितः प्रशस्ताः ॥ ५४ ॥

अन्तर्दशाका फल कथित होता है । रविकी दशामें चन्द्र, मंगल और बृहस्पतिकी अन्तर्दशा होनेपर शुभ फल होता है, चन्द्रकी दशामें बुध, बृहस्पति और शुक्रकी अन्तर्दशा होनेपर शुभ होगा । मंगलकी दशामें रवि और चन्द्रकी अन्तर्दशा होनेपर शुभ फल होता है। बुधकी दशामें रवि, बृहस्पति और शुक्रकी अन्तर्दशा होनेपर शुभ फल होगा । बृहस्पतिकी दशामें रवि, चन्द्र और शुक्रकी अन्तर्दशा होनेपर शुभ होता है । शुक्रकी दशामें बुध बृहस्पति और शनिकी अन्तर्दशा होनेपर शुभ होगा और शनिकी दशामें बृहस्पति बुध और शुक्रकी अन्तर्दशा होनेपर शुभ फल होता है ॥ ५४ ॥

मध्यादिरिष्टान्तर्दशाकथनम् ।

चन्द्रारजीवाः सुरपूजितानां दशासु मार्त्तण्ड-
गुरुज्ञभौमाः । अन्तर्दशायां क्रमशस्तु मध्या
अनिष्टदाः स्युः शुभमध्यशेषाः ॥ ५५ ॥

चन्द्र, मंगल, बृहस्पति और शुक्रकी दशामें यदि क्रमशः रवि, बृहस्पति, बुध और मंगलकी अन्तर्दशा

होती है अर्थात् चन्द्रकी दशामें रविकी अन्तर्दशा, मंगलकी दशामें बृहस्पतिकी अन्तर्दशा, बृहस्पतिकी दशामें बुधकी अन्तर्दशा, और शुक्रकी दशामें मंगलकी अन्तर्दशा होती हैं, तो मध्यफल होता है और शुभ तथा मध्यफलका शेष अनिष्टफल दायक है अर्थात् रविकी दशामें शनि, बुध और शुक्रकी अन्तर्दशा होनेपर अनिष्ट फल होता है, इसीप्रकार चन्द्रकी दशामें शनि और मंगलकी अन्तर्दशा होनेपर, मंगलकी दशामें बुध, शुक्र और शनिकी अन्तर्दशा होनेपर, बुधकी दशामें शनि चन्द्र और मंगलकी अन्तर्दशा होनेपर, बृहस्पतिकी दशामें शुक्र और शनिकी अन्तर्दशा होनेपर शुक्रकी दशामें चन्द्र और रविकी अन्तर्दशा होनेपर एवं शनिकी दशामें रवि चन्द्र और मंगलकी अन्तर्दशा होनेपर अनिष्ट फल होताहै ॥ ५५ ॥

पापग्रहान्तर्दशाकथनम् ।

पापग्रहदशायान्तु पापस्यान्तर्दशा यदि ।
अरियोगे भवेन्मृत्युर्मित्रयोगे च संशयः ॥ ५६ ॥

अन्तर्दशारिष्टकथित होता है । पापग्रहकी अर्थात् शनि, रवि और मंगल ग्रहकी दशामें यदि पापग्रहकी अन्तर्दशा हो और दशाधिपतिकेसहित अन्तर्दशाधिपकी शत्रुता हो तो मनुष्यकी मृत्यु होगी। पापग्रहकी दशामें अन्तर्दशाधिपति पापग्रह होकरभी यदि मित्रग्रह हो, तो मृत्युतुल्य पीडादि होती है ॥ ५६ ॥

लग्ने शत्रोरन्तर्दशारिष्टम् ।

विलग्नाधिपतेः शत्रुर्लग्नस्यान्तर्दशांगतः ।
करोत्यकस्मान्मरणं सत्याचार्यः प्रभाषते ॥ ५७ ॥

लग्नान्तर्दशारिष्ट कथित होता है। मनुष्यके जन्मलग्नाधिपतिग्रहका शत्रुग्रह यदि जन्मलग्नाधिपति ग्रहकी अन्तर्दशागत हो तो मनुष्यकी अकस्मात् मृत्यु होती है, इसप्रकार सत्याचार्यने कहा है ॥ ५७ ॥

दशान्तर्दशयोरपवादः ।

प्रवेशे बलवान्खेटः शुभैर्वा संनिरीक्षितः ।
सौम्याधिमित्रवर्गस्थो मृत्यवे न भवेत्तदा ॥ ५८ ॥

दशा और अन्तर्दशाकारिष्टभंगयोग कथित होता है। दशा वा अन्तर्दशाके प्रवेश समयमें दशाधिपति अन्तर्दशाधिपति ग्रह बलवान् अथवा शुभग्रहसे दृष्ट वा अधिमित्रादि शुभग्रहके वर्गादिमें स्थितहोनेपर यद्यपि उस दशामें मृत्यु न हो, किन्तु तथापि मृत्युतुल्य पीडादि होती है ॥ ५८ ॥

रिष्टप्रतीकारः ।

गोचरे वा विलग्ने वा ये ग्रहारिष्टसूचकाः । पूजयेत्तान् प्रयत्नेन पूजिताः स्युः शुभावहाः ॥ ५९ ॥

रिष्टशान्ति कथित होती है।मनुष्यके गोचर वा लग्नमें यदि कोई ग्रह रिष्टदायक हो तो यत्नसहित उस ग्रहकी पूजा करै, क्योंकि रिष्टदायक ग्रहभी पूजित होनेपर शुभफल देते हैं ॥ ५९ ॥

राजयोगः ।

वर्गोत्तमगते चन्द्रे चतुरादिभिरीक्षिते विलग्ने वा ।
नृपजन्म भवति राज्यं नृपयोगे बलयुतग्रहदशायाम् ॥ ६० ॥

स्वग्रहस्थितसुहृद्ग्रहफलम्।

कुलतुल्यः कुलश्रेष्ठो बन्धुमान्यो धनी सुखी।
क्रमान्नृपसमो भूप एकाद्यैः स्वगृहे स्थितैः ॥६१॥ ❀

अब राजयोग वर्णित होता है। चन्द्रग्रह यदि वर्गोत्तमगत होकर चार ग्रहोंसे दृष्ट हो, वा लग्न यदि चन्द्रग्रहके अतिरिक्त चार ग्रहोंके द्वारा दृष्ट हो, तो जातमनुष्यका राजयोग होता है। राजयोग होनेपर जातमनुष्यके बलवान् ग्रहकी दशामें राज्यप्राप्ति होती है। स्वगृह और मित्रगृह स्थितग्रहका फल कथित होता है जन्मसमयमें एकग्रहके स्वक्षेत्रस्थ वा मित्रगृहगत होनेपर मनुष्य कुलतुल्य होता है। इसी प्रकार दो ग्रह होनेपर कुलश्रेष्ठ, तीन होनेपर बन्धुमान्य, चार होनेपर धनवान्, पांच होनेपर सुखी, छः होनेपर नृपतुल्य और सातग्रहोंके स्वक्षेत्रस्थ वा मित्रगृहगत होनेपर मनुष्य राजा होता है ६०।६१

व्योश्यादियोगः।

सूर्य्याद्व्ययगैर्व्योशिद्वितीयगैश्चन्द्रवर्जितैर्वेशिः।
उभयस्थितैर्ग्रहैरुभयचरी नामतः प्रोक्ता ॥ ६२ ॥

अब व्योश्यादियोग कथित होता है। सूर्यके बारहवें स्थानमें चन्द्रके अतिरिक्त ग्रह होनेपर व्योशियोग होता है और सूर्यके दूसरे स्थानमें चन्द्रके सिवाय ग्रह अवस्थित होनेपर वेशिनामक योग होता है। और उक्त दोनों स्थानोंमें ग्रह होनेपर उभयचारी योग होता है ॥ ६२ ॥

व्योश्यादियोगफलम्।

मन्ददृगस्थिरवचनः परिभूत परिश्रमोभवेद्व्योशौ।

---

❀ स्वगृहेस्थितैरित्यत्र स्वसुहृद्गृहे इति क्वचित् पुस्तके पाठः।

उद्घृष्टवचनः स्मृतिमान् स्तब्धगतिः सात्त्विको वेशौ ॥ ६३ ॥ सुभगो बहुभृत्यधनो बहूनामाश्रयो नृपतितुल्यः । नृत्योत्साहो हृष्टो भुङ्क्ते भोगानुभयचर्य्याम् ॥ ६४ ॥

व्योश्यादियोगका फल कथित होता है । जन्मसमय में व्योशियोग होनेपर मनुष्य कोटराक्ष ( कोतवाल ) और परिप्राप्त ( धनादिकी प्राप्तिवाला ) परिश्रमी होता है और वेशियोग होनेपर मनुष्य उच्च और कुत्सितवाक्यशील ( बुरे वचन कहनेवाला अथवा गाली देनेवाला ) स्तब्धगति ( आलसी ) और दाता होता है । उभयचारी योगमें मनुष्य सौभागशाली, बहुभृत्ययुक्त, बहुतधनका अधिपति, अनेकोंका आश्रय, नृपतितुल्य नृत्योत्साही हृष्ट और भोगशील होता है ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

अनफादियोगः ।

रविवर्ज्जं द्वादशगैरनफा चन्द्राद् द्वितीयगैः सुनफा । उभयस्थितैर्दुरधुराकेमद्रुमसंज्ञितोऽन्यः ६५॥

अनफादियोग कथित होताहै । लग्नके बारहवें स्थान में रविके अतिरिक्त ग्रह स्थित होनेपर अनफायोग होता है । चन्द्रके दूसरे स्थानमें रविके अतिरिक्त ग्रह होनेपर सुनफानामक योग होता है । लग्न और चन्द्रके कथित दोनों स्थानोंमें ग्रह स्थित होनेपर दुरधुरा योग होता है और लग्न तथा चन्द्रके बारहवें तथा दूसरे स्थानमें ग्रह न होनेपर केमद्रुम नामक योग होता है ॥ ६५ ॥

अनफादियोगफलम् ।

सच्छीलं विषयसुखान्वितं प्रभुं ख्यातियुक्तमनफायां सुनफायां धीधनकीर्त्तियुक्तमात्मार्जितैश्वर्य्यम् । बहुभृत्यकुटुम्बारम्भवित्तमुद्विग्नचित्तमपि च दौरधुरे भृतकं दुःखितमधनं जातं केमद्रुमे विद्यात् ॥ ६६ ॥

अनफादि योगका फल कथित होता है । अनफायोग में उत्पन्नहुआ मनुष्य सच्चरित्र, विषयसुखयुक्त, प्रभु और ख्यातियुक्त होता है। सुनफा योगमें उत्पन्नहुआ मनुष्य बुद्धिमान्, धनी, कीर्त्तियुक्त और निजोपार्जित धनसे ऐश्वर्यशाली होता है । दुरधुरायोगमें उत्पन्नहुआ मनुष्य बहुत सेवकोंसे युक्त, कुटुम्बारम्भवित्त ( जिसका धनकुटुम्बके प्रति व्यय होता रहे ) और उद्विग्नचित्त होता है और केमद्रुम योगमें उत्पन्न हुआ मनुष्य सेवक, दुःखित और धनहीन होताहै ॥ ६६ ॥

अन्यथा केमद्रुमयोगभंगः ।

त्रितयेन यदा योगाः केन्द्रग्रहवर्जितं शशांकश्च ।
केमद्रुमोऽतिकष्टः शशिनि समस्तग्रहादृष्टे ॥ ६७ ॥

अब केमद्रुम योगभंग कथित होता है । अनफा, सुनफा और दुरधुरा योग न होकर यदि लग्नमें वा लग्नके चौथे, सातवें और दशवें, स्थानमें कोई ग्रह न हो और चन्द्र यदि किसी ग्रहसे युक्त वा किसी ग्रहके द्वारा दृष्ट न हो, तो केमद्रुम योग अतिशय कष्टदायक होता है। लग्न में अथवा लग्नके केन्द्रस्थानमें वा चन्द्रमें ग्रहके स्थित-

होनेपर केमद्रुम योग नहीं होगा और चन्द्रके प्रति किसी ग्रहकी दृष्टि होनेपरभी केमद्रुम योगका भंग होगा ॥६७॥

लग्नचन्द्रोपचयस्थशुभग्रहैर्वसुमत्तानिरूपणम्।

लग्नादतीव वसुमान् वसुमान् शशांकात् सौम्यग्रहैरुपचयोपगतैः समस्तैः। द्वाभ्यां समोऽल्पवसुमांश्च तदूनतायामन्येषु सत्स्वपि फलेष्विदमुत्कटेन ॥ ६८ ॥

अब वित्तयोग कथित होता है। लग्न और चन्द्रके तीसरे, ग्यारहवें, छठे और दशवें स्थानमें समस्त शुभग्रह (बुध, शुक्र, बृहस्पति) होनेपर उत्पन्नमनुष्य अत्यन्त धनवान् होता है। इसीप्रकार दो शुभग्रह होनेपर मध्यम धनवान्, और एक शुभग्रह उपचयस्थानमें होनेसे जातमनुष्य अल्पधनी होता है। इस उपचय, तीसरे, ग्यारहवें, छठे और दशवें स्थानके अतिरिक्त अन्यकिसी स्थानमें शुभग्रह होनेसे जातमनुष्य दरिद्री होता है। वक्ष्यमाण अन्यप्रकार धनयोग होनेपरभी यही योग फलदायक होता है ॥ ६८ ॥

सूर्यकेन्द्रादिस्थचन्द्रवशेन विनयवित्तादीनामधमत्वादिनिरूपणम्।

अधमसमवरिष्ठान्यर्ककेन्द्रादि संस्थे शशिनि विनयवित्तज्ञानधीनैपुणानि। अहनि निशि च चन्द्रे स्वाधिमित्रांशके वा सुरगुरुसितदृष्टे वित्तवान् स्यात्सुखी च ॥ ६९ ॥

अन्यप्रकार धनयोग कथित होता है। जन्मके समय चन्द्रग्रह यदि रविके केन्द्रस्थानमें स्थित हो, तो उत्पन्न

मनुष्यका विनय, धन, शास्त्र, ज्ञान, प्रतिभा ( प्रभाव ) और कार्यमें निपुणता अल्प होती है । रविके पणफर-स्थानमें चन्द्र होनेपर उत्पन्न मनुष्यके विनयादिकी समता होती है और रविके आपोक्लिमस्थानमें चन्द्र स्थितहोने-पर उत्पन्न मनुष्यके विनयादिका श्रेष्ठत्व होता है । दिनमें जन्म होनेपर यदि चन्द्र ग्रह स्वगृहमें, स्वनवांशमें, अधिमित्र गृह वा अधिमित्रनवांशमें, स्थित होकर बृह-स्पतिके द्वारा दृष्ट हो, तो उत्पन्नमनुष्य बलवान् और सुखी होता है । रात्रिमें जन्म होकरभी यदि चन्द्र ग्रह स्वगृहमें, स्वनवांशमें अधिमित्र गृह और अधिमित्र नवांशमें स्थित होकर शुक्रग्रहके द्वारा दृष्ट हो, तो जातमनुष्य बली और सुखयुक्त होता है ॥ ६९ ॥

ग्रहयोगफलम् ।

प्रायः शुभाः समेता धनभोगयशोऽन्वितं नृपति-चेष्टम् । पापाश्च दुःखतप्तं कुर्वन्त्यधनं सुदुर्भगं दीनम् ॥ ७० ॥

द्विग्रहादि योगफल कथित होता है । जन्मकालमें चन्द्रग्रह शुभग्रहयुक्त होनेपर प्रायः अधिकांश स्थलोंमेंही उत्पन्नमनुष्य धनभोग और यश प्राप्तकरता है और नृपति चेष्टा ( राजाके समान चेष्टावाला ) होता है और जन्म-कालमें चन्द्र पापयुक्त होनेपर उत्पन्न मनुष्य दुःखतापित, धनहीन, दुर्भाग्य और दीनभावापन्न होता है ॥ ७० ॥

प्रव्रज्यायोगः ।

चतुरादिभिरेकस्थैः प्रव्रज्यां स्वां ग्रहः करोति बली । बहुवीर्य्यैस्तावद्धन्यः प्रथमावीर्य्याधिक-स्यैव ॥ ७१ ॥

प्रव्रज्यायोग कथित होता है। जन्मकालमें चतुरादि-ग्रह एकस्थानमें स्थित होनेपर अर्थात् चारग्रह, पांचग्रह, छैग्रह, अथवा सातग्रहोंके एकत्र वासकरनेपर यदि प्रव्रज्यायोग होता है, तो उनमें जो ग्रह अधिक बलवान् हो, वही अपनी प्रव्रज्या दान करता है। एकाधिक ग्रहके बलवान् होनेपर प्रव्रज्याभी अनेक होती हैं, किन्तु अधिक बलवान् ग्रहकी प्रव्रज्या प्रथम होती है, फिर बलाधिक्य क्रमसे अन्यान्य प्रव्रज्या होती है ॥ ७१ ॥

प्रव्रज्यानिर्णयः।

तापसबुद्धश्रावकरक्तपटाजीविभिक्षुचरकाणाम्।
निर्ग्रन्थानां चार्कात् पराजितैःप्रच्युतिर्बलिभिः॥७२॥

प्रव्रज्याका फल कथित होता हैं। रव्यादि सातग्रहोंकी क्रमानुसार तापस, बुद्ध श्रावक, रक्तपट, आजीवक, भिक्षु, चरक, और निर्ग्रन्थ यह सात प्रकार प्रव्रज्या होती है अर्थात् रवि प्रव्रज्या कारक होनेपर तापस ( वानप्रस्थ ) वा ब्रह्मचारी इसीप्रकार चन्द्रहोनेपर बुद्धश्रावक ( बौद्ध-धर्मावलम्बी ) मंगलहोनेपर रक्तपटधारी ( शाक्यनामक-बौद्ध विशेष ) बुधहोनेपर आजीवक, ( एकदण्डी ) बृहस्पतिहोनेपर भिक्षु ( यती ) शुक्र होनेपर चरक ( चार्वाक ) और शनिग्रह प्रव्रज्या कारक होनेपर निर्ग्रन्थ ( मूर्ख, क्षपणक ) होता है। प्रव्रज्याकारक बलवान् ग्रह यदि पराजित हो तो प्रव्रज्याकी च्युति होगी ॥७२॥

संख्यायोगः।

एकादि ग्रहोपगतैरुक्तान् योगान् विहाय संख्याख्याः।
गोलयुक्शूलकेदारपाशदामाख्यवीणाः स्युः ॥ ७३ ॥

संख्यायोग कथित होता है एकादि गृहमें ग्रहोंके स्थित होनेपर वीसप्रकार आकृतियोग त्यागकर संख्यानामक गोलादि सप्तप्रकार योग होता है अर्थात् एक गृहमें सात ग्रहोंके होनेपर गोलयोग, दो गृहमें सातग्रहोंके होनेपर युगयोग, तीनगृहोंमें सात ग्रहोंके होनेपर शूलयोग, चारगृहोंमें सातग्रहोंके होनेपर केदार योग, पांचगृहोंमें सातग्रहोंके होनेपर पाशयोग, छै गृहोंमें सातग्रहोंके होने-पर दामयोग और सातगृहोंमें सातग्रहोंके होनेपर वीणा योग होता हैं ॥ ७३ ॥

संख्यायोगफलम्।

दुःखितदरिद्रघातककृषिकरदुःशीलपशुपनिपुणानाम्।
जन्मक्रमेण सुखिनः परभाग्यैः सर्व्वे एवैते ॥ ७४ ॥

गोलादि योगका फल कथित होता है। जन्मसमयमें गोलयोग होनेपर उत्पन्नमनुष्य दुःखित होता है। इसी-प्रकार युगयोगमें दरिद्र, शूलमें हिंसक, केदारयोगमें कृषक, पाशयोगमें दुःशील अर्थात् धनार्जनविहीन, दाम-योगमें पशुजीवी, और वीणायोगमें उत्पन्नमनुष्य कार्य--दक्ष ( चतुर ) होता है। उक्तगोलादि योगमें उत्पन्न-हुआ मनुष्य जीवनपर्यन्त दुःखादि भोगता है, यदि कुछ सुख भोगे, वह पराये भाग्यसे होता है ॥ ७४ ॥

राशिशीलम्।

अस्थिरविभूतिमित्रं चलमटनं फलितनियममपि
चरमे। स्थिरमेतद्विपरीतं क्षमान्वितं दीर्घसूत्रञ्च।
द्विशरीरे त्यागयुतं कृतज्ञमुत्साहिनं विविधचेष्टम्।
ग्राम्यारण्यजलोद्भवराशिषु जातास्तथा शीलाः ७५॥

अब राशिफल कथित होता है। जन्मकालमें चर ( मेष, कर्क, तुला और मकर ) राशिमें चन्द्रमा होनेपर जातमनुष्य अस्थिर ऐश्वर्य, चंचल मित्र, अस्थिरस्वभाव, चंचलगाति, गमनशील और स्खलितनियम होता है। जन्मसमयमें स्थिर ( वृष, सिंह, वृश्चिक और कुंभ ) राशिमें चन्द्रमाके स्थित होनेपर जातकसबंधमें इसके विपरीत होता है अर्थात् स्थिरऐश्वर्य, स्थिरमित्र, अनटनशील ( एकत्रस्थित रहनेवाला ) स्थिरप्रतिज्ञ, क्षमावान् और दीर्घसूत्री होता है। जन्मकालमें द्व्यात्मक ( मिथुन, कन्या धनु और मीनराशिमें ) चंद्रमा होनेपर जातमनुष्य दानशील, कृतज्ञ, उत्साही और विविधचेष्ट ( अनेकप्रकारकी चेष्टाकरनेवाला ) होताहै। ग्राम्य, आरण्य और जलज राशिके भेदसे जातमनुष्य ग्रामादिके स्वभावको प्राप्त होताहै ॥ ७५ ॥

नक्षत्रशीलम्।

**शतानलादित्यविशाखमैत्रशक्रोद्भवा मिश्रगणाः प्रदिष्टाः। शिवाजहस्ताहिभवा जघन्याः शेषोद्भवाः सत्पुरुषा भवन्ति ॥ ७६ ॥**

नक्षत्रफल कथित होता है। शतभिषा, कृत्तिका, पुनर्वसु, विशाखा, अनुराधा और ज्येष्ठा, नक्षत्रमें उत्पन्न मनुष्य मिश्रगण अर्थात् मध्यम स्वभावयुक्त होताहै, आर्द्रा, पूर्वाभाद्रपद, हस्त और आश्लेषा नक्षत्रमें उत्पन्न मनुष्य गुणहीन होता है, इनके अतिरिक्त अर्थात अश्विनी भरणी, रोहिणी मृगशिरा, पुष्य, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, चित्रा, स्वाती, मूल, पूर्वाषाढ, उत्तरा-

षाढ, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद और रेवती नक्षत्रमें उत्पन्न मनुष्य सत्स्वभावयुक्त होता है ॥ ७६ ॥

दृष्टिफलम्।

क्षेत्राधिपसंदृष्टे शशिनि नृपस्तत् सुहृद्भिरपि धनवान् । तद्द्रेष्काणांशकपैः प्रायः सौम्यैः शुभं नान्यैः ॥ ७७ ॥

क्षेत्राधिपतिकी दृष्टिद्वारा चन्द्रका फल कथित होता है। जन्मकालमें जिस ग्रहके क्षेत्रमें चन्द्रमा स्थित हो, वह ग्रह यदि चन्द्रमाको देखे, तो उत्पन्न मनुष्य नृप अर्थात् पुरग्रामादिका अधिकारी होता है किन्तु उसका पुत्र राजा होता है, और क्षेत्राधिपतिके मित्रग्रहद्वारा चन्द्रमा दृष्ट होनेपर जातमनुष्य बलवान् होताहै और जिस द्रेष्काण एवं नवांशमें चन्द्रमा स्थित हो, उसी द्रेष्काण और नवांशपतिद्वारा यदि वह दृष्ट हो तो जातमनुष्य धनवान् होगा । शुभग्रहद्वारा चन्द्रके दृष्ट होनेपर प्रायः शुभफल होता है और अशुभग्रहकेद्वारा दृष्ट होनेपर प्रायः अशुभफल होताहै ॥ ७७ ॥

भावफलम्।

पुष्णन्ति शुभा भावान् मूर्त्यादीन् घ्नन्ति संश्रिताः पापाः । सौम्याः षष्ठेऽविघ्ना नेष्टाः पापा व्ययाष्टमगाः ॥ ७८ ॥

भावफल कथित होता है। तन्वादि बारहभावके जिस-जिस स्थानमें शुभग्रहस्थित हो वा शुभग्रहके द्वारा जो जो भावदृष्ट हो, उस उस भावकी पुष्टि होती है और पापग्रह जिसजिस भावमें हो अथवा जिसजिस भावको

देखें, उस उस भावकी हानि होती है, किन्तु विशेष यह है कि, छठे स्थानमें पापग्रहकी स्थिति वा दृष्टि होनेपर शत्रुवृद्धि और शुभग्रहकी स्थिति वा दृष्टि होनेपर शत्रु नाश होता है और बारहवें तथा आठवें स्थानमें पापग्रहके स्थित होनेपर अथवा पापग्रहके द्वारा उक्तस्थान दृष्ट होनेपर अशुभ फल अर्थात् व्यय और मृत्युकी वृद्धि एवं शुभग्रहकी स्थिति वा दृष्टि होनेपर शुभफल अर्थात् व्यय और मृत्युकी हानि होती है ॥ ७८ ॥

मिश्रफलम्।

शुभं वर्गोत्तमे जन्म वेशिस्थाने च सद्ग्रहे।
अशून्येषु च केंद्रेषु कारकाख्यग्रहेषु च ॥ ७९ ॥

अब वर्गोत्तमादि स्थित लग्न चन्द्रादिका शुभफल कथित होता है। जन्मकालमें वर्गोत्तम गतलग्न वा वर्गोत्तम गतचन्द्र होनेपर जन्म शुभ अर्थात् उत्पन्न मनुष्य सत्स्वभावयुक्त होता है। जन्मकालमें रविके दूसरे स्थानमें शुभग्रह होनेपरभी जन्म शुभ होता है और जन्मलग्नके केन्द्रका एक स्थानभी यदि ग्रहविहीन न हो, तो जन्म शुभ होगा और वक्ष्यमाण कारकसंज्ञक योगमें उत्पन्नमनुष्यभी सत्पुरुष होता है ॥ ७९ ॥

कारकतान्योगौ।

लग्नस्थः सुखसंस्थो वा दशमश्चापि कारकः सर्वः।
चन्द्रोपचयेऽन्योऽन्यं पापाः सौम्याश्चता नाख्याः ८०

कारक और तान्संज्ञक ग्रह कथित होते हैं। लग्न और चतुर्थ दशम और सप्तमस्थ समस्त ग्रह परस्पर कारकसंज्ञक होते हैं और स्वक्षेत्र, तुङ्ग, और मूलत्रिको-

णस्थ ग्रह केन्द्रमें होनेपरभी परस्पर कारकसंज्ञक होते हैं। और चन्द्रके उपचयस्थित पाप और समस्त शुभग्रह परस्पर तान्संज्ञक होते हैं ॥ ८० ॥

स्त्रीणां रूपादिनिर्णयः।

स्त्रीपुंसोर्जन्मफलं तुल्यं किन्तत्र चन्द्रलग्नस्थम्।
तद्बलयोगाद्वपुराकृतिः सौभाग्यमस्तमये स्त्रीणाम्८१

अब स्त्रीजातक कथित होताहै। स्त्री और पुरुषका जन्म फलतुल्य अर्थात् पुरुषका जो फल कथित हुआहै। स्त्रीकाभी प्रायः उसी प्रकार होगा किन्तु विशेष यही है चन्द्र और लग्नके बलाबल अनुसार शरीरका रूप और शीलादि और सातवें स्थानमें सौभाग्यकी चिन्ता करनी चाहिये ॥ ८१ ॥

सप्तमस्थभौमादिफलम्।

बाल्ये विधवाभौमे पतिसंत्यक्तादिवाकरेऽस्तस्थे।
सौरे पापैर्दृष्टे कन्यैवजरांसमुपयाति ॥ ८२ ॥

सप्तमस्थ पापग्रहका फल कथित होताहै। स्त्रीके जन्मकालीन लग्नकी अपेक्षा सातवें स्थानमें मंगल ग्रह होनेसे बाल्यकालमें विधवा होतीहै। रवि सप्तमस्थ होनेपर जातस्त्री पतिकेद्वारा परित्यक्त होतीहै अर्थात् पति उसको छोड देता है और शनिश्चरग्रह यदि पाप ग्रहसे अवलोकित हो तो यह कन्या अनूढा अवस्थामें जरा ( बुढापा ) को प्राप्त होती है ॥ ८२ ॥

वैधव्यादिनिर्णयः।

क्रूरैरस्ते विधवा भवति पुनर्भूः शुभाशुभैर्नारी। क्रूरेऽष्टमे च विधवा स्यात् स्वार्थे सा स्वयं म्रियते ॥ ८३ ॥

अब वैधव्यादि योगका निर्णय किया जाताहै। क्रूर अर्थात् पापग्रह जन्मकालमें लग्नके सातवें स्थानमें होनेपर जात स्त्री विधवा होतीहै। शुभाशुभ ग्रहके सातवें स्थान में स्थिति करनेपर पुनर्भू अर्थात् द्विरूढा❀ होतीहै और पापग्रहके आठवें स्थानमें स्थित होनेपरभी कन्या विधवा होतीहै। किन्तु दूसरे स्थानमें यदि शुभग्रह हो, तो विधवा न होकर स्वयं मरजाती है॥ ८३॥

विषमस्थानादिलग्नकथनम्।

ओजे लग्नेन्द्वोः स्त्री दुःशीला शीलसंयुता युग्मे।
शून्येऽबले कदर्य्यः पतिश्चरेऽस्ते प्रवासी स्यात्॥८४॥
इति श्रीश्रीनिवासविरचितायां शुद्धिदीपिकायां जातनिर्णयो नाम षष्ठोऽध्यायः॥ ६॥

---

स्त्रीका जन्म ओज अर्थात् अयुग्म लग्नमें होनेसे वा जन्म चन्द्र अयुग्म राशिमें होनेसे वह स्त्री दुःशील होती है युग्मराशि यदि लग्न हो वा चन्द्र यदि युग्मराशिमें हों तो जात स्त्री सुशील होती है। सप्तमस्थान ग्रहशून्य वा बलशून्य होनेपर पति कापुरुष होता है और चर राशि सप्तमस्थानमें होनेपर उस स्त्रीका पति नित्य प्रवासी होता है॥ ८४॥ इति भाषाटीकायां जातकनिर्णयो नाम षष्ठोऽध्यायः॥ ६॥

---

❀ जिसके दो पति हों।

# सप्तमोऽध्यायः ।

## अथ नामकरणम् ।

ध्रुवमृदुचरवर्गे वाजिहस्तासमेते क्षणमुदयमथैषां सत्सु केन्द्रस्थितेषु । दिग्रविशिवशताहे तत्कुलाचारतो वा शुभदिनतिथियोगे नाम कुर्य्यात् प्रशस्तम् ॥ १ ॥

अब नामकरण कथित होता है । उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण धनिष्ठा, शतभिषा, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, अश्विनी और हस्त नक्षत्रमें वा इन सब नक्षत्रोंके असम्भव होनेपर इनके मुहूर्त्तमें लग्न स्थिर कर उसके केन्द्रस्थानमें शुभग्रह होनेपर दशम, द्वादश, एकादश, वा शतदिवसमें अथवा कुलाचारके हेतु षष्ठमासादिमें शुभदिन शुभतिथि और शुभयोगमें बालकका नामकरण प्रशस्त ( श्रेष्ठ ) होता है ॥ १ ॥

## निष्क्रामणम् ।

आर्द्राधोमुखवर्ज्जितानुपहतेष्वृक्षेष्वरिक्ते तिथौ वारे भौमशनीतरे घटतुलाकन्यामृगेन्द्रोदये । सद्दृष्टेऽथ चतुर्थमासि यदि वा मासे तृतीये शशिन्यक्षीणे शुभदे शिशोरभिनवं निष्क्रामणं कारयेत् ॥ २ ॥

निष्क्रामण कथित होता है । आर्द्रा, आश्लेषा, कृत्तिका, भरणी, मघा, विशाखा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पूर्वा-

भाद्रपद और शतभिषा, इन सब नक्षत्रोंके अतिरिक्त नक्षत्रके, औत्पातिक वा पापग्रहोंके पीडा देनेका अधिकार न होनेपर, रिक्ताके अतिरिक्त तिथिमें, मंगल और शनिके अतिरिक्त वारमें, कुंभ, तुला, कन्या और सिंह लग्नमें ( शुभग्रहकी दृष्टि होनेपर ) चौथे वा तीसरे महीनेमें क्षीणचन्द्रके अतिरिक्तमें और चन्द्रगोचरमें शुभ होनेपर नवीन बालकको घरसे प्रथम निष्क्रामण करै ॥२॥

ताम्बूलदानम् ।

विगतवरुणनाथाधोमुखार्द्रान्यभेषु त्रिभवरिपुगपापैः केन्द्रकोणस्थसौम्यैः ॥ विकुजरविजवारे सार्द्धमासद्वये स्याद् वृषझषबुधसौरक्षोंदये पूगदानम् ॥ ३ ॥

ताम्बूलदान कथित होता है। शतभिषा नक्षत्रवर्जित-अधोमुख अर्थात् आश्लेषा, कृत्तिका, भरणी, मघा विशाखा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पूर्वाभाद्रपद यह सब और आर्द्राके अतिरिक्त नक्षत्रमें, लग्नके तीसरे, ग्यारहवें और छठे स्थानमें पापग्रह एवं केन्द्र और त्रिकोणस्थानमें शुभग्रहके वास करनेपर, मंगल और शनिके अतिरिक्त वारमें, जन्मदिनसे ढाई महीनेमें, वृष, मीन, मिथुन, कन्या, मकर और कुंभलग्नमें ताम्बूलदान श्रेष्ठ होताहै ॥ ३ ॥

प्राग्भूम्युपवेशनम् ।

ब्रह्मोत्तरेन्द्रमृगमैत्रकराश्विनीषु वारेषु सप्तसु विशिष्य कुजस्य वारे ॥ मासे तु पञ्चम इह प्रतिमुच्य रिक्तांशस्तंशिशोर्भवति भूम्युपवेशनं प्राक् ॥४॥

शिशुका प्रथम भूमिमें उपवेशन ( भूमिमें बैठना ) कथित होताहै । रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, ज्येष्ठा, मृगशिरा, अनुराधा, हस्त और अश्विनी, नक्षत्रमें, रवि इत्यादि सातवारमें विशेषकर मंगलवारमें, पांचवें महीनेमें रिक्ताके अतिरिक्त तिथिमें शिशुका प्रथम भूमिमें उपवेशन प्रशस्त है ॥ ४ ॥

अन्नप्राशनम्।

पूर्वेशान्तकसर्पमूलरहितेष्वृक्षेष्वरिक्ते तिथौ षष्ठे मासि सितेन्दुजीवदिवसे गोज्ञर्क्षमीनोदये॥केन्द्राष्टान्त्यत्रिकोणभैः शुभयुतैस्तैरेव पापोज्झितै हित्वेन्दुं रिपुरन्ध्रगं शिशुजनस्यान्नाशनं शोभनम् ॥५॥(१)

अब बालकोंका अन्नप्राशन कथित होताहै।पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपदा, आर्द्रा, भरणी, आश्लेषा और मूलके अतिरिक्त नक्षत्रमें, रिक्ताके अतिरिक्त तिथिमें छठे महीनेमें शुक्र, सोम, बृहस्पति, रवि और बुधवारमें, वृष, मिथुन, कन्या, और मीनलग्नमें, लग्नके केन्द्र में ( लग्न ) चतुर्थ, सप्तम, और दशमस्थानमें, आठवें बारहवें और त्रिकोणमें ( नवें और पांचवें स्थानमें ) शुभ ग्रहके अवस्थित होनेपर और लग्नके उक्त समस्त स्थानोंमें पापग्रहके न होनेपर लग्नसे छठे और आठवें चन्द्रमाको त्याग कर बालकको अन्नप्राशन करावे ॥ ५ ॥

---

(१) एकादश्याञ्च सप्तम्यां द्वादश्यां पञ्चपर्वसु। बलमायुर्यशोहन्यात्छिशूनामन्नभक्षणम् ॥ अष्टमी पौर्णमासी च अमावस्या चतुर्दशी । पञ्चपर्व वदन्त्यार्य्यास्तथा संक्रमणं रवेः । ( इति कचित्पुस्तके मूलम् )

अथ नवान्नभक्षणम्।

मेषूग्राहिशिवान्येषु विभौमशानिवासरे।
अन्नप्राशनवत्कुर्यान्नवान्नफलभक्षणम्॥ ६॥ (क)

अब नवान्न और नवफल भोजन कथित होताहै। पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, मघा, भरणी, आश्लेषा और आर्द्राके अतिरिक्त नक्षत्रोंमें मंगल, और शनिके अतिरिक्त वारमें शुक्लपक्षमें, अन्नप्राशनोक्त लग्नादिमें नवान्न और नवफल भक्षण उचितहै, किन्तु हरिशयनमें मृगनेत्रामें (कृष्णपक्ष) और (सूर्यसे प्रवृत्त होनेवाले) पौष और कार्तिक मासमें नन्दा और त्रयोदश्यादि तिथिमें नवान्नादि भक्षण उचित नहींहै॥६॥

अथ चूडाकरणम्।

चूडा माघादिषट्के लघुचरमृदुभे मैत्रहीनेऽसशङ्के नानंशे सत्सु केन्द्रेष्वशुभगगनगैर्वृद्धिगैर्विष्णुबोधे। नो रिक्ताद्यष्टषष्ठ्यन्त्यतिथिषु न यमाराह· युग्माब्दमासेऽनो जन्मर्क्षेन्दुमासे विघटकुजशशी नर्क्षलग्नेऽर्कशुद्धौ॥ ७॥

चूडाकरण कथित होताहै। माघ, फाल्गुन, चैत्र (क) वैशाख, ज्येष्ठ और आषाढ मासमें, पुष्य, अश्विनी, हस्त, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, चित्रा, मृगशिरा, रेवती और ज्येष्ठानक्षत्रमें अनंशभिन्न अर्थात संक्रमणके अतिरिक्त दिनमें, केन्द्रस्थानमें शुभग्रह और तीसरे ग्यारहवें तथा छठें स्थानमें पापग्रहके स्थित होने

---

(क) चैत्रमासमें रविवारमें चूडा कर्त्तव्यहै।

पर हरिशयनके अतिरिक्त कालमें, रिक्ता, प्रतिपद, अष्टमी, षष्ठी और पूर्णिमाके अतिरिक्त तिथिमें शुक्लपक्षमें शनि और मंगलके अतिरिक्त वारमें युग्मवर्षमें युग्म मासमें, जन्मनक्षत्र, जन्मचंद्र, और जन्ममासके अतिरिक्त तुला, मेष, वृश्चिक, कर्क और सिंहके अतिरिक्त लग्नमें रवि शुद्ध होनेपर चूडाकार्य करै ॥ ७ ॥

नित्यक्षौरम् ।

चूडोदितर्क्षमुदयः क्षण एव चैषामिष्टौ बुधेन्दुदिवसौ क्षुरकर्मशुद्धौ । नेष्टो हरीज्यभवनोपगतोऽत्रसूर्य्यः कालाविशुद्धिरहितं त्वितरत्पुरावत् ॥ ८ ॥

नित्यक्षौर कथित होताहै । चूडोदित नक्षत्रमें वा चूडोदित नक्षत्रके मुहूर्त्तमें लग्न करके बुध अथवा सोम वारमें, सौर ( सूर्यसे प्रवृत्त होनेवाले ) भाद्र, पौष और चैत्रके अतिरिक्त मासमें कालाशुद्धि त्याग भिन्न चूडोक्त समस्तही ( समय ) नित्यक्षौर कर्ममें प्रशस्त होताहै ॥ ८ ॥

कर्णवेधः ।

नो जन्मेन्दुभमाससूर्यरविजक्ष्माजेषुसुप्ताच्युते शस्तेऽर्कै लघुविष्णुयुग्ममृदुभस्वात्युत्तरादित्यभैः । सौम्यैरुव्यायत्रिकोणकण्टकगतैः पापैस्त्रिलाभारि गैरोजोऽब्दे श्रुतिवेध इज्यासितभे लग्ने च काले शुभे ॥ ९ ॥

अस्यार्थः । अब कर्णवेध कथित होताहै जन्मचंद्र, जन्मनक्षत्र और जन्ममासके अतिरिक्तमें, रवि, शनि, मंगलके

अतिरिक्त वारमें, श्रीहरिशयनके अतिरिक्त कालमें, रवि शुद्ध होनेपर पुष्य, अश्विनी, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, स्वाती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद, और पुनर्वसु नक्षत्रमें, लग्नके तीसरे, ग्यारहवें, नवें, पांचवें और केन्द्रस्थानमें शुभ ग्रह होनेपर और तीसरे, ग्यारहवें तथा छठे स्थानमें पापग्रहके अवस्थित होनेपर अयुग्म वर्षमें, धनु, मीन, वृष, और तुलालग्नमें शुद्ध कालमें कर्णवेध करावै ॥ ९ ॥

विद्यारम्भः।

लघुचरशिवमूलाधोमुखस्त्वाष्ट्रपौष्णशाशिषु च हरिबोधे शुक्रजीवार्कवारे।उदितवति च जीवे केन्द्रकोणेषु सौम्यैरपठनदिनवर्ज्जं पाठयेत्पंचमेऽब्दे॥१०॥

अब विद्यारंभ कथित होता है। पुष्य, अश्विनी, हस्त, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, आर्द्रा, मूल, आश्लेषा, कृत्तिका, भरणी, मघा, विशाखा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपदा, चित्रा, रेवती, और मृगशिरा नक्षत्रमें, श्रीहरिके जाग्रत समयमें, शुक्र, बृहस्पति और रविवारमें, बृहस्पतिकी उदित अवस्थामें (काल शुद्ध होनेपर) केन्द्र और त्रिकोण स्थानमें, शुभग्रह होनेपर अनध्याय दिन छोडकर पांचवें वर्षमें बालकको विद्यारंभ करावे ॥ १० ॥

अथोपनयनम्।

जीवार्केन्दूडुशुद्धौ हरिशयनबहिर्भास्करे चोत्तरस्थे स्वाध्याये वेदवर्णाधिप इह शुभदे क्षौरभे

नादितौ च । शुक्रार्केज्यर्क्षलग्ने रविमदनतिथिं प्रोज्झ्य षष्ठाष्टमेन्दुं नो जीवास्तातिचारेऽर्कसित-गुरुदिने कालशुद्धौ व्रतं स्यात् ॥ ११ ॥

अब उपनयन कथित होताहै बालकके गोचरमें बृहस्पति, रवि, चन्द्र और तारा शुद्ध होनेपर, श्रीहरिशयनके अतिरिक्त कालमें, उत्तरायणमें, स्वाध्याय दिनमें, गोचरमें, वेदाधिप और वर्णाधिपके शुभ होनेमें, पुनर्वसु नक्षत्रके अतिरिक्त चूडोदित नक्षत्रमें वृष, तुला, सिंह, धनु, मीन लग्नमें, सप्तमी और त्रयोदशीके अतिरिक्त तिथिमें लग्नकी अपेक्षा षष्ठ और अष्टमस्थ चन्द्र त्यागकर, बृहस्पतिके अस्त और अतिचारादि द्वारा अशुद्ध काल न होनेपर रवि, शुक्र और बृहस्पति वारमें कालशुद्ध होनेपर उपनयन प्रशस्त होताहै ॥ ११ ॥

## समावर्त्तनम् ।

तृतीयलाभारिगतैरसौम्यैः केन्द्रत्रिकोणोपगतैः शुभैश्च । ( क ) चूडोदितर्क्षादि ( ख ) विलग्नयोगे मौञ्जीविमोक्षः शुभदो द्विजानाम् ॥ १२ ॥

समावर्त्तन कथित होताहै लग्नके तीसरे, ग्यारहवें और छठे स्थानमें पापग्रहोंके अवस्थित होनेपर और लग्नके केन्द्र तथा त्रिकोण स्थानमें शुभग्रह होनेपर चूडोदित नक्षत्र तिथिवार योग और लग्नादिमें ब्राह्मणोंको समावर्त्तन (विद्या पाठके अनन्तर जो संस्कार कियाजाता है ) शुभदायक होताहै ॥ १२ ॥

---

( क ) त्रिकोणोपगतैश्च सौम्यैरिति पुस्तकान्वे पाठः ।

( ख ) सौरोदितर्क्षादि । इति क्वचित पुस्तके ।

धनुर्विद्यारम्भः।

अदितिगुरुयमार्कस्वातिपित्र्याग्निचित्राध्रुवहरिव-
सुमूलाश्वीन्दुभाग्यान्त्यभेषु। विशशिशनिबुधाह्ने
विष्णुबोधे विपौषे सुसमयतिथियोगे चापविद्या-
प्रदानम् ॥ १३ ॥

अब धनुर्विद्यारम्भ कहा जाताहै। पुनर्वसु, पुष्य, भरणी हस्त, स्वाती, मघा, कृत्तिका, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी, श्रवण, धनिष्ठा, मूल, अश्विनी, मृगशिरा, पूर्वाफाल्गुनी और रेवती, नक्षत्रमें शनि, सोम और बुधके अतिरिक्त वारमें श्रीहरिके शयन भिन्नकालमें पौष और चैत्रमासके अतिरिक्त मासमें काल शुद्ध होनेपर रिक्ताके अतिरिक्त (शुभ) तिथिमें और शुभयोगादिमें धनुर्विद्या प्रदान करनी चाहिये ॥ १३ ॥

नृपाभिषेकः।

पुष्टैः शुक्रेन्दुजीवैर्ध्रुवलघुवलभिद्विष्णुमैत्रेन्दुपौ-
ष्णैः सल्लग्ने पाकजन्मोदयपतिषु विरन्ध्रारिगेन्दा-
वसौम्यैः। त्र्यायारिस्थैरथाष्टव्ययधनरहितैः स
ग्रहैः केन्द्रकोणे वीर्याढ्ये क्षत्रियेशे सुदिनति-
थियुतेन्दौ नृपस्याभिषेकः ॥ १४ ॥

नृपाभिषेक कथित होता है। शुक्र चन्द्र और बृहस्पतिग्रह स्फुटकिरणद्वारा उदित होनेपर उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी, पुष्य, अश्विनी, हस्त, ज्येष्ठा, श्रवण, अनुराधा, मृगशिरा और रेवती,

नक्षत्रमें शुभग्रहके क्षेत्रमें लग्न करके तत्कालीन दशाधिपति जन्मराश्याधिपति और जन्मलग्नाधिपति ग्रहके शुभ होनेपर तत्कालीन लग्नके सप्तम और अष्टम भिन्न: स्थानमें चन्द्रके अवस्थिति होनेपर तीसरे ग्यारहवें और छठे स्थानमें पापग्रह होनेपर आठवें और बारहवें: स्थान में शुभग्रहोंके अवस्थित न होनेपर क्षत्रियेश ग्रह ( जिस जातिका अभिषेक होगा, उसी जातिका अधिपति) बलवान् होकर केन्द्रमें स्थित होनेपर शुभग्रहके वारमें शुभ ( रिक्ताके अतिरिक्त ) तिथिमें शुभयोग और गोचरमें चन्द्र शुद्ध होनेपर राज्याभिषेक करना चाहिये ॥ १४ ॥

## नववस्त्रपरिधानम् ।

ब्रह्मानुराधवसुपुष्यविशाखहस्ताचित्रोत्तराश्विपवनादितिरेवतीषु । जन्मर्क्षजीवबुधशुक्रदिनोत्सवादौ धार्यं नवं वसनमीश्वरविप्रतुष्टौ ॥ १५ ॥

अभिनव वस्त्र परिधान कथित होताहै । रोहिणी अनुराधा, धनिष्ठा, पुष्य, विशाखा, हस्त, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, अश्विनी, स्वाती, पुनर्वसु, रेवती और जन्मनक्षत्रमें बृहस्पति, बुध, शुक्र, और जन्मवारमें नूतनवस्त्र पहिरैं और विवाहादि उत्सवकार्यमें तथा ईश्वर और ब्राह्मणकी तुष्टिके निमित्त अनुक्तवार और अनुक्त नक्षत्रादिमेंभी नवीन वस्त्र पहरसकता हैं ॥ १५ ॥

## अलङ्कारपरिधानम् ।

पुष्याकांदितिपित्र्यमित्रशशभृद्वित्तध्रुवत्वष्ट्रषु मुक्तादन्तसुवर्णविद्रुममणीन्दध्याद्विबुद्धे हरौ । पुष्टेज्ये

समये शुभे ध्रुवसुराचार्यादितीशेऽङ्गना नो रत्नं
विभृयात्प्रवालकमणीन्शंखं हिता स्वामिनः ॥१६॥

अनन्तर रत्नादिअलंकार परिधान कथित होताहै। पुष्य, हस्त, पुनर्वसु, मघा, अनुराधा, मृगशिरा, धनिष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी और चित्रा नक्षत्रमें, श्रीहरिके जाग्रत्कालमें, बृहस्पतिकी उदितावस्थामें (काल शुद्ध होनेपर) शुभग्रहके वारमें चन्द्र शुद्ध होनेपर मुक्ता, हस्तिदन्तनिर्मित भूषण, सुवर्ण और विद्रुममणि इत्यादि स्त्री और पुरुष दोनोंही धारण करसक्तेहैं। किन्तु पतिका हित चाहनेवाली स्त्रियें उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी, पुष्य और पुनर्वसु नक्षत्रमें रत्न, प्रवाल, मणि और शंख धारण न करैं ॥ १६ ॥

खड्गादिधारणम्।

मूलेन्दुपूर्वात्रययाम्यपित्र्यशक्राग्निसर्पानलशूलिनश्च। खड्गादिसंधारणमेषु कुर्य्यात्तिथौ विलग्ने च शुभे शुभाहे ॥ १७ ॥

खड्गादि धारण कहाजाताहै। मूल, मृगशिरा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपदा, भरणी, मघा, विशाखा आश्लेषा, कृत्तिका और आर्द्रा नक्षत्रमें शुभतिथिमें शुभलग्न और शुभवारादिमें खड्गादि धारण करै ॥ १७ ॥

नवशय्याद्युपभोगः।

मैत्रेन्दुपौष्णपितृभादितिवाजिचित्राहस्तोत्तरात्रय
हरीज्यविधातृभानि । एतेष्वभीष्टशयनासनपादुकादि सम्भोगकार्यमुदितं मुनिभिः शुभाहे ॥ १८ ॥

अब नूतनशय्यादिका प्रथम उपभोग कथित होताहै । अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, मघा, पुनर्वसु, अश्विनी, चित्रा, हस्त, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, श्रवण, पुष्य और रोहिणी नक्षत्रमें शुभवार, और शुभतिथ्यादिमें नूतनशय्या, नवासन, और नूतनपादुकादि प्रथम उपभोग करे ॥ १८ ॥

छेदनं संग्रहश्चैव काष्ठादीनां न कारयेत् ।
श्रवणादौ बुधः षट्के न गच्छेद्दक्षिणां दिशम् ॥१९॥

गृहादिके लिये तृणकाष्ठादिका छेदन संचय निषेध कथित होताहै । श्रवणादि छः नक्षत्रोंमें बुद्धिमान् मनुष्य गृहनिर्माण काष्ठादिका छेदन वा ग्रहण और दृढबन्धन न करे उक्त छः नक्षत्रोंमें दक्षिण दिशाके जानेकाभी निषेध है ॥ १९ ॥

क्रयविक्रयनक्षत्राणि ।

यमाहिशक्राग्निहुताशपूर्वा नेष्टा क्रये विक्रयणे प्रशस्ताः । पौष्णाश्विचित्राशतविष्णुवाताःशस्ताः क्रये विक्रयणे निषिद्धाः ॥ २० ॥

क्रयविक्रय नक्षत्र कहते हैं । भरणी, आश्लेषा, विशाखा कृत्तिका, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्रमें द्रव्यादि क्रय नहीं करसकता है । किन्तु विक्रय कर

---

१ न हरेत्तृणकाष्ठानि न कुर्य्याद्दृढबन्धनम् । अग्निदाहो भयं शोको राजपीडा धनक्षयः । संग्रहस्तृणकाष्ठानां कृते द्रविणपञ्चके । इति क्वचित्पुस्तके मूलम् ।

२ पौष्णाश्विनीपवनवारुणवासुदेवचित्रादितिश्रवणहस्तसुरेज्यभेषु वारे च जीवशशिसूर्यसुतेन्दुजानामारोहणं गजतुरङ्गरथेषु शस्तम् । इति गजाद्यारोहणं पुस्तकान्तरे मूलम् ।

सकताहै। और रेवती, अश्विनी, चित्रा, शतभिषा, श्रवण और स्वाती नक्षत्रमें द्रव्यादि क्रय करे। किन्तु विक्रय निषिद्ध है॥ २०॥

धनप्रयोगनिषेधः।

आजं यमद्वन्द्वमहित्रयञ्च शक्रत्रयं वायुयुगं महेशम्। कार्यो न चैतेषु धनप्रयोगो मृदौ गणे ग्राह्यमृणं न देयम्॥ २१॥

ऋणदान और ग्रहणका निषेध कथित होता है। पूर्वाभाद्रपदा, भरणी, कृत्तिका, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ, स्वाती, विशाखा और आर्द्रा इन नक्षत्रोंमें ऋणदान और ऋणग्रहण न करे। चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा और रेवती इन नक्षत्रमें ऋणग्रहण करे। किन्तु ऋणदान निषिद्ध है। इनके अतिरिक्त नक्षत्रमें ऋण दान करसकताहै॥ २१॥

अश्विन्यादिनक्षत्राणां तारकसंख्याकथनम्।

शिखिगुणरसेन्द्रियानलशशिविषयगुणर्तुपंच यमपक्षाः। विषयैकचन्द्र (क) युग्मार्णवाग्नि रुद्राश्विवसुदहनाः॥ २२॥ भूतशतपक्षवसवो द्वात्रिंशच्चेति तारकामानम्। क्रमशोऽश्विन्यादीनां कालस्ताराप्रमाणेन॥ २३॥

ताराप्रमाणद्वारा विवाहादिकार्यका शुभाशुभ फल जाननेके लिये अश्विन्यादिनक्षत्रोंकी तारकासंख्या कही

(क) विषयैकचन्द्रभूतार्णवाग्नीत्यादि पुस्तकान्तरे पाठान्तरमिति।

जाती है। तीन, तीन, छय, पांच, तीन, एक, पांच, तीन, छै, पांच, दो, दो, पांच, एक, एक, दो, चार, तीन, ग्यारह, दो, आठ, तीन, पांच, एकशत दो, आठ और बत्तीस अश्विनी इत्यादि नक्षत्रोंकी यथाक्रमसे उक्त सब तारका संख्या शुभाशुभ होतीहै, अर्थात् अश्विनीकी तीन, भरणीकी तीन, कृत्तिकाकी छै, रोहिणीकी पांच इत्यादि ॥२२-२३॥

विवाहे तन्नक्षत्रतारकसंख्या परिमितवत्सरैर्वैवाहिकनक्षत्रोक्तशुभाशुभकथनं रोगोत्पत्तिनक्षत्रपरिमितदिनै रोगोपशमनकथनञ्च।

नक्षत्रजमुद्वाहे फलमब्दैस्तारकमितैः सदसत्।
दिवसैर्ज्वरस्य नाशो व्याधेरन्यस्य वा वाच्यः॥२४॥

विवाहनक्षत्रमें तारकसंख्यापरिमित वत्सरद्वारा वैवाहिक नक्षत्रोक्त शुभाशुभ फल और रोगोत्पत्ति नक्षत्रमें तारकसंख्या परिमित दिनद्वारा रोगोपशम कथित होताहै। जिसनक्षत्रमें विवाह होगा, उस नक्षत्रका शुभाशुभ जो फल उक्त है, वही पूर्वोक्त तारकसंख्यापरिमित वर्षमें होताहै और ज्वरादिरोग जिसनक्षत्रमें उत्पन्न होताहै। वहभी उसीनक्षत्रके तारकसंख्यान्वित दिन भोगकर शमित होताहै॥ २४॥

मरणप्रदरोगजन्मनक्षत्रकथनम्।

आर्द्राश्लेषास्वातीज्येष्ठासु च यस्य रोगजन्म स्यात्।
धन्वन्तरिणापि चिकित्सितस्यासवो न स्युः२५॥(क)

आर्द्रादि नक्षत्रमें रोग होनेपर मृत्यु कथित होती है।

---

(क) मूलामघार्द्राश्लेषाभरणीवसुदेवभेषु नरः। गरुडप्रियोऽपि दृष्टो न प्राणिति दन्दशूकेन। इति सर्पक्षतानां नक्षत्रवशेन मरणकथनम्। क्वचित् पुस्तके मूलम्। २५

आर्द्रा, आश्लेषा, स्वाती और ज्येष्ठानक्षत्रमें जिस मनुष्यको रोग उत्पन्न हो, उसकी चिकित्सा यदि धन्वन्तरि करैं, तोभी उसकी जीवन रक्षा नहीं होसकती२५॥

यः कृत्तिकामूलमघाविशाखासर्पान्तकार्द्रासु भुजंगदष्टः। स वैनतेयेन सुरक्षितोऽपि प्राप्नोति मृत्योर्वदनं मनुष्यः ॥ २६ ॥ (क)

कृत्तिका, मूल, मघा, विशाखा, आश्लेषा, भरणी, और आर्द्रा, जिस मनुष्यको सर्प डसता है। वह, गरुडके द्वारा रक्षित होनेपरभी यमके मुखमें जाता है॥२६॥

मरणप्रदरोगापवादः।

यद्यत्र चन्द्रमास्तस्य गोचरे च शुभप्रदः। तदा नूनं भवेन्मृत्युः सुधासंसिक्तदेहिनः ॥ २७ ॥ (ग)

मरणप्रदनक्षत्रमें रोग होनेपर उसका अपवाद कथित होता है। जिस व्यक्तिके रोगोत्पत्तिसमयमें चन्द्रग्रह गोचरमें शुभहो, उसका देह सुधासिक्तहोनेपरभी प्राण नष्ट होगा, किन्तु चन्द्र गोचरमें शुभफल प्रदानकरनेसे संशय होता है ॥ २७ ॥

प्रश्नलग्नवशेन रोगोपशमनानुपशमनज्ञानम्।

चरराशौ विलग्नस्थे द्विदेहार्द्धे च पश्चिमे।
रोगस्योपशमः प्रश्ने विपर्य्यासे विपर्य्ययः ॥२८॥

---

आर्द्रादिषु रोगे सति मृत्युमाह। आर्द्रेति आर्द्रादिषु यस्य रोगजन्म-स्यात् तस्यासवः प्राणा न स्युरित्यर्थः। २५ ॥

आर्द्रा इति। एषु नक्षत्रेषु देहिनो यस्य रोगोत्पत्तिः स्यात् देववैद्येन चिकित्सितस्यापि तस्य प्राणा न स्युः ॥ २५ ॥

(क) श्लोकोऽयं मूले न दृश्यते टीकाकृद्भिश्च नोद्धृतः।

(ग) इति पुस्तकान्तरे मूलम्।

प्रश्नलग्नद्वारा उपशम और अनुपशम कथित होताहै । यदि चरराशि वा द्व्यात्मक राशिका शेषार्द्ध प्रश्नलग्न हो, तो रोगी मनुष्यके रोगका उपशम जानना चाहिये और राशि तथा द्व्यात्मक राशिका पूर्वार्द्ध प्रश्नलग्न होनेपर वह मनुष्य चिररोगी होताहै ॥ २८ ॥

प्रश्नलग्ने रोगोपशमयोगकथनम् ।

शुभग्रहाः सौम्यनिरीक्षिताश्च विलग्नसप्ताष्टमपंचमस्थाः । त्रिषड्दशा येषु निशाकरः स्याच्छुभं वदेद्रोगनिपीडितानाम् ॥ २९ ॥

प्रश्नद्वारा रोगोपशम कथित होताहै । प्रश्नलग्नमें अथवा प्रश्नलग्नके सातवें, आठवें और पांचवें स्थानमें शुभग्रह अवस्थित होकर वह यदि अन्य शुभग्रहद्वारा अवलोकितहो, तो रोगीमनुष्यकी कुशल समझनी चाहिये । यदि प्रश्नलग्नके तीसरे, छठे, दशवें अथवा ग्यारहवें स्थानमें चन्द्रमा स्थितहो, तोभी रोगी मनुष्यका शुभ जाने ॥ २९ ॥

प्रश्ने रोगिणां मरणयोगद्वयकथनम् ।

पापर्क्षे प्रश्नलग्ने तु पापसंयुतवीक्षिते ।
तथैव चाष्टमे स्थाने रोगिणां मरणं वदेत् ॥ ३० ॥

प्रश्नलग्नद्वारा रोगीमनुष्यकी मृत्यु कथित होतीहै । यदि प्रश्नलग्न पापग्रहका क्षेत्र हो और उसमें पापग्रह अवस्थान करै, अथवा प्रश्नलग्न पापग्रहके द्वारा अवलोकितहो, तो रोगीकी मृत्यु जाननी चाहिये । प्रश्नलग्नका आठवां स्थान पापग्रहका क्षेत्र अथवा पापग्रहयुक्त किम्वा पापग्रहसे अवलोकित होनेपरभी रोगीकी मृत्यु होतीहै ॥ ३० ॥

परदेशस्थस्य रोगज्ञानं मरणज्ञानञ्च।

मन्दः पापसमेतो लग्नान्नवमः शुभैर्युतदृष्टः।
रोगार्त्तः परदेशे चाष्टमगो मृत्युकर एव ॥ ३१ ॥

विदेशस्थित मनुष्यका रोगज्ञान और मृत्युज्ञान कथित होता है। यदि पापग्रहयुक्त शनि प्रश्नलग्नके नवमस्थहोकर शुभग्रहयुक्त वा शुभग्रहद्वारा अवलोकित न हो,तो विदेशीय मनुष्यको रोगपीडित जानना चाहिये। और यदि पापग्रहयुक्त शनिग्रह यदि प्रश्नलग्नमें अष्टमस्थ होकर शुभग्रहयुक्त वा शुभग्रहकर्तृक अवलोकित न हो तो विदेशीय मनुष्यका रोगपीडित होकर प्राणपरित्याग करना जाने ॥ ३१ ॥

औषधकरणम्।

द्व्यङ्गोदये गुरुबुधेन्दुसितेषु तेषां वारे रवेश्च सुतिथौ सुविधौ सुयोगे। भेषूग्रपन्नगविशाखशिवेतरेषु जन्मर्क्षविष्टिरहितेष्वगदः शुभाय ॥ ३२ ॥

अब औषधकरण कथित होता है। द्व्यात्मक अर्थात् मिथुन, कन्या, धनु और मीनलग्नमें बृहस्पति, बुध, चन्द्र और शुक्रग्रहके अवस्थित होनेपर शुभग्रहके वार और रविवारमें चन्द्रशुद्धि होनेसे शुभतिथि और शुभयोगमें पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पूर्वाभाद्रपद, मघा, भरणी, आश्लेषा,विशाखा और आर्द्राके अतिरिक्त नक्षत्रमें जन्मनक्षत्रके अतिरिक्त और विष्टिके अतिरिक्त करणमें औषधकरण प्रशस्तहै अर्थात् वह औषधी रोगीके आरोग्यका निमित्त होती है ॥ ३२ ॥

### औषधभक्षणम् ।

पौष्णाश्विनीद्रविणशक्रसमीरपुष्यहस्तादितीन्दु
हरिमूलहुताशमित्रैः । चित्रान्वितैर्भृगुबुधेन्दुरवी-
ज्यवारे भैषज्यपानमचिरादपहन्ति रोगान् ॥२३॥

औषधभक्षण कहते हैं । रेवती, अश्विनी, धनिष्ठा, ज्येष्ठा, स्वाती, पुष्य, हस्त, पुनर्वसु, मृगशिरा, श्रवण, मूल, कृत्तिका ( मतान्तरमें विशाखा ) अनुराधा और चित्रानक्षत्रमें शुक्र, बुध, सोम, रवि और बृहस्पतिवारमें रोगी मनुष्य प्रथम औषधिसेवन करनेसे तत्काल सब रोग नष्ट होतेहैं ॥ २३ ॥

### बस्तिविरेचनवधे शुद्धिः ।

चित्रायुगे विधुयुगे मित्रयुगे लघुषु वारुणाविष्णवोः।
बस्तिविरेचनवेधाः शुभदिनातिथिचन्द्रलग्नेषु ॥ २४ ॥

बस्तिविरेचनादि कथित होताहै । चित्रा, स्वाती, रोहिणी, मृगशिरा, अनुराधा, ज्येष्ठा, पुष्य, अश्विनी, हस्त, शतभिषा, और श्रवणनक्षत्रमें शुभग्रहके वारमें शुभतिथिमें, चन्द्र शुद्ध होनेपर शुभलग्नमें बस्तिविरेच-नादि अर्थात नाभिके नीचे व्यथा होनेपर मण्डादिका प्रलेपदान और अन्तर्धौत और व्रणादि वेधकरे ॥ २४ ॥

### रोगिस्नानम् ।

व्यादित्येषु चरेषु शक्रदिनकृत्पुष्योग्रचन्द्रेषु च
क्रूराहे व्यतिपातविष्टिदिवसेष्विन्द्रावशस्ते तथा ।

केन्द्रस्थेष्वशुभेष्व कामतिथिषु स्नानं गदोन्मुक्तितः
शस्तं तत्र न शोभना विधिभुजंगर्क्षेन्दुसद्वासराः ३५॥
दशमी नवमी चैव प्रतिपच्च त्रयोदशी। तृतीया
च विशेषेण स्नाने चैता विवर्जयेत् ॥ ३६ ॥

आरोग्यस्नान कथित होता है। पुनर्वसु वर्जितचरगणमें, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषानक्षत्रमें, अथवा ज्येष्ठानक्षत्रमें किम्वा हस्त, पुष्य, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पूर्वाभाद्रपद, मघा, भरणी और मृगशिरा नक्षत्रमें, रवि, मंगल और शनिवारमें व्यतिपातयोगमें, विष्टिकरणमें, चन्द्रके गोचरमें अशुद्ध होनेपर, लग्नके केन्द्रस्थानमें अशुभग्रहके अवस्थान करनेपर रिक्तातिथिमें आरोग्यस्नान उचित है। किन्तु रोहिणी, आश्लेषा नक्षत्रमें और शुभग्रहके वारमें कभी आरोग्यस्नान प्रशस्त नहीं है। दशमी, नवमी, प्रतिपद, त्रयोदशी और तृतीया तिथि आरोग्यस्नानमें त्याग देनी चाहिये ३५-३६॥

नृपादिदर्शनम्।

ध्रुवमृदुलघुवर्गे वासवे विष्णुदेवे विकुजरविजवारे
केन्द्रकोणेषु सत्सु। द्वितनुवृषभपंचास्योदये चन्द्रशुद्धौ सुतिथिकरणयोगे दर्शनं भूमिपानाम् ॥३७॥

राजदर्शन कथित होता है। उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, पुष्य, अश्विनी, हस्त, ज्येष्ठा और श्रवण नक्षत्रमें मंगल और शनिके अतिरिक्त वारमें, केन्द्र और त्रिकोणस्थानमें शुभग्रह होनेपर द्व्यात्मक वृष और

सिंहलग्नमें चन्द्रके शुद्ध होनेपर शुभतिथि शुभकरण और शुभयोगमें राजदर्शन शुभ होता है ॥ ३७ ॥

नाट्यारम्भः ।

अनुराधा धनिष्ठा च पुष्या हस्तत्रयं तथा ।
ज्येष्ठा वारुणपौष्णे च नाट्यारम्भे शुभो गणः॥३८॥

नाट्यारंभविहित नक्षत्र कथित होते हैं। अनुराधा, धनिष्ठा, पुष्य, हस्त, चित्रा, स्वाती, ज्येष्ठा, शतभिषा और रेवती नक्षत्रमें नाट्यारम्भ (नाटकका आरम्भ) प्रशस्त होता है ॥ ३८ ॥

हलप्रवाहः ।

पूर्वाग्नियाम्यफणिचित्रशिवान्यभेषु रिक्ताष्टमीविगतचन्द्रतिथीन् विहाय । द्व्यंगालिगोसमुदये विकुजार्किवारे शस्तेन्दुयोगकरणेषु हलप्रवाहः ॥ ३९ ॥

अब हलारम्भ कथित होता है। पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पूर्वाभाद्रपद, कृत्तिका, भरणी, आश्लेषा, चित्रा और आर्द्राके अतिरिक्त नक्षत्रमें रिक्ता, अष्टमी और अमावस्याके अतिरिक्त तिथिमें द्व्यात्मक, वृश्चिक और वृषलग्नमें, मंगल और शनिके अतिरिक्त वारमें, चन्द्रशुद्ध होनेपर शुभयोग और शुभ करणमें हलप्रवाह करना चाहिये ॥ ३९ ॥

बीजवपनम् ।

हलप्रवाहवद्बीजवपनस्य विधिः स्मृतः ।
चित्रायाश्च शुभे केन्द्रे स्थिरर्क्षे मनुजोदये ॥ ४० ॥

बीजवपन कथित होता है । हलप्रवाहोदित नक्षत्रों में और चित्रा नक्षत्रमें लग्नके केन्द्रस्थानमें शुभग्रह होने-

पर वृष, सिंह, वृश्चिक, और कुम्भलग्न स्वीयजन्मलग्न एवं मिथुन, तुला, कन्या और धनका पूर्वार्द्ध इन सब लग्नों-में बीज बोना श्रेष्ठ होता है ॥ ४० ॥

मेधिकरणम् ।

वंशोदुम्बरनीपानां शाकोटबदरस्य च ।
शाल्मलेर्मूषलश्चैव मेधिं कुर्य्याद्विचक्षणः ॥ ४१॥

मेधिकरण अर्थात् धान्यमर्दनके स्थानमें पशुओंको बांधनेके लिये खूंटा गाडना कथित होता है। बांस, गूलर, कदम्ब, शेओरा, बेर और शाल्मली ( सैमल ) काष्ठके मूषलद्वारा मेधि करै ॥ ४१ ॥

धान्यच्छेदनम् ।

याम्याजपादऽहिधनानलतोयशक्रचित्रोत्तरोडुषु कुजार्कजवारवर्जम् । शस्तेन्दुयोगकरणेषु तिथावरिक्ते धान्यच्छिदं स्थिरनरस्वमृगोदयेषु ॥ ४२ ॥

धान्य काटना कहा जाता है। भरणी, पूर्वाभाद्रपद, आश्लेषा, धनिष्ठा, कृत्तिका, पूर्वाषाढ, ज्येष्ठा, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ और उत्तराभाद्रपद नक्षत्रमें मंगल और शनिके अतिरिक्त वारमें शुभयोग और शुभ करणमें रिक्ताके अतिरिक्त तिथिमें स्थिर, द्विपद, स्वीय-जन्मलग्न और मकर लग्नमें धान्यकाटना श्रेष्ठ होताहै ४२॥

धान्यादिसंस्थापनम् ।

याम्याग्निरुद्राहिविशाखपूर्वमहेन्द्रपित्र्येतरभैः शुभाहे। धान्यादि संस्थापनमेव कुर्य्यान्मृगास्थिरद्व्यंगगृहो-दयेषु ॥ ४३ ॥

धान्यादि संस्थापन कथित होताहै। भरणी, कृत्तिका, आश्लेषा, विशाखा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पूर्वाभाद्रपद, ज्येष्ठा और मघाके अतिरिक्त नक्षत्रमें, शुभग्रहके वारमें, मकर, स्थिर और द्व्यात्मक लग्नमें धान्यसंस्थापन करना चाहिये ॥ ४३ ॥

धान्यादिवृद्धिकथनम्।

श्रवणात्रयविशाखाध्रुवपौष्णपुनर्वसूनि पुष्या च।
अश्विन्यथ च ज्येष्ठा धनधान्यविवर्द्धने कथिता॥४४॥

धान्यादिको वृद्धिप्रयोग विषयमें नक्षत्र कथित होते हैं। श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, विशाखा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, रेवती, पुनर्वसु, पुष्य अश्विनी और ज्येष्ठा नक्षत्र धनधान्यके वृद्धिविषयमें प्रशस्त होता है ॥ ४४ ॥

धान्यमूल्यज्ञानम्।

हस्तपूरोवरं मूल्यं पक्षादौ लक्षयेद्बुधः।
उक्तमूरेसमं विद्याच्छेषे धान्यमधः क्रयम् ॥ ४५ ॥

अब धान्यादिका मूल्य ज्ञान कथित होता है। हस्त, शतभिषा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पूर्वाभाद्रपद रोहिणी नक्षत्र यदि प्रतिपदारम्भकालमें हों, तो धान्यादिका मूल्य अधिक होगा। उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद, कृत्तिका, मूल अथवा रेवती नक्षत्र यदि प्रतिपदारम्भकालमें हों, तो धान्यादिका मूल्य समानभावसे रहेगा और उक्त सब नक्षत्रोंके पर पर नक्षत्र यदि प्रतिपदारम्भकालमें हों, तो धान्यादिका मूल्य अल्प दिखाई देगा ॥ ४५ ॥

### गवां यात्रादिकम्।

दर्शाष्टमीभूततिथिप्रजेशपूर्वोत्तराकेशवयाम्यचित्राः।
क्रूराहविष्टिव्यतिपातयोगा नेष्टा गवां चालनविक्र-
यादौ ॥ ४६ ॥

गोयात्रादिका निषेध कथित होता है। अमावस्या, अष्टमी और चतुर्दशी तिथिमें रोहिणी, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद, श्रवण, भरणी और चित्रानक्षत्रमें शनि, रवि और मंगल वारमें विष्टि भद्रातिथिमें और व्यतीपातयोगमें गोचालन और गोविक्रयादि करनेसे शुभ नहीं होता ॥ ४६ ॥

### प्रश्नात्सद्योवृष्टिज्ञानम्।

वर्षप्रश्ने सलिलनिलयं राशिमाश्रित्य चन्द्रो लग्नं
जातो भवति यदि वा केन्द्रगः शुक्लपक्षे। सौम्यै-
र्दृष्टः प्रचुरमुदकं पापदृष्टोऽल्पमम्भः प्रावृट्काले
सृजति न चिराच्चन्द्रवद्भार्गवोऽपि ॥ ४७ ॥

प्रश्नलग्नद्वारा वृष्टिज्ञान कथित होताहै। कर्कट, मकर वा मीन यदि प्रश्नलग्न हो, और उसमें चन्द्रग्रह अवस्थित हो अथवा चन्द्र यदि शुक्लपक्षमें लग्नके केन्द्रस्थानमें रहकर शुभग्रहकर्तृक अवलोकित हो, तो बहुत जलकी वृष्टि होगी और चन्द्र यदि पापग्रहकर्तृक अवलोकित हो, तो अल्प ( थोडे ) जलकी वृष्टि होती है। वर्षाके समय कर्कट, मकर, अथवा मीन लग्नमें यदि शुक्रग्रह अवस्थित हो या शुक्लपक्षमें शुक्रलग्नके केन्द्रस्थानमें रहकर शुभ-

ग्रह कर्तृक अवलोकित हो तो बहुत वृष्टि होगी, पापग्रह-कर्तृक शुक्रके अवलोकित होनेसे अल्पवृष्टि होती है॥४७॥

ग्रहसंस्थाने वृष्टिज्ञानम्।

प्रावृषि शीतकरो भृगुपुत्रात्सप्तमराशिगतः शुभदृष्टः। सूर्य्यसुतान्नवपञ्चमगो वा सप्तमगोऽपि जलागमनाय ॥ ४८ ॥

वर्षासमयमें ग्रहसंस्थानवशतः वृष्टिज्ञान कथित होता है। वर्षाकालमें यदि चन्द्र शुक्रग्रहसे सप्तमराशिगत होकर शुभग्रह कर्तृक अवलोकित हो तो उसदिन वर्षा होगी और शनिसे नवम पंचम वा सप्तमगत चन्द्र शुभ-ग्रहकर्तृक अवलोकित होनेपरभी वर्षाकालमें उसदिन वृष्टि होतीहै ॥ ४८ ॥

कार्त्तिके वातादिज्ञानम्।

शनिभौमदिनेशानां वारे स्वातीगते रवौ।
नष्टचन्द्रे ध्रुवं वातो भवेद्वा वृष्टिरद्भुता ॥ ४९ ॥

कार्तिकमासमें वातादि ( पवन आदि ) ज्ञान कथित होताहै। शनि, मंगल अथवा रविवारमें यदि स्वाती-नक्षत्रगत रवि होकर अमावस्यातिथि हो, तो निःसन्देह अत्यन्त झड और वृष्टि होतीहै ॥ ४९ ॥

गजवाजिक्रिया।

त्वष्ट्रवरुणगुरुपार्श्वास्येषु भौमार्कवारे सुतिथिकरणताराचन्द्रयोगोदयेषु। शुभमिभहयकार्यं चाथ सुप्ते मुरारौ गुरुगृहगतभानौ कल्पयेन्नेभदन्तान्॥५०॥

हाथी और घोडेकी खुरछेदनादि ( नाखून काटना ) क्रिया कही जाती है। धनिष्ठा, शतभिषा, पुष्य, अनुराधा

ज्येष्ठा, मृगशिरा, हस्त, अश्विनी चित्रा, स्वाती, रेवती, और पुनर्वसु, नक्षत्रमें मंगल और शनिवारमें एवं शुभतिथि शुभकरण, शुभतारा, शुभचन्द्र, शुभयोग और शुभलग्नमें हाथी और घोडेकी जिह्वामार्जन ( मुख साफ करना ) रक्तमोक्षण ( फस्त खुलवाना ) खुरछेदनादि चिकित्सा और प्रथम दमनप्रशस्त है, किन्तु उक्त सब योग होनेपर भी श्रीहरिके शयनकालमें अथवा सौर चैत्र वा सौर पौषमासमें हाथीके दंतमार्जन और भूषादिक्रिया उचित नहीं होती ॥ ५० ॥

नवदोलाद्यारोहणम् ।

उग्रेन्दुमूलाहिशिवाग्निवर्ज्जे शस्तेन्दुतारातिथिलग्नयोगे । विष्टिक्षमापुत्रयमाहवर्ज्जे दोलादिकारोहणमाद्यमिष्टम् ॥ ५१ ॥

नूतनदोलादिमें ( पालनेमें आरोहणकराना ) में कथित होता है । पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पूर्वाभाद्रपद, मघा, भरणी, मृगशिरा, मूल, आश्लेषा, आर्द्रा और कृत्तिकाके अतिरिक्त नक्षत्रमें, चन्द्रतारा शुद्ध होनेपर, शुभतिथि, शुभलग्न और शुभयोगमें, विष्टिभद्राके अतिरिक्ततिथिमें, एवं मंगल और शनिके अतिरिक्तवारमें नूतनदोलादिमें प्रथम चढना शुभ होता है ॥ ५१ ॥

पुष्करिण्यारम्भः ।

पुष्यामैत्रकरोत्तरस्ववरुणब्रह्माम्बुपित्र्येन्दुभैः । शस्तेऽर्कैशुभवारयोगतिथिषु क्रूरेष्ववीर्येषु च ॥ पुष्टेन्दौजलराशिगे दशमगे शुक्रे शुभांशोदये । प्रारंभः सलिलाशयस्य शुभदो जीवेन्दुशुक्रोदये ॥ ५२ ॥

अब पुष्करिणी आरंभ कथित होता है। पुष्य अनुराधा, हस्त, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद, धनिष्ठा, शतभिषा, रोहिणी, पूर्वाषाढ, मघा और मृगशिरा नक्षत्रमें, गोचरमें रवि शुद्ध होनेपर शुभग्रहके वारमें शुभयोग और शुभतिथिमें क्रूरग्रहगणहीन पल होनेपर पुष्ट (संपूर्ण) चन्द्र जलराशिमें (कर्क, मीन, कुंभ, अथवा मकरके शेषार्द्धमें) अवस्थित होनेपर दशमस्थानमें शुक्रग्रह अवस्थित होनेपर शुभग्रहके नवांशमें धनु, मीन, कर्क, वृष और तुलालग्नमें जलाशय आरम्भ शुभदायक होताहै ॥ ९२ ॥

वृक्षादि रोपणम्।

वारुणमूलविशाखासौम्यहस्तपुष्यपौष्णेषु ।
तरुगुल्मलतादीनामारामे रोपणं शुभम् ॥ ९३ ॥

वृक्षादिरोपण कथित होताहै। शतभिषा, मूल, विशाखा, मृगशिरा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, हस्त, पुष्य और रेवती, नक्षत्रमें आराम ( उपवन ) में वृक्ष गुल्म लतादिका आरोपण प्रशस्त है ॥ ९३ ॥

देवताघटनम्।

ध्रुवलघुमृदुवर्गे वारुणे विष्णुदेवे मरुदादितिधनिष्ठे शोभने वासरे च। त्रिदशमदनजन्मैकादशे शीतरश्मौ विबुधकृतिरभीष्टा नाडिनक्षत्रहीने ॥ ९४ ॥

देवताघटन कथित होताहै। उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, पुष्य, अश्विनी, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, शतभिषा, श्रवण, स्वाती, पुनर्वसु और धनिष्ठा, नक्षत्रमें शुभग्रहके वारमें

गोचरमें चन्द्रके तृतीय, दशम, सप्तम, जन्मस्थ अथवा एकादशस्थ होनेपर नाडी नक्षत्रहीन दिनमें देवताघटन प्रशस्त होता है ॥ ५४ ॥

सामान्य देवप्रतिष्ठा।

शस्तेन्दौ माघषट्के शुभदिवसतिथौ गोगुरुज्ञर्क्ष-
लग्ने वित्तद्वन्द्वाहियुग्मादितिहयभरणीयुग्विशा-
खान्यभेषु। क्षीणं षष्ठाष्टमेन्दुं हरिशयनमसद्युक्त
लग्नञ्च हित्वा केन्द्रे जीवे च शुक्रे त्रिभवरिपुग्रहे
सत्सु देवप्रतिष्ठा ॥ ५५ ॥

सामान्यदेवताकी प्रतिष्ठा कथित होतीहै। चन्द्रग्रह गोचरमें शुद्ध होनेपर माघादि छः मासमें, शुभग्रहके वारमें शुभतिथिमें, वृष, धनु, मीन, मिथुन और कन्या-लग्नमें धनिष्ठा, शतभिषा, आश्लेषा, मघा, पुनर्वसु, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका और विशाखा, इन सब नक्ष-त्रोंके अतिरिक्त नक्षत्रमें क्षीण चन्द्र और लग्नके षष्ठ तथा अष्टम चन्द्रके अतिरिक्त हरिशयन और पापग्रहयुक्त लग्नको परित्याग करके लग्नके केन्द्रस्थानमें बृहस्पति और शुक्र अवस्थित होनेपर तीसरे ग्यारहवें और छठे स्थानमें पापग्रह होनेपर देवताकी प्रतिष्ठा करै ॥ ५५ ॥

हरिप्रतिष्ठा।

प्राजेशवासवकरादितिभाश्विनीषु पौष्णामरे-
ज्यशशिभेषु तथोत्तरासु। कर्त्तुः शुभे शशिनि
केन्द्रगते च जीवे कार्या हरेः शुभतिथौ
विधिवत् प्रतिष्ठा ॥ ५६ ॥

विष्णुप्रतिष्ठा कथित होतीहै । रोहिणी, ज्येष्ठा हस्त, पुनर्वसु, अश्विनी, रेवती, पुष्य, मृगशिरा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ और उत्तराभाद्रपद, नक्षत्रमें कर्त्ताके गोचरमें चन्द्र शुभ होनेपर बृहस्पतिके केन्द्रमें स्थित होनेपर शुभ तिथिमें यथाविधि विष्णुकी प्रतिष्ठा करे ॥ ५६ ॥

हरिप्रतिष्ठायां विशेषतिथिकथनम् ।

द्वादश्येकादशी राका शुक्ले कृष्णे च पञ्चमी ।
अष्टमी च विशेषेण प्रतिष्ठायां हरः शुभाः ॥ ५७ ॥

विष्णुकी प्रतिष्ठामें तिथि विशेष कथित होतीहै । द्वादशी, एकादशी, पूर्णिमा, दोनों पक्षकी पंचमी और अष्टमी, यह सब तिथि विष्णुकी प्रतिष्ठामें शुभ होती हैं ॥ ५७ ॥

महादेवप्रतिष्ठा ।

पुष्पाश्विशक्रभगदैवतवासवेषु साम्यानिलेश मघ रोहिणिमूलहस्ते । पौष्णानुराधहरिभेषु पुनर्व्वसौ च कार्याभिषेकतरुभूतपतिप्रतिष्ठा ॥ ५८ ॥

महादेवप्रतिष्ठा और वृक्षादिप्रतिष्ठा कथित होती है । पुष्य, अश्विनी, ज्येष्ठा, पूर्वाफाल्गुनी, धनिष्ठा, मृगशिरा, स्वाती, आर्द्रा, मघा, रोहिणी, मूल, हस्त, रेवती, अनुराधा, श्रवण और पुनर्वसु नक्षत्रमें अभिषेक, वृक्षादि प्रतिष्ठा और शिवप्रतिष्ठा करनी चाहिये ॥ ५८ ॥

दीक्षाग्रहणम् ।

ध्रुवमृदुनक्षत्रगणे रविशुभवारे सत्तिथौ दीक्षा ।
स्थिरलग्ने शुभचन्द्रे केन्द्रे कोणे शुभे गुरौ धर्म्मे ५९॥

अब दीक्षा ग्रहण कहते हैं। उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा और रेवती नक्षत्रमें, रवि, सोम, बुध, बृहस्पति और शुक्रवारमें शुभतिथिमें, स्थिरलग्नमें, चन्द्र शुद्ध होनेपर केंद्र और त्रिकोणस्थानमें शुभग्रह होनेपर और बृहस्पतिके नवमस्थ होनेपर दीक्षा ग्रहण करै ॥ ५९ ॥

परीक्षाविधिः ।

नो शुक्रास्तेऽष्टमार्के गुरुसहितरवौ जन्ममासेऽष्टमेन्दौ । विष्टौ मासे मलाख्ये कुजशनिदिवसे जन्मतारासु चाथ ॥ नाडीनक्षत्रहीने गुरुरविरजनीनाथताराविशुद्धौ । प्रातः कार्या परीक्षा द्वितनुचरगृहांशोदये शस्तलग्ने ॥ ६० ॥

परीक्षाविधि कही जाती है। शुक्रग्रहके अस्तगत न होनेपर ( शुद्धकालमें ) रविगोचरमें अष्टमराशिमें अवस्थित न होनेपर और गुर्वादित्ययोग, जन्ममास, गोचरमें अष्टमचन्द्रविष्टिभद्रातिथिमलमास, मंगल और शनिवार, जन्मतारा, और नाडीनक्षत्र विहीन दिनमें गोचरमें बृहस्पति रवि, चन्द्र और ताराशुद्ध होनेपर द्व्यात्मक और चरलग्नके नवांशमें प्रशस्त लग्नमें प्रातः समय परीक्षा करै ॥ ६० ॥

नौकाघटनम् ।

ज्ञभहरिघटलग्ने देवराड्युग्विशाखात्रिनयन विधियाम्यद्वन्द्वसर्पान्त्यभेषु ।सुकरणतिथियोगे शुक्रजीवार्कवारे तरणिघटनमिष्टं चन्द्रतारा विशुद्धौ॥६१॥

अब नौकाघटन कहते हैं । मिथुन, कन्या, सिंह और तुला लग्नमें ज्येष्ठा, मूल, विशाखा, आर्द्रा, रोहिणी, भरणी, कृत्तिका, आश्लेषा और रेवती, नक्षत्रमें शुभकरण शुभतिथि और शुभयोगमें शुक्र बृहस्पति और रविवारमें चन्द्र और ताराशुद्ध होनेपर नौकाघटन शुभदायक होता है ॥ ६१ ॥

घटनस्थानान्नौकाचालनम् ।

शुभाहे विष्णुयुग्मेन्दुभगमैत्राश्विपाणिषु ।
चालनं घटनस्थानान्नावः शुभतिथीन्दुषु ॥ ६२ ॥

घटनस्थानसे नौका चालन कहते हैं । सोम, बुध, बृहस्पति और शुक्रवारमें श्रवण, धनिष्ठा, मृगशिरा, पूर्वाफाल्गुनी, अनुराधा, अश्विनी और हस्त नक्षत्रमें शुभतिथिमें गोचरमें चन्द्रशुद्धि होनेपर घटनस्थानसे नौका चलाना उचित है ॥ ६२ ॥

नौकायात्रा ।

अश्विकरेज्यसुधानिधिपूर्वमैत्रधनाच्युतभेषु सुलग्ने ।
तारकयोगतिथीन्दुविशुद्धौ नौगमनं शुभदं शुभवारे ॥ ६३ ॥

नौकायात्रा कथित होती है । अश्विनी, हस्त, पुष्य, मृगशिरा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पूर्वाभाद्रपद, अनुराधा, धनिष्ठा और श्रवण नक्षत्रमें शुभलग्नमें शुभतारामें शुभयोगमें शुभतिथिमें गोचरमें चन्द्रशुद्धि होनेपर शुभग्रहके वारमें नौकायात्रा प्रशस्त होतीहै ॥ ६३ ॥

नौकायात्रायां नक्षत्रनिन्दाकथनम्।

नौकायात्रासु मृत्युः स्यात् पक्षरुद्रमघासु च।
स्वप्नेनापि नरो गच्छेन्नक्षत्रे क्रूरदूषिते ॥ ६४ ॥ (क)

नौकायात्रामें निषिद्धनक्षत्र कथित होते हैं। भरणी, आर्द्रा, और मघा, नक्षत्रमें नौकायात्रा करनेसे मृत्यु होती है, यही क्या स्वप्नमेंभी यदि क्रूर दूषित नक्षत्रमें नौका- यात्रा करै तो मृत्यु होती है ॥ ६४ ॥

वास्तुलक्षणम्।

स्निग्धा स्थिरा सुरभिगुल्मलता सुगन्धा शस्ता प्रदक्षिणजला च निवासभूमिः। नेष्टा विपर्य्यय गुणा कचशर्करास्थिवल्मीककण्टकिविभीतक संकुला च ॥ ६५ ॥

अब वास्तुभूमिका लक्षण कहते हैं। स्निग्धा स्थिरा अर्थात् पराधिकारके लिये उपद्रवादि विहीन सुगन्धित गुल्मलतादिद्वारा परिवेष्टित और प्रशस्त जलाशयके समीप ऐसी भूमि वास करनेके उपयुक्त होती है। यदि इसके विपरीत गुणयुक्त अर्थात् रूक्ष, पराधिकारादि उप- द्रव द्वारा चंचल, वृक्षादिहीन, दुर्गन्धा, निर्जला और केशशर्करास्थि (वालरेता तथा हड्डीसे) युक्त वल्मीक कंटकयुक्त वृक्ष और थूण मयभूमि हो, तो इस भूमि में कभी वास न करै ॥ ६५ ॥

वास्तुभूमेः प्लवलक्षणम्।

पूर्वप्लवो वृद्धिकरो धनदश्चोत्तरप्लवः।
दक्षिणो मृत्युदश्चैव धनहा पश्चिमप्लुवः ॥ ६६ ॥

(क) नौकेत्यादिश्लोकः प्रक्षिप्तः।

वास्तुभूमिके प्लवका वर्णन करतेहैं। वास्तुभूमिकी पूर्व दिशाप्लव ( नीची ) होनेपर उन्नति होतीहै इसी प्रकार उत्तरदिशा नीची होनेसे धनवृद्धि दक्षिण दिशा नीची होनेसे मृत्यु और पश्चिम दिशा नीची होनेसे धनहानि होतीहै ॥ ६८ ॥

वास्तुभूमेः पूर्वाद्यष्टदिक्षुजलाशयफलम्।

**यागादिस्थे सलिले सुतहानिः शिखिभयं रिपु-भयञ्च। स्त्रीकलहः स्त्रीदौष्ट्यं नैःस्वं वित्तात्मज-विवृद्धौ ॥ ६७ ॥**

वास्तुभूमिकी पूर्वादि दिशा और विदिशामें जलाशयका फल कहा जाता है। वास्तुभूमिकी पूर्वदिशामें जलाशयके होनेसे सब हानि होतीहै। इसी प्रकार अग्निकोणमें अग्निभय दक्षिणमें शत्रुभय, नैर्ऋतकोणमें स्त्रीकलह, पश्चिममें स्त्रीकी दुश्चरित्रता, वायुकोणमें निर्धनता, उत्तर में धनवृद्धि और ईशानकोणमें जलाशय होनेसे पुत्रादिकी वृद्धि होती है ॥ ६७ ॥

गृहारम्भः।

**आदित्ये मूककर्किक्रियमिथुन घटालिस्थिते सत्समेतैः केन्द्राद्यान्त्यैरसौम्यैस्त्रिभवरिपुगतैः सुस्थिर-ग्राम्यलग्ने ॥ मेषु स्वाराडिशाखादिति फणिदहनो-ग्रेतरेष्वर्कशुद्धौ वेश्मारम्भः शुभः स्यात्सुति-थिशुभविधौ भौमसूर्यैन्तराहे ॥ ६८ ॥**

अब गृहारम्भ कथित होताहै। सौर कार्त्तिक, श्रावण, वैशाख, आषाढ, फाल्गुन और अगहनमासमें लग्नके केन्द्र अष्टम और बारहवें स्थानमें शुभग्रह होनेपर तीसरे

ग्यारहवें और छठे स्थानमें पापग्रह अवस्थित होनेपर स्वीय जन्मलग्न और वृष, सिंह, वृश्चिक, कुंभ, मिथुन, तुला, कन्या और धनुलग्नके पूर्वार्द्धमें ज्येष्ठा, विशाखा, पुनर्वसु, आश्लेषा, कृत्तिका, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ, पूर्वाभाद्रपद, मघा और भरणीके अतिरिक्तनक्षत्रमें, रविशुद्धि होनेपर शुभतिथिमें, चन्द्र शुद्धहोनेपर मंगल और रविके अतिरिक्तवारमें गृहारम्भ शुभजनक होताहै ॥ ६८ ॥

नक्षत्रशुध्या वासगृहस्थाननिर्णयः ।

कृत्तिकाद्यास्तु पूर्वादौ सप्तसप्तोदिताँ क्रमात् ।
यद्दिश्यं यस्य नक्षत्रं तस्य तत्र गृहं शुभम् ॥ ६९ ॥

अब नक्षत्रशुद्धि अर्थात् स्वनक्षत्रक्रमसे पूर्वदिशामें गृहस्थान निर्णीत होताहै । कृत्तिकादि सात सात नक्षत्र पूर्वादिचारों दिशाओंमें सन्निवेशित करनेसे गृहस्वामीका जन्मनक्षत्र जिस दिशामें पडे, उसी दिशामें गृह निर्माण करनेसे शुभ होताहै ॥ ६९ ॥

वाट्यां प्रशस्तवृक्षरोपणम् ।

पूगश्रीफलनारिकेललवनीजम्बीरकण्ठाफलाश्चूता
दाडिमनागरंगमधुका रम्भाशिरीषामलाः । जाती-
चम्पकमल्लिका बकुलकाः शोभाञ्जनः पाटलो
देवाशोकजयन्तिका तगरिका नित्यं श्रियं वर्द्धते७०॥

घरमें किस किस वृक्षको रोपण करना चाहिये सो कहतेहैं । सुपारी श्रीफल, नारिकेल, नवनीफल जँभी-रीनींबू, कण्ठपूर, आम, दाडिमी, नागरंग, मधुपर्णी, केला, सिरस, आमला, जाती(जायफल अथवा आंवला)

चम्पक, मल्लिका ( मालती )बकुल, सेंजना, पाटल, देव-दारु, अशोक, जयन्ती और तगर, इन सब वृक्षोंको घर में लगानेसे श्रीकी वृद्धि होती है ॥ ७० ॥

वाट्यां वृक्षरोपणनिषेधः ।

धवखदिरपलाशा निम्बखर्जूरजम्बूसरललकुच-
चिञ्चा काञ्चनस्थूलशिम्बा । कलिविटपिकपित्थै
रण्डधुस्तूरपथ्या विदधाति धनहानिं सप्तपर्णः
स्नुही च ॥ ७१ ॥

घरमें कौन कौनसा वृक्ष न लगावें सो कहते हैं । धव ( धाय ) खैर, पलाश, नींब, खजूर,जामुन, सरल,लकुच, तेंतुल, काञ्चन, ( चम्पा ) स्थूल, शिम्बा, बग्डा, कैथ, अरण्ड, धतूरा, हरड, सप्तपर्ण ( वृक्षविशेष ) और स्नुही, ( निर्गुण्डी ) यह सब वृक्ष गृहमें लगानेसे धनहानि होती है ॥ ७७ ॥

नागशुध्या वास्तुस्थाननिर्णयः ।

पूर्वादिषु शिरः कृत्वा नागः शेते त्रिभिस्त्रिभिः ।
भाद्राद्यैर्वामपार्श्वेन तस्य क्रोडे गृहं शुभम् ॥ ७२ ॥

अब नागशुद्धिद्वारा गृहस्थानका निर्णय होताहै । भादों इत्यादि तीन तीन महीनोंमें पूर्वादिक्रमसे मस्तक रखकर नाग वाम पार्श्वमें शयन करता है । इस नागके क्रोडदेश ( गोद अर्थात् मध्यभागमें ) गृहारम्भ शुभदा-यक होता है ॥ ७२ ॥

एकशालादिव्यवस्था ।

एकं नागोडुसशुद्धौ द्वे चेद्दक्षिणपश्चिमे ।
त्रिशालं पूर्वतो हीनं कार्यं वा सौम्यवर्जितम् ॥७३॥

एकादि गृहारम्भ कथित होता है। वास्तुभूमिमें नूतन एक गृह बनाना हो तो नाग और नक्षत्रशुद्धि देखकर बनावे। दो गृह बनाने हों तो वास्तुके दक्षिणओर पश्चिम भागमें बनाना चाहिये और यदि तीन गृह बनाने हों तो पूर्वभाग वा उत्तरभाग त्यागकर गृहनिर्माण करे, किन्तु दक्षिण वा पश्चिम भाग त्यागकर कभी गृह निर्माण न करे ॥ ७३ ॥

पूर्वादिषु चतुर्दिक्षु गृहबन्धध्रुवाः।

पूर्वादिषु चतुर्दिक्षु वाममेकादयो ध्रुवाः।
प्रस्तारस्याथ दैर्घ्यस्य त एवैकसमन्विताः ॥ ७४ ॥

पूर्वादिचारों दिशाओंके गृहबन्धके ध्रुवांक कथित होते हैं। वामावर्त्तके क्रमसे प्रस्थ ( शिला ) का परिमाण पूर्वादिचारों दिशाओंमें एकादि अंक ध्रुवांक हैं अर्थात् पूर्वदिशामें एक, उत्तरमें दो, पश्चिममें तीन, दक्षिणमें चार और दीर्घका परिमाण पूर्वादिक्रमसे वामावर्त्तमें एकाधिक एकादि अंक ध्रुवांक है अर्थात् पूर्वमें दो उत्तरमें तीन पश्चिममें चार दक्षिणमें पांच ॥ ७४ ॥

वायव्यादिचतुष्कोणेषु गृहबन्धध्रुवकथनमुभयतः स्वेच्छानुरूपचतुःसंख्यादानेन ध्रुववृद्धिश्च।

वामं वातादिकोणेषु ध्रुवाः प्रस्तरदैर्घ्ययोः।
एकाद्याः स्वेच्छया सर्व्वे कार्या वेदसमन्विताः ॥ ७५ ॥

वायव्यादि कोणमें वाम अर्थात् विपरीत ( वायु नैर्ऋति, अग्नि और, ईशान ) क्रमसे प्रस्थमें एकादि अंक ध्रुवांक हैं अर्थात् वायुकोणमें एक, नैर्ऋतकोणमें दो, अग्नि कोणमें तीन, ईशानकोणमें चार और दीर्घमें एकाधिक

एकादि अंक ध्रुवांक होता है। यथा वायुकोणमें दो, नैर्ऋतकोणमें तीन, अग्निकोणमें चार, ईशानकोणमें पांच। दिक् और कोण इनको आठ स्थानमेंही स्वेच्छानुसार चार मिलाकर ध्रुवाङ्क कियाजाता है॥ ७५॥

गृहाणामायज्ञानम्।

व्यासेन गुणिते दैर्घ्यें वसुभिर्विहृते ततः।
यच्छेषमायं तं विद्यात् पूर्वादिभवनाष्टके॥ ७६॥

गृहका आयज्ञान (लाभविधिके जाननेकी क्रिया) कथित होताहै। प्रस्थके हस्तपरिमित अंकद्वारा दीर्घके हस्तपरिमित अंकको गुणकरके आठसे घटानेपर जो अंक शेष रहे, वही पूर्वादि अष्टकोणका आय अंक होगा॥ ७६॥

गृहाणां नक्षत्रानयनम्।

तस्माद् व्यासगुणाद्दैर्घ्यात् पुनर्मङ्गलताडितात्॥
त्रिघनेन हृताच्छेषं नक्षत्रं तस्य वेश्मनः॥ ७७॥

गृहका नक्षत्रज्ञान कथित होता है। प्रस्थांक द्वारा गुणित दीर्घपरिमित अंकको पुनर्वार आठद्वारा पूर्ण करके सत्ताईससे हरण करनेपर जो अंक शेष रहे, उसको उस गृहका नक्षत्र जाने॥ ७७॥

गृहाणां व्ययकथनम्।

वसुशिष्टं यदा जातं नक्षत्रं भवति व्ययः।
व्ययाधिकं न कर्त्तव्यं गृहमायाधिकं शुभम्॥७८॥

गृहका व्यय कथन होता है। पूर्वोक्त वचनानुसार गृह नक्षत्र निर्णय करके उसको आठद्वारा घटानेसे शेष जो अंक रहे उसका नाम व्यय है। आयके अंककी अपेक्षा

व्ययका अंक अधिक होनेपर वैसागृह न करै किन्तु व्यय के अंककी अपेक्षा आयका अंक अधिक होनेपर वह गृह करनेसे शुभ होताहै ॥ ७८ ॥

गृहाणां नक्षत्रव्यवस्था।

प्रत्यग्दक्षिणयोर्भं द्रविणाद्यं विदिक्षु दहनादि ।
पूर्वोत्तरयोर्गृहयोराश्विन्यादीनि भानि स्युः ॥ ७९ ॥

पूर्वोक्त गृहनक्षत्रकी व्यवस्था कथित होतीहै। पश्चिम और दक्षिण दिक्स्थ गृहका नक्षत्र धनिष्ठादि होताहै। इसीप्रकार विदिक् (कोण) स्थित गृहका नक्षत्र कृत्तिकादि एवं पूर्व और उत्तरादिक् स्थित गृहका नक्षत्र अश्विनी इत्यादि होताहै ॥ ७९ ॥

गृहारम्भे लोकपालादिपूजा।

बलिभिः पुष्पधूपाद्यैर्लोकपालानथ ग्रहान् ।
पूजयेत् क्षेत्रपालांश्च भूतक्रूरांश्च बाह्यतः ॥ ८० ॥

अब गृहारंभके समय लोकपालादिकी पूजा कही जाती है। प्रशस्त पुष्प और धूपादि उपहारद्वारा लोकपाल (दशदिक्पाल) नवग्रह और क्षेत्रपालादि देवताओंकी पूजा करै और घरके बाहर क्रूर भूतगणोंकी पूजा करनी चाहिये ॥ ८० ॥

गृहारम्भे ब्रह्मादिपूजा।

सितपुष्पैस्तथा लाजैस्तिलतण्डुलमिश्रितैः ।
ब्रह्माणं वास्तुपुरुषं तद्देशस्थाश्च देवताः ॥ ८१ ॥

गृहारम्भके समय ब्रह्मादिकी पूजा कहीजाती है। शुक्लपुष्प और तिल तण्डुल मिश्रित खीलोंके द्वारा ब्रह्मा,

वास्तुपुरुष और तत् ग्राम्याधिपति देवताओंकी पूजा-करे ॥ ८१ ॥

सूत्रच्छेदादिफलम् ।

सूत्रच्छेदे भवेन्मृत्युः कीले चावाङ्मुखे रुजः ।
गृहनाथस्थपतीनां स्मृतिलोपे मृत्युरादेश्यः ॥८२॥

गृहारम्भमें सूत्रच्छेदादिका फल कहाजाता है । गृहारम्भके समय सूत्रछिन्न होनेपर गृहस्वामीकी मृत्युहोगी ( गाडीहुई कीली ) उखडजानेसे महारोग होताहै और नाप करनेके समय यदि परिमाण स्मरण न रहे, तो गृहस्वामी और गृहनिर्माताकी मृत्यु होतीहै ॥ ८२ ॥

गृहार्घ्यदानाय स्थापितकलशभङ्गादिफलम् ।

स्कन्धाच्युते शिरोरुक् गलोपसर्गोऽपवर्ज्जिते कुम्भे।
भग्नेऽपि च कर्म्मिवधः कराच्युते गृहपतेर्मृत्युः॥८३॥

अब अर्घ्यके निमित्त स्थापित घटादिके टूटजानेपर दोष कथित होताहै । जल लानेके समय यदि कलश कंधेसे गिरजाय,तो गृहस्वामीको शिरकी पीडा होतीहै । स्थापित घट किसीप्रकारसे अधोमुख होनेपर गलरोग उत्पन्न होताहै, घट टूटजानेपर कर्मी ( कार्य्यकर्त्ता ) की मृत्यु होतीहै और घट हाथसे गिरजानेपर गृहपतिका मरण होताहै ॥ ८३ ॥

सूत्रदानसमये कुब्जादिदर्शननिषेधः ।

कुब्जं वामनकं भिक्षुं वैद्यं रोगातुरानपि ।
न पश्येत्सूत्रकाले तु श्रियमिच्छन् प्रयत्नतः ॥ ८४ ॥

सूत्रपातादिके समय कुब्जादिको देखनेका निषेध कथित होताहै । गृहस्वामी यदि विभूतिकी अभिलाषा

करै, तो गृहारम्भके सूत्रपात समयमें कुब्ज ( कुबडे ) वामन ( बौने ) भिक्षुक, वैद्य और रोगग्रसित मनुष्यका दर्शन न करै ॥ ८४ ॥

सूत्रदानकाले हुलहुलादिश्रवणफलम् ।

श्रुतौ हुलहुलानाञ्च मेघानां गर्जितेन च ।
गजानामपि हंसानां स्वनितं धनदं भवेत् ॥ ८५ ॥

सूत्रदानके समय हुलहुलादि ( आनन्दगान ) श्रवण-फल कथित होताहै । गृहारम्भके सूत्रपात समयमें हुलाहुलिध्वनि स्त्रियोंकी उलुध्वनि ( आनन्दनाद ) मेघ-गर्जन, और हाथी तथा हंसकी ध्वनि सुननेसे धनलाभ होताहै ॥ ८५ ॥

सूत्राद्यारोपणव्यवस्था ।

ईशाने सूत्रपातः स्यादाग्नेये स्तम्भरोपणम् ।
द्वारं नवमभागे तु कार्यं वामात्प्रदक्षिणम् ॥ ८६ ॥

गृहारम्भके सूत्रादिका आरोपण कथित होताहै । गृहारम्भके समय ईशानकोणमें सूत्रपात और अग्निको-णमें स्तम्भरोपण करना चाहिये और वामावर्त्तके क्रमसे अष्टमभागका एकभागमें द्वार करै ॥ ८६ ॥

द्वारव्यवस्था ।

तृतीयतुर्य्ययोः प्राच्यां याम्ये तुर्य्योंथ पश्चिमे ।
तुर्य्यपश्चिमयोः पञ्च त्रिचतुर्थेऽपि चोत्तरे(१) ॥८७॥

---

(१) भीतिं स्त्रीजनतां जयश्रियमथातिथ्यं परं धर्मितां सौजन्यं समतां तथानलभयं त्यागं सुहृन्नाशनम् । नैःस्वं मृत्युमथापि वा धनयशः स्त्रीणां सदार्द्धाङ्गता प्रस्थं जीवितदीर्घतामथ विदुः प्राव्रज्यमृद्धिं कृषेः । पुत्रान्नित्यहजो धृतिं वसुकार्तिं चैवं परां सम्मार्तिं उन्मादं जनमुख्यताम्-

किसदिशामें स्थित घरके कितने अंशमें द्वार करना चाहिये, सो कहतेहैं । पूर्वदिक्स्थित घरके तीसरे वा चौथेभागके एकभागमें द्वार करना चाहिये । इसीप्रकार दक्षिण दिक्स्थ घरके चौथेभागमें दरवाजा शुभदायक है और पश्चिम दिक्घरके चौथे वा पांचवें भागके एक भागमें एवं उत्तर दिक्स्थ घरके पांचवें तीसरे अथवा चौथे भागके एकभागमें दरवाजा करना चाहिये ॥ ८७ ॥

गृहप्रवेशः ।

ज्येष्ठापुनर्वसुवर्ज्जं गृहारम्भोदितञ्च यत् ।
तत्सर्वं चिन्तयेद्वेश्म प्रवेशे दैवचिन्तकः ॥ ८८ ॥

अब गृहप्रवेश कहते हैं । ज्येष्ठा, पुनर्वसु वर्जित जो गृहारम्भोक्त नक्षत्रादि हैं, उनमें गृहप्रवेश करै इसवचनसे ज्येष्ठा पुनर्वसु वर्ज्ज, इसप्रकार ( क ) निषेधके पुनः निषेधके हेतु गृहप्रवेशमें उक्त दो नक्षत्र प्रशस्त होतेहैं ॥ ८८ ॥

गृहप्रवेशविधिः ।

कृत्वाग्रतो द्विजवरानथ पूर्णकुम्भं दध्यक्षताम्रदलपुष्पफलोपशोभम् । दत्वा हिरण्यवसनानि तथा द्विजेभ्यो माङ्गल्यशान्तिनिलयं निलयं विशेञ्च ॥ ८९ ॥

अब गृहप्रवेशकी विधि कहीजाती है । गृह स्वामी ब्राह्मण और दधि, अक्षत, आम्रशाखा, पुष्प फलद्वारा

---

विधनान्यायूंषि गेहच्युतिम् । मानित्वं मतिमर्द्दनं सुनिजना ईशानदिक्कादितः ॥ तत्पर्यन्तममूनि वास्तुवसतेर्द्वारः फलानि क्रमात् । इति पुस्तकान्तरे मूलम् ।

( क ) गृहारंभमें ज्येष्ठा और पुनर्वसु नक्षत्र वर्जित रहतेभी यहां वर्जनके वर्जनमें विधि हुई ।

शोभित पूर्णघट आगे करके ब्राह्मणोंको सुवर्ण और वस्त्रा-दिदान पूर्वक नवीन घरमें प्रवेश करे ॥ ८९ ॥

अनियतकालिकश्राद्धविधिः ।

त्रयोदशीं जन्मदिनञ्च नन्दां जन्मर्क्षतारां सितवासरञ्च । त्यक्त्वा हरीशेन्दुकरान्त्यमैत्रध्रुवेषु च श्राद्ध विधानमिष्टम् ॥ ९० ॥

अब अनावश्यक अर्थात् अनियतंश्राद्ध काल कथित होताहै । त्रयोदशी, जन्मतिथि, नन्दातिथि, जन्मराशि जन्मतारा और शुक्रवार त्यागकर श्रवण मृगशिरा, हस्त, रेवती, अनुराधा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी नक्षत्रमें श्राद्ध प्रशस्त होताहै ॥ ९० ॥

शान्तिकपौष्टिकशुद्धिः ।

शुभग्रहार्कवारेषु मृदुक्षिप्रध्रुवेषु च ।
शुभराशीन्दुलग्नेषु शुभं शान्तिकपौष्टिकम् ॥ ९१ ॥

अब शान्तिक और पौष्टिक कर्म कहतेहैं । शुभग्रहके वार और रविवारमें चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती पुष्य, अश्विनी, हस्त, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद और रोहिणीनक्षत्रमें शुभराशिमें चन्द्रगोचरमें शुद्ध होनेपर एवं शुभलग्नमें शान्तिक और पौष्टिक कार्य करने चाहियें ॥ ९१ ॥ इति महीन्तापनीय श्री श्री निवासविरचितायां शुद्धिदीपिकाभाषाटीकायां नामा-दिनिर्णयोनाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

# अष्टमोऽध्यायः।

## जेययातृविवेकः।

दैवहीनं रिपुं जेतुं यायाद्दैवान्वितो नृपः।
योज्या दैवान्वितामात्या दैवहीने तथात्मनि ॥ १ ॥

अब यात्राअध्याय कहाजाता है। कामज और क्रोधज, वासनासक्त, विनष्टधर्म और त्रिविध उत्पातद्वारा पीडित इसप्रकार दैवहीन शत्रुको जीतनेकेलिये दैवयुक्त नृपति गमनकरै और यदि नृपति दैवहीन हो, तो वह स्वयं नजाकर दैवयुक्त मन्त्रीको शत्रुजयके निमित्त भेजे ॥ १ ॥

## दैवहीनदैवान्वितलक्षणम्।

व्यसनी विनष्टधर्मा त्रिविधोत्पातप्रपीडितो यश्च।
पुरुषः स दैवहीनः कथितो दैवान्वितोह्यन्यः ॥ २ ॥

दैवहीन और दैवान्वितके लक्षण कहेजाते हैं। कामज दश और क्रोधज आठ यह अठारह प्रकार वासनासक्त विहित राजधर्म विहीन एवं दिव्य भौम और आन्तरिक्ष इनत्रिविध उत्पातद्वारा पीडित जो मनुष्य है, उसको दैवहीन कहाजाता है। इसके अतिरिक्त, अर्थात् व्यसनमें अनासक्त, स्वधर्मनिरत, और त्रिविध उत्पात रहित मनुष्य दैवान्वित है ॥ २ ॥

## त्रिविधोत्पातनिर्णयः।

दिव्यं ग्रहर्क्षवैकृतमगचरजं भूमिजं खजं चान्यत्।
दिव्यमनिष्टं शान्त्या नश्यति भौमंहिनाभसं याप्यम् ३॥

त्रिविध उत्पात कहते हैं। ग्रहकृत विकार ( दशा और गोचरादिमें रिष्ट) नक्षत्रकृत विकार ( नाडीनक्षत्र उपता-

प्रकृत ) इनदोनोंको दिव्य उत्पात कहाजाता है, अगच-
रज अर्थात् पर्वतादिज ( भूकम्पादि ) वृक्षज अयोग्यकाल
फलित अर्थात् असमयमें फलितफल पुष्पादि एवं अन्य-
वृक्षमें अन्यफल पुष्पादिकी उत्पत्ति इनसबको भूमिज
उत्पात कहतेहैं और खज अर्थात् उल्कापात, निर्घातशब्द
( ओले गर्जना ) धूमकेतुका उदय, ग्रहयुद्ध और रजो
वृष्टि इत्यादि यह सब आन्तरिक्ष उत्पात कहेगयेहैं।
दिव्य अनिष्ट शान्तिद्वारा नष्ट होताहै। भौम और नाभ-
से उत्पात शान्ति करनेपरभी कुछ विलम्बसे ( यथा
कालमें ) प्रशमित होताहै॥ ३॥

त्रिविधोत्पातशान्तिः।

दिव्यमपि शममुपैति प्रभूतकनकान्नगोमहीदानैः।
रुद्रायतने भूमौ गोदोहात्कोटिहोमाच्च ॥ ४ ॥

त्रिविधउत्पातकी शान्ति कहतेहैं। दिव्य उत्पातभी
अधिक स्वर्ण, अन्न, गो, और भूमिदानसे शांत होताहै
और रुद्रायतन, भूमिमें गोदोहन और करोड होम कर-
नेसेभी शमन होताहै, नाभसादि उत्पातभी बहुत प्रती-
कारसे नष्ट होताहै॥ ४॥

वेलामण्डलनिर्णयः।

प्राग्द्वित्रिचतुर्भागेषु द्युनिशोरद्भुतेषु सर्वेषु।
अनिलाग्निशक्रवरुणा मण्डलपतयः शुभाशुभंकुर्युः५

त्रिविध उत्पातमें वेलाक्रमसे ( समयके क्रमानुसार )
वायव्यादि मण्डल कहतेहैं। दिन और रात्रिके प्रथम,
दूसरे चौथे प्रहरमें दिव्य, भौम और अन्तरिक्ष उत्पात
उपस्थित होनेपर यथाक्रमसे वायु, अग्नि, इन्द्र, और

वरुणमण्डलाधिपति होतेहैं अर्थात प्रथमप्रहरमें उत्पात उपस्थित होनेपर वायु, दूसरे प्रहरमें अग्नि तीसरे प्रहरमें इन्द्र, और चौथे प्रहरमें उत्पात उपस्थित होनेपर वरुण-मण्डलाधिपति होतेहैं । यह मण्डलाधिपति वक्ष्यमाण नक्षत्रमण्डलद्वारा शुभाशुभफल देतेहैं ॥ ५ ॥

नक्षत्रमण्डलनिर्णयः ।

आर्य्यम्णादिचतुष्कचन्द्रतुरगादित्येषु वायुर्भवेत्
देवेज्याजविशाखयाम्ययुगले पित्रद्वये चानलः ॥
वैश्वादित्रयधातृमैत्रयुगलेष्विन्द्रो भवेन्मण्डलः, स-
र्पौपान्त्यशतान्त्यमूलयुगलेशानेष्वपामीश्वरः॥६॥

नक्षत्रमण्डल कथित होताहै । उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, मृगशिरा, अश्विनी और पुनर्वसु इन सात नक्षत्रोंमें वायुमण्डल होताहै । इसीप्रकार पुष्य, पूर्वाभाद्रपद, विशाखा, भरणी, कृत्तिका, मघा और पूर्वाफाल्गुनी इन सात नक्षत्रोंमें अग्निमण्डल, उत्तराषाढ,श्रवण, धनिष्ठा, रोहिणी, अनुराधा और ज्येष्ठा, इन छः नक्षत्रोंमें इन्द्रमण्डल एवं आश्लेषा, उत्तराभाद्रपदा, शतभिषा, रेवती, मूल, पूर्वाषाढ और आर्द्रा इन सातनक्षत्रोंमें वरुणमण्डल होताहै ॥ ६ ॥

मण्डलस्थशुभाशुभनिर्णयः ।

पवनदहनौ नेष्टौ योगस्तयोरतिदोषदः सुरपव-
रुणौ शस्तौ योगस्तयोरतिशोभनः । सवरुणमरु-
न्मिश्रः शक्रस्तथाग्निसमायुतः फलविरहितः सेन्द्रो
वायुस्तथाग्नियुतोऽम्बुपः ॥ ७ ॥

मण्डलका शुभाशुभफल वर्णित होता है। वायु और अग्नि शुभजनक नहीं है अर्थात् वायुवेलामें वायुनक्षत्रमण्डल और अग्निनक्षत्रवेलामें अग्निनक्षत्रमण्डल शुभफल दायक नहीं होता। वायु और अग्निका मिलना अत्यन्त दोषावह है, वायुवेलामें अग्निनक्षत्र होनेपर अथवा अग्निवेलामें वायुनक्षत्र होनेपर अत्यन्त दोषजनक होताहै। इन्द्र और वरुण शुभजनक होताहै अर्थात् इन्द्रवेलामें इन्द्रनक्षत्र और वरुणवेलामें वरुणनक्षत्र होनेसे शुभ होगा। विशेषतः इन्द्रवेलामें वरुणनक्षत्र और वरुणवेलामें इन्द्रनक्षत्र होनेपर अधिक शुभफल होताहै। वरुणयुक्त वायु मिश्रफलदायक है अर्थात् वरुणवेलामें वायुनक्षत्रमें और वायुवेलामें वरुणनक्षत्रमें मिश्रफलहोताहै। अग्नियुक्त इन्द्रभी मिश्रफलदाता है अर्थात् अग्निवेलामें इन्द्रनक्षत्रमें और इन्द्रवेलामें अग्निनक्षत्रमें मिश्रफल होताहै। इन्द्रयुक्त वायु फलरहित है (इन्द्रवेलामें वायुनक्षत्रमें और वायुवेलामें इन्द्रनक्षत्रमें शुभाशुभ नहीं होता) अग्नियुक्त वरुणभी फलरहित है अर्थात अग्निवेलामें वरुणनक्षत्रमें और वरुणवेलामें अग्निनक्षत्रमें शुभफल अथवा अशुभफल कुछभी नहीं होता॥ ७॥

मण्डलाधिपानां फलपाककालः।

पक्षैश्चतुर्भिर्वेलिनस्त्रिभिरग्निर्देवराट् च सप्ताहात्।
सद्यः फलति च वरुणो येषु न पाकोऽद्भुतेषूक्तः॥ ८॥

मण्डलाधिपतिगणोंके फलपाकका समय निर्णय किया जाताहै। चार पक्ष अर्थात् दो महीनेमें वायु मण्डलोत्पन्न अद्भुत (उत्पात) फल जनक होतेहैं। इसीप्रकार अग्निमण्डलोत्पन्न उत्पात तीन पक्ष (डेढ महीने) में इन्द्र

मण्डलोत्पन्न अद्भुत सप्ताहमें और वरुणमण्डलोत्पन्न शीघ्र ही फलजनक होतेहैं और मिश्रफलदायक मण्डलोत्पन्न उसी उसी कालमें फलदाता होतेहैं ॥ ८ ॥

भूकम्पनिर्घातयोः पाककालनिर्णयो मण्डलैस्त्रिविधोत्पातज्ञानञ्च ।

षड्भिर्मासैः कम्पो द्वाभ्यां पाकश्च याति निर्घातः ।
एवं त्रिविधोत्पातांश्चिन्तयेन्मण्डलैरेभिः ॥ ९ ॥

भूकंप और निर्घात ( वज्रपात ) का पाककाल निर्णय और मण्डलद्वारा तीनों उत्पातका ज्ञान कहाजाताहै । भूकम्प छः महीनेके पीछे फलदायक होता हैं निर्घात दो महीनेके पीछे फलदायक होताहै और पूर्वोक्त मण्डलद्वारा त्रिविध उत्पातके फलको विचारना चाहिये ॥ ९ ॥

मण्डलशान्तिः ।

यन्मण्डलेऽद्भुतं जातं शान्तिस्तद्दैवतोद्भवा ।
तथा शान्तिद्वयं कार्यं मण्डलद्वयजाद्भुते ॥ १० ॥

अब मण्डलकी शान्ति कहीजातीहै । जिस मण्डलमें उत्पात उत्पन्न हो, उसमण्डलके अधिपति देवताकी पूजा व होमादि करनेसेही शान्ति होगी और यदि दो मण्डलमें उत्पात हो तो दोनों मण्डलके दोनों अधिपति पूजा व होमादिरूप शान्ति करनी चाहिये ॥ १० ॥

पार्ष्णिग्राहादिविवेकः ।

पार्ष्णिग्राहः पृष्ठतो भास्करस्य प्राग्यातव्यास्तिग्मरश्मिश्च याता । आक्रन्दोऽर्कात्सप्तमे यः स्थितः स्यात्ततुल्यास्ते शक्तितश्चिन्तनीयाः ॥ ११ ॥

पार्ष्णिग्राहादि ग्रहद्वारा यात्रामें शुभाशुभ विचारा जाता है। सूर्यावस्थित राशिके जितने अंश रविभुक्त हों सूर्यावस्थित राशिकी अपेक्षा दशराशिका शेष उसी परि-माण अंश एकादश द्वादश राशि समस्त और सूर्या-वस्थित राशिका रवि भुक्तांश इन सब स्थानोंमें जो ग्रह हो उसको पार्ष्णिग्राह कहाजाता है। सूर्यावस्थित राशिके रविभोग्यांशमें रविभुक्ता राशिकी अपेक्षा दूसरी तीसरी राशि समस्त और सूर्यावस्थित राशिका रविभोग्यांशपरिमित चौथी राशिका प्रथमभाग इन सब स्थानोंमें स्थित ग्रहोंको यातव्यसंज्ञा होतीहै और उक्त अवस्थित रविकी यातृसंज्ञा होती है सूर्या-वस्थित राशिकी अपेक्षा समस्त स्थान स्थित ग्रहोंका नाम आक्रन्द है,इन समस्त स्थान स्थित ग्रहोंका बला-बल विचार कर राजाको यात्रा करनी चाहिये और यदि उक्त सब स्थानोंमें ग्रह न हों तो राशिके अधिपतिका बल विचार कर यात्रा करै ॥ ११ ॥

आक्रन्दादिविवेकः।

मध्याह्नेऽर्कस्तुहिन किरणो नित्यमाक्रन्दसंज्ञः पौरः पूर्वे भवति दिनकृद्यायिसंज्ञोऽन्यसंस्थः ॥ जीवः सौरिस्तुहिनकिरणस्यात्मजश्चेति पौराः। केतुर्या-यी सभृगुजकुजः सिंहिकानन्दनश्च ॥ १२ ॥

अब आक्रन्दादि योग कहाजाता है। मध्याह्न अर्थात् दिनमानके तीसरे भागके मध्यभागमें रविकी आक्रन्द-संज्ञा होती है। चंद्रग्रह सर्वदाही आक्रन्द संज्ञक पूर्वाह्णमें (दिनमानके तीसरे भागके प्रथम भागमें) रविकी पौर

संज्ञा होती है, दिनके शेष तीसरे अंशमें रविकी यायी संज्ञा होती है बृहस्पति शनि और बुधग्रह पौरसंज्ञक हैं केतु, शुक्र, मंगल और राहु इन सब ग्रहोंकी यायी संज्ञा होती है ॥ १२ ॥

षड्गुणव्यवस्था।

यानं यायिभिरासनं शुभकरैर्वीर्यान्वितैर्नागरैर्द्वैधी-
भावमियाद्यदा शुभकराः पौराः सयायिग्रहाः।
सौम्यैः सन्धिरसद्ग्रहैर्बलयुतैर्युद्धेऽनुकूलैर्जयः सर्व्वै-
रप्यशुभप्रदैर्नरपतिर्दैवान्वितं संश्रयेत् ॥ १३ ॥

पूर्वोक्त संज्ञाफल कथनमें षड्गुणव्यवस्था कही जाती है। पूर्वोक्त यायिग्रहदशा और गोचरादिमें शुभप्रद एवं बलवान् होनेपर यान (गमन) करना चाहिये। नागर अर्थात् पौरग्रह शुभकर और बलवान् होनेपर आसन (स्वस्थानमें रहना) प्रशस्त है। यायिग्रह और पौरग्रह शुभकर होनेपर द्वैधीभाव अर्थात् आसन और गमन कुछेकसैन्यके सहित और कुछेकसैन्यका भेजना उचित है। शुभग्रह बलवान् और शुभप्रद होनेसे सन्धि करनी चाहिये। पापग्रह बलवान् अनुकूल और शुभकर होनेसे युद्धमें जय होतीहै । यायि इत्यादि समस्तग्रह अशुभप्रद होनेसे नरपति दैवयुक्त सामन्त अथवा दैवयुक्तमंत्रीको युद्धादिकार्यमें भेजे ॥ १३ ॥

चतुरुपायव्यवस्था।

साम्नो जीवः सभृगुतनयो दण्डनाथौ कुजार्कौ दान-
स्येन्दुः शिखियमबुधाः सासुरा भेदनाथाः। वीर्य्यो

पैतैरुपचयकरैर्नग्रगैः केन्द्रगैर्वा तत्तत्सिद्धिर्भवति तदहः स्वांशके वापि तेषाम् ॥ १४ ॥

सामादि चारों उपाय कहे जाते हैं। शुक्र और बृहस्पति ग्रह साम उपायका अधिपति होता है इसीप्रकार मंगल और रवि दण्ड नीतिका अधिपति, चन्द्र ग्रह दान उपायका अधिपति एवं केतु, शनि, बुध, और राहुग्रह भेदनीतिका अधिपति होता है। उक्त सामादि नीति का अधिपति बृहस्पति इत्यादिग्रहोंमें जो ग्रह बलवान् है, गोचर और दशामें शुभकर है, उसके लग्नस्थित अथवा केन्द्रस्थित होनेपर उसीके बारह और नवांशमें समादिके उपायकी सिद्धि होती है ॥ १४ ॥

विज्ञातजन्मायुर्दशान्तर्दशादेः पुरुषस्य
यात्रादानाधिकारकथनम् ।

यात्राविधिरुपदिष्टो विजिगीषोर्विदितजन्मसमयस्य।
प्रत्यब्दमासवासरविभक्तसुखदुःखरिष्टस्य ॥ १९ ॥

विज्ञातजन्मायुर्दशान्तर्दशापुरुषका यात्राधिकार कथित होताहै। जिस विजयाकांक्षीके प्रतिवर्ष, प्रति मास और प्रतिदिनका विभक्त सुख, दुःख और रिष्टादि जानाजाता है, इसप्रकार ज्ञातजन्मकालपुरुषकी यात्राविधिका उपदेश करना चाहिये ॥ १९ ॥

अविदितजन्मायुर्दशान्तर्दशादेः पुरुषस्य प्रश्ननिमित्तादिभिः यात्राविधिनिषेधकथनम् ।

अथवा प्रश्ननिमित्तैः शुभमशुभं वा फलं निरूप्याग्रे।
प्रस्थाप्यो वा नृपतिर्विदुषा निभृतं निषिध्यो वा १६॥

नहीं जानें जन्मकालपुरुषके प्रश्नद्वारा यात्राकी विधिनिषेध कथित होताहै। अज्ञातजन्मकालपुरुषके प्रथम पण्डितगण प्रश्नकालगत निमित्तद्वारा (प्रश्न करनेके समय जितना समय अतिक्रान्त हुआ हो) यात्राका शुभ हो वा अशुभ हो फल निरूपण करके शुभ होनेपर राजाको यात्राकी विधि दे और अशुभ होनेपर निभृत (गुप्त) अर्थात् एकान्त स्थानमें जानेका निषेध करै॥१६॥

यात्राप्रश्नविधिः।

प्रश्ने मनोरमा भूर्माङ्गल्यद्रव्यदर्शनश्रवणे च। यदि चादरेण पृच्छति दैवज्ञं तदा निर्द्दिशेद्विजयम्॥१७॥

प्रश्नविधिद्वारा यात्रा विषयमें शुभ कथित होता है। मनोहर स्थानमें यदि यात्राका प्रश्न अथवा यात्राप्रश्नकालमें माङ्गल्य द्रव्य दर्शन वा माङ्गल्य वस्तुका नाम सुना जाय अथवा यदि दैवज्ञ (ज्योतिषी) से आदर पूर्वक यात्राका प्रश्न कियाजाय, तो युद्धमें राजाकी विजय निर्देश करै॥ १७॥

प्रश्नेऽङ्गविशेषस्पर्शनादिभिर्विजयज्ञानम्। स्तन चरणतलोष्ठाङ्गुष्ठहस्तोत्तमाङ्गश्रवणवदननासागुह्य रन्ध्राणि भूपः। स्पृशति यदि कराग्रैर्गण्डकट्यं शकं वा श्रुतिगमशुभशब्दान्व्याहरञ्छास्ति शत्रून्॥ १८॥

यात्रा प्रश्नमें अंगस्पर्शनादि द्वारा जय ज्ञान कथित होता है। स्तन पैरका तलुआ होठ अंगूठा, हाथ, मस्तक कर्ण, मुख, नासिका, गुदा, गण्ड, कमर, अथवा कंधेको यदि राजा प्रश्नकालमें कराग्रद्वारा स्पर्श करैं किम्वा वीर्थे

प्रकाशक वा मंगलसूचक शब्द कहैं, तो शत्रुका पराजय समझना चाहिये ॥ १८ ॥

यात्राप्रश्नलग्नाज्जयनिर्णयः।

जन्मोदयर्क्षलग्ने तदधिपयोर्वा यियासतः प्रश्ने।
त्रिषडेकादशकोदयेऽष्टवर्गोदये च जयः ॥ १९ ॥

प्रश्नलग्नद्वारा जयका निर्णय कियाजाता है। गमनशील राजाकी जन्मलग्न वा जन्म राशि यदि प्रश्नलग्न हो अथवा जन्मलग्न या जन्म राशिका अधिपति ग्रह यदि प्रश्न लग्नमें हो, तो युद्धमें विजय प्राप्त होगी यदि जन्म लग्नकी तीसरी छठी, ग्यारहवीं और दशवीं राशि अथवा शीर्षोदय (सिंह कन्या, तुला, वृश्चिक, कुंभ, मिथुन वा मीन) राशि प्रश्नलग्न हो या गोचरमें, दशामें वा जन्मकालमें जो ग्रह शुभदायक हो उसी ग्रहका क्षेत्रादि वर्गसमूह प्रश्न लग्न हो, तोभी युद्धमें जय प्राप्त होती है ॥ १९ ॥

यात्राप्रश्ने सिद्धिप्रदयोगद्वयकथनम्।

गुर्वर्कशशिभिः सिद्धिर्लग्नारिदशमस्थितैः।
तद्वल्लग्नारिरन्ध्रस्थैर्जीवशुक्रदिवाकरैः ॥ २० ॥

यात्राप्रश्नमें इष्टसिद्धिप्रद दो योग कथित होतेहैं। यदि प्रश्नलग्नमें बृहस्पति लग्नके छठे स्थानमें रवि और दशवें स्थानमें चन्द्र अवस्थित हो, तो युद्धमें जय होती है। और प्रश्नलग्नमें बृहस्पति, छठे स्थानमें और आठवें स्थानमें रविग्रहके होनेपरभी युद्धमें जय प्राप्त होती है२०॥

यात्राप्रश्नेऽशुभयोगद्वयकथनम्।

तनयस्य बुधः प्रभुः पापैरुदयपुत्रगैः।
शशाङ्कयमयोर्लग्ने मृत्युर्भूपुत्रदृष्टयोः ॥ २१ ॥

यात्राप्रश्नमें दो अशुभ योग कथित होतेहैं। प्रश्नल- ग्नके पांचवें स्थानमें पापग्रहोंके अवस्थित होनेपर प्रश्न कर्त्ताके पुत्रकी मृत्यु होती है और चन्द्रमा शनि प्रश्नल- ग्नमें रहकर यदि मंगलग्रहसे अवलोकित हों तो प्रश्न कर्त्ताकी मृत्यु होतीहै ॥ २१ ॥

यात्राप्रश्ने मृत्युप्रदयोगचतुष्टयकथनम् ।

सवक्रे निधने मन्दे मृत्युर्लग्ने दिवाकरे ।
चन्द्रेऽस्मिंस्त्र्यायमृत्युस्थे ससूर्ये वा वदेद्बुधः ॥ २२ ॥

मृत्युदायक चार योग कथित होते हैं । यात्राप्रश्नल- ग्नके आठवें स्थानमें शनि और मंगल एवं प्रश्नलग्नमें रवि ग्रहके अवस्थित होनेपर प्रश्नकर्त्ताकी मृत्यु होतीहै तथा शनि और मंगल अष्टमस्थ होकर रविके सहित चन्द्र तीसरे ग्यारहवें अथवा आठवें स्थानमें अवस्थित होनेसेभी प्रश्न कर्त्ताकी मृत्यु होतीहै ॥ २२ ॥

यात्राप्रश्ने मृत्युयोगः शत्रुवृद्धिसहितक्षुधामृत्यु प्रदयोगाश्च ।

वक्रज्ञशशिभिर्द्यूने प्रष्टुर्नाशोऽभिगच्छतः ।
क्षुन्मारः शत्रुवृद्धिश्च लग्ने माहेयशुक्रयोः ॥ २३ ॥

यात्राप्रश्नमें मृत्युदायक योग शत्रुवृद्धि योग और क्षुधा द्वारा मृत्युयोग कहा जाता है । प्रश्नलग्नके सातवें स्थानमें मंगल, बुध, और चन्द्रमाके अवस्थित होनेपर गमनेच्छु प्रश्नकर्त्ताकी मृत्यु होतीहै और प्रश्नलग्नके सातवें स्थानमें मंगल एवं शुक्र होनेसे प्रश्नकर्त्ताकी क्षुधाद्वारा मृत्यु और शत्रुवृद्धि होतीहै ॥ २३ ॥

यात्राप्रश्ने त्रासादिप्रदयोगः।

द्यूननैधनयोश्चन्द्रे लग्नं याते दिवाकरे।
विपर्य्यये प्रयातस्य त्रासभंगवधागमः ॥ २४ ॥

यात्राप्रश्नमें त्रासादि प्रदयोग कथित होताहै। प्रश्नलग्नके सातवें वा आठवें स्थानमें चन्द्र और प्रश्नलग्नमें रवि होनेसे प्रश्नकर्त्ताको त्रास, युद्धमें पराजय और मृत्यु होती है। और रवि सातवें वा आठवें स्थानमें एवं चन्द्र प्रश्नलग्नमें होनेसे भी प्रश्नकर्त्ताको त्रास युद्धमें पराजय और मृत्यु होतीहै ॥ २४ ॥

यात्राप्रश्ने बन्धादिप्रदयोगः।

द्वित्रिकेन्द्रगतैः पापैः सौम्यैश्च बलवर्जितैः।
अष्टमस्थे निशानाथे प्रष्टुर्बन्धवधात्ययाः ॥ २५ ॥

यात्राप्रश्नमें बन्धादि योग कथित होताहैं। यदि यात्रा प्रश्नलग्नमें दो केन्द्रमें अथवा तीन केन्द्रमें पाप (रवि शनि और मंगल) ग्रह अवस्थित हों और शुभग्रहगण जिस किसी स्थानमें अवस्थित रहकर हीनबलहों और आठवें स्थानमें चन्द्रग्रह वास करै तो प्रश्नकर्त्ताका बन्धन ताडन और मरण होता है ॥ २५ ॥

यात्राप्रश्ने शत्रुक्षययोगाष्टककथनम्।

शत्रोर्होराराशिस्तदधिपतिर्जन्मभं तदीशो वा।
यद्यस्ते हिबुके वा तथापि शत्रुर्हतो वाच्यः ॥ २६ ॥

यात्राप्रश्नमें शत्रुक्षयकारक योगाष्टक कथित होताहै। यात्रा प्रश्नकालमें यदि प्रश्न लग्नसे सातवें स्थानमें अथवा चौथे स्थानमें शत्रु जन्म लग्नराशि हो वा

जन्मराशि हो अथवा शत्रुका जन्मराश्यधिपति ग्रह अव-
स्थिति करे तो शत्रुकी मृत्यु होगी ॥ २६ ॥

यात्राप्रश्ने क्रूरसौम्यग्रहाणां निधनाद्यवस्थित्या
शुभाशुभयोगातिदेशः ।

निधनहिबुकहोरा सप्तमर्क्षेषु पापा न शुभफलकराः
स्युः पृच्छतां मानवानाम् । दशमभवनयुक्तेष्वेषु
सौम्याः प्रशस्ताः सदसदिदमशेषं यानकालेऽपि
चिन्त्यम् ॥ २७ ॥

यात्राप्रश्नमें पाप और शुभग्रहकी अष्टमादि स्थानमें
अवस्थितिद्वारा शुभाशुभ कहाजाताहै।यात्राप्रश्नके समय
यदि अष्टम चतुर्थलग्न और सातवें स्थानमें पापग्रह अव-
स्थित हो, तो प्रश्नकर्त्ताका अमंगल होताहै और अष्टम
चतुर्थ लग्न सप्तम और दशमस्थानमें शुभग्रह अवस्थित
होनेपर प्रश्नकर्त्ताका शुभफल होताहै । यात्राप्रश्नका-
लका जो सब शुभाशुभ विचारा गया यात्राकालमेंभी
यह सब शुभाशुभ विचारना चाहिये ॥ २७ ॥

यात्राप्रश्ने यात्रा जातकोक्तशुभाशुभयोरतिदेशः ।

शुभाशुभफला योगा यात्रायां जातकेऽपि च ।
ये प्रोक्तास्तानपि प्रश्नेयुक्त्या सञ्चिन्तयेद्बुधः ॥२८॥

शुभ और अशुभदायक जो समस्त योग यात्राका-
लीन और जन्मकालीन कहेगये हैं प्रश्नकालमेंभी बुद्धि-
मानोंको उन सब योगोंका युक्तिद्वारा विचार करना-
चाहिये ॥ २८ ॥

यात्रासमग्रकथनम्।

यात्रार्के झषमेषसिंहधनुषि च्छिद्रे रिपोर्वा शरद्युच्चा-
दिस्थशुभेषु पृष्टगरवौ सर्वग्रहस्योदये। यात्राभंग-
विधावसत्यथ भवेत्सोऽर्कात्त्रिकोणे विधौ भौम-
ज्ञादिषु वा बलिन्यथ सुते गन्तव्यदिक्पालतः॥२९॥

यात्राकाल कहाजाता है। मीन मेष, सिंह और धनु-
राशिमें रविके अवस्थान कालमें (सौर, चैत्र, वैशाख,
भाद्रपद और पौषमासमें) शत्रुका छिद्र उपस्थित होनेपर
शरत्कालमें अर्थात् अशुभ दशाद्वारा शत्रुकारिष्ट, साम-
न्तनाश, एवं दुर्भिक्ष और मरकादिद्वारा सेनाका क्षय
होनेपर आश्विन और कार्त्तिकमासमें, शुभग्रह उच्चस्था-
नस्थित, मूलत्रिकोणस्थ, स्वगृहस्थित अथवा मित्रगृह-
गत होनेपर रविग्रह पीछे रखकर, समस्त ग्रह उदित
रहते, यात्राभंगविधि न होनेपर राजाकी यात्रा श्रेष्ठ
होतीहै। रविके त्रिकोणमें (नवें और पांचवें स्थानमें)
चन्द्रमा होनेपर और मंगलके त्रिकोणमें बुध, बृहस्पति,
शुक्र और शनिग्रह अवस्थित होनेपर यात्राभंगविधि
होती है और गन्तव्यादिगआधिपति ग्रहके पांचवें स्था-
नमें जिस किसी बलवान् ग्रहके अवस्थित होनेपरभी
यात्राभंगविधि होतीहै, इसमें यात्रा निषिद्ध है॥ २९॥

यात्रायां निषिद्धवारकथनम्।

संत्यजेद्दिवसे यात्रां सूर्य्यारार्कीन्दुवक्रिणाम्।
अष्टवर्गदशापाकाद्यनिष्टफलदस्य च॥ ३०॥

यात्राका निषेधवार कथित होताहै। रवि, मंगल,
शनि, सोम और वक्रीग्रहोंके वारमें यात्रा त्यागदे और

अष्टवर्ग वा दशापाकमें जो सब ग्रह अनिष्टफलदायक हों उन ग्रहोंके वारमेंभी यात्रा न करै ॥ २० ॥

यात्रायां निषिद्धतिथिकथनम् ।

षष्ठ्यष्टमीद्वादशीषु न गच्छेत्रिदिनस्पृशि। पूर्णिमा-प्रतिपद्दर्शरिक्तावमदिनेषु च ॥ २१ ॥ (१) ॥

यात्रामें निषिद्धतिथि कहीजातीहै। छठ, अष्टमी और द्वादशीतिथिमें एवं त्र्यहस्पर्शदिनमें यात्रा न करै और पूर्णिमा, प्रतिपद्, अमावास्या, चतुर्थी, नवमी और चतुर्दशी तिथिमें अथवा अवम दिनमें भी यात्रा निषिद्ध है ॥ २१ ॥

नक्षत्राणां दिग्व्यवस्था।

पूर्वाद्यग्निमघानुराधवसुभादीन्यत्र दण्डोऽन्तरे वा-य्वग्न्योर्न स लङ्घ्य ऐन्द्यमनलप्राच्योस्तथान्या त्रिदिक् ॥ लग्ने दिग्वदने तु दण्डगमनं प्राच्यादि शूलं विना तज्ज्येष्ठाजपदं सरोजनिलयः स्यादुत्तरा फाल्गुनी ॥ ३२ ॥

नक्षत्रोंकी दिक् व्यवस्था कथित होती है। पूर्वकी ओर कृत्तिकादिसे आश्लेषा पर्यन्त सात नक्षत्रोंमें गमन करै। इसी प्रकार दक्षिणकी ओर मघादिसे विशाखा पर्यन्त सात नक्षत्रोंमें पश्चिमकी ओर अनु-राधादि अभिजितसे श्रवण पर्यन्त सात नक्षत्रोंमें और उत्तरकी ओर धनिष्ठादिसे भरणी पर्यन्त सात नक्ष-त्रोंमें गमन करना चाहिये। वायु कोणसे अग्निकोण

---

(१) अज्ञातचन्द्रा प्रतिपत्तिथिर्या सा सर्वदा सिद्धिकरी न पुंसाम्। कलौ न चन्द्रो विदधाति नैव धर्मार्थकामांश्च यशांसि नूनम्। इति पुस्त कान्तरे मूलम्।

पर्यन्त एक दण्डकी कल्पना करनी चाहिये उक्त दण्ड अलङ्घनीय है अर्थात् पूर्व और उत्तरादिक्स्थ नक्षत्रोंमें दक्षिण और पश्चिम दिशामें न जाय, एवं दक्षिण और पश्चिमस्थ नक्षत्रोंमें पूर्व और उत्तर दिशामें न जाय किन्तु पूर्व दिक्स्थ नक्षत्रोंमें उत्तरकी ओर गमन और उत्तर दिक्स्थ नक्षत्रोंमें पूर्वकी ओर गमन करना उचित है और दक्षिण दिक्स्थ नक्षत्रोंमें पश्चिमकी ओर एवं पश्चिम दिक्स्थ नक्षत्रोंमें अग्निकोणमें, दक्षिणदिक्स्थ नक्षत्रोंमें नैर्ऋतकोणमें पश्चिम दिक्स्थ नक्षत्रोंमें वायुकोणमें और उत्तर दिक्स्थ नक्षत्रोंमें ईशानकोणमें गमन करना चाहिये । विशेषतः यात्रानुकूल लग्न यदि दिङ्मुखलग्न हो तो पूर्वादि दिशाका शूलसंज्ञक नक्षत्र त्यागपूर्वक पूर्वोक्त कल्पित दण्ड लंघन करकेभी गमन कर सकता है दिक्शूल नक्षत्र यथा पूर्वादिशामें ज्येष्ठा, दक्षिण दिशामें पूर्वाभाद्रपद पश्चिममें रोहिणी और उत्तर दिशामें उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र शूल होताहै ॥ ३२ ॥

यात्रायां निषिद्धनक्षत्रगणः।

नेशाजाग्निविशाखवायुहिमघायाम्यैः परार्द्धं न सच्चित्राह्यन्तकजं परप्रथमजं पित्र्यानिले चाखिले।
राहुक्रूरयुगस्तसन्निधितथोत्पातप्रदुष्टं ग्रहैद्वर्याद्यैर्युग्ममसादिने निशितिथावृक्षेऽप्यनिष्टे गमः ॥ ३३ ॥

अब यात्रा विषयमें निषिद्ध नक्षत्र कहे जाते हैं।आर्द्रा, पूर्वाभाद्रपद, कृत्तिका, विशाखा, स्वाती, आश्लेषा, मघा भरणी और चित्रा नक्षत्रमें गमन निषिद्ध है । चित्रा, आश्लेषा, और भरणी नक्षत्रका परार्द्ध अत्यन्त निन्दनीय है। आर्द्रा, पूर्वाभाद्रपद, कृत्तिका और विशाखाका

पूर्वार्द्ध, अतिशय गर्हित एवं मघा, और स्वातीका समस्त अंशही अत्यन्त निन्दनीय है । राहु और क्रूरग्रह ( रवि, शनि, और मंगल, ) युक्तनक्षत्र; रविभुक्तनक्षत्र, रविभोग्यनक्षत्र, उत्पातै ( धूम, केतु, उल्कापात, भूकम्प, और पांशुवृष्टि आदि ) द्वारा प्रदुष्टनक्षत्र एवं द्वित्रिग्रहादिद्वारा आक्रान्तनक्षत्रमें यात्रा निषिद्ध है । विशेषतः अनिष्टदतिथिमें दिनमें और अनिष्टदायक नक्षत्रमें रात्रिके समय कभी यात्रा न करै ॥ ३३ ॥

यात्रायां समयविभागव्यवस्थया निषिद्धनक्षत्रकथनम् सार्व्वकालिकसार्व्वद्वारिकनक्षत्रकथनञ्च ।

दग्धुं शत्रुपुरं सदाग्निभमुदेत्यर्कौनचेदुत्तरे रोहिण्यां च
विशाखभे च न गमः पूर्वाह्णकाले शुभः।मध्याह्ने न
शिवाहिमूलबलभिद्भेष्वाह्निशेषेऽश्विनी पुष्याहस्त-
मरुत्सु चित्रशशिमैत्रान्त्येन रात्र्यादितः ॥ ३४ ॥

यात्रामें समयभेदसे निषिद्ध नक्षत्र दो श्लोकोंमें कहे जाते हैं । जिस समय सूर्य उदय हो उसकालके अतिरिक्त समयमें कृत्तिका नक्षत्र शत्रुपुर दहनमें प्रशस्त होता है । उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी और विशाखा नक्षत्रमें पूर्वाह्नके समय यात्रा न करै । मध्याह्न के समय आर्द्रा, आश्लेषा, मूल और ज्येष्ठा नक्षत्रमें यात्रा शुभदायक नहीं होगी अपराह्नके समय अश्विनी पुष्य, हस्त और स्वाती नक्षत्र यात्रामें शुभदायक नहीं होगा । रात्रिके प्रथमभागमें चित्रा, मृगशिरा, अनुराधा और रेवती नक्षत्रमें यात्रा न करै ॥ ३४ ॥

रात्रेर्मध्यमसत्पूर्वभरणीपित्रेषु शेषे निशो ह्यर्यादि
त्रितयादितिष्वपि जलं मध्याह्नरात्र्यन्तयोः ।
पुष्याहस्तमृगाच्युतेषु शुभदाः सर्वेपि काला-
स्तथा सार्वद्वारिकसंज्ञितानि गुरुभं हस्ताश्विमै-
त्राणि च ॥ ३५ ॥

पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वषाढ, पूर्वाभाद्रपद, भरणी और मघानक्षत्रमें रात्रिके मध्यभागमें यात्रा न करै । श्रवण धनिष्ठा, शतभिषा, और पुनर्वसु नक्षत्रमें रात्रिके शेष भागमें यात्रा अनुचित है: पूर्वाषाढ नक्षत्र रात्रिके मध्य-भागमें यात्रामें शुभदायक नहीं होता । पुष्य, हस्त, मृग-शिरा और श्रवणनक्षत्रमें सदाही यात्रा करसकता है और पुष्य, हस्त, अश्विनी एवं अनुराधा नक्षत्रकी सार्व द्वारिक संज्ञा है ॥ ३५ ॥

यात्रायां करणव्यवस्था ।

गरवणिजविष्टिपरिवर्जितानि करणानि यातुरिष्टा-
नि । गरमपि कैश्चिच्छस्तं वणिजस्तु वणिक्-
क्रियास्वेव ॥ ३६ ॥

यात्रादिमें करणव्यवस्था कही जातीहै गर, वणिज और विष्टिके अतिरिक्त करणमें यात्रा करनेसे शुभफल होता है । किसी किसी पण्डितके मतसे गरकरणमेंभी यात्रा करसकता है और वाणिज्य विषयमें वणिजकरण प्रशस्त होता है ॥ ३६ ॥

यात्रादिषु मुहूर्त्तव्यवस्था ।

नक्षत्रवत्क्षणानां परिघः शूलं समयभेदश्च ।
ताराचन्द्रशुद्धिः सर्वं तत्स्वामिभिश्चिन्त्यम् ॥३७॥

यात्रामें नक्षत्रका मुहूर्तफल कहाजाता है ।पूर्वोक्तवायु और अग्निकोणकल्पितदण्ड, शूलनक्षत्र, समयभेद, कालभेद ( तारा, चन्द्रशुद्धि ) और सार्वद्वारिक नक्षत्र, यात्राविषयमें जो सब कहे गयेहैं, उक्तनक्षत्रोंकी समान इन सब नक्षत्रोंके मुहूर्त्तकोभी विचारना चाहिये। केवल जो यात्राविषयमेंही इसप्रकार कहा गया, ऐसा नहीं है, जिसजिस नक्षत्रमें जोजो कार्य कहेगये हैं, उसउस नक्षत्रके मुहूर्त्तमें और उसउस नक्षत्राधिपति तथा मुहूर्ताधिपतिकी एकतामेंभी वहवह कार्य करसकता है ॥ ३७ ॥

यात्रायां चन्द्रशुद्धिः।

यायिक्षेत्रगतोऽथवा शुभफलश्चन्द्रो यथा गोचरे
शुक्लादौ गमने तदादिशुभदं कृष्णादितस्त्वन्यथा ।
संचिन्त्याहिमदीधितेः समुदिता शुद्धिर्बुधैः पूर्ववत्
जन्मस्थः पुनरिष्टदोऽत्र हिमगुर्यद्यष्टवर्गाच्छुभः ॥३८॥

यात्रामें चन्द्रशुद्धि कही जाती है। शुक्लप्रतिपद् तिथिमें यदि चन्द्रग्रह पूर्वोक्त यायिग्रहके क्षेत्रमें अवस्थित हो अथवा गोचरमें शुभजनक हो, तो शुक्लपक्षमें गमन शुभकारी होगा। कृष्णप्रतिपद् तिथिमें यदि चन्द्रग्रह यायिग्रहके क्षेत्रमें अवस्थिति न करे वा गोचरमें रिष्टदायक न हो, तो कृष्णपक्षमें यात्रा शुभदायक नहीं है, पण्डितगण पूर्वोक्तचन्द्रशुद्धिका यात्रामेंभी विचारकरैं किन्तु जन्मचन्द्र अष्टवर्गमें शुद्ध होनेपर यात्रामें शुभदायक होगा और अष्टवर्गमें शुद्ध न होनेपर यात्रामें शुभकारी नहीं होगा ॥ ३८ ॥

यात्रायां ताराशुद्धिः।

यात्रायां शोभनास्ताराः समाः कर्मान्त्यसंयुताः।
पुराभिषेकभे यत्नात् गमनं वर्जयेन्नृपः॥ ३९॥

यात्रामें ताराशुद्धि कही जाती है। दूसरा चौथा, छठा, आठवां, नवां और दशवां तारा यात्रामें शुभदायक होताहै। राजा पुरनक्षत्र और अभिषेकनक्षत्र यात्रामें यत्नपूर्वक त्यागदें॥ ३९॥

यात्रायामशुभलग्नकथनम्।

मीने कार्किन्यालिनि च वृषे जन्मकालस्थपापे वामे वा दिग्द्युनिशबलिनां जन्मलग्नाष्टमे वा। वर्गे पापानुपचयकृतां वक्रिणां पृष्ठलग्ने पापान्तःस्थे न शुभमबले लग्नजन्माविधेये॥ ४०॥

यात्रामें निषिद्ध लग्न कही जाती है। मीन कर्क वृश्चिक और वृषलग्न यात्रामें अशुभदायक होता है, इसी प्रकार जन्मके समय जिस राशिमें पापग्रह अवस्थित था उसी लग्न वा राशिमें दिवाबली राशिलग्नमें दिनमें जन्मराशि वा जन्मलग्नको अष्टमलग्नमें पापग्रहके क्षेत्र और नवांशादिमें गोचरमें वा दशामें अशुभदायक शुभग्रहके क्षेत्रादिमें वक्री ग्रहके क्षेत्रादिमें पृष्ठोदयराशिको लग्नमें पापद्वय मध्यगतलग्नमें बलहीन लग्नमें और जन्म लग्न एवं राशिकी अवशीभूत लग्नमें यात्रा करनेसे अशुभ फल होता है॥ ४०॥

यात्रायां शुभलग्नादिकथनम्।

लग्नं सजन्मराशेरुपचयमुदयारित्रिलाभस्थ वेशि मित्रं वश्यं सजन्मस्वतनुभवनयोर्यद्ग्रहैनों निरंशं

स्थानं सौम्यस्य जन्मन्यभिमतफलदस्यापि यत्र
पुवश्च याम्यां त्यक्त्वाभिजिद्धं शुभदिवसफलेन्दोश्च
याः कालहोराः ॥ ४१ ॥

यात्रामें विहित ( शुभ ) लग्न वर्णित होती है जन्म राशिकी अपेक्षा तृतीय, एकादश और षष्ठ राशिके लग्न यात्रामें शुभदायक हैं। जन्मलग्नसे षष्ठ तृतीय और एकादश लग्नभी यात्रामें शुभजनक होती है और जन्मकालीन सूर्यसे द्वितीय राशिकी लग्न स्वीयजन्मराशि और जन्म लग्न गृहका मित्र तथा वश्य लग्न जिस राशिके शेषांशमें ग्रह अवस्थित न हो वह लग्न जन्मकालीन जिस राशिमें शुभग्रह अवस्थित हो वह लग्न जन्मकालीन शुभफलद पापग्रहाक्रान्त राशिलग्न, जिस राशिमें यात्रा करे, उस राश्यधिपातिकी क्षेत्रलग्न दक्षिण दिशाके अतिरिक्त अभिजित् (अष्टम ) मुहूर्त्ताधिष्ठित राशिलग्न, एवं शुभफलदायक ग्रहका वार और चन्द्रमाका कालहोरा यह सब ही यात्रामें शुभफल दायक होते हैं ॥ ४१ ॥

यात्रायां होराफलम्।

तिर्य्यगधऊर्द्धवदनहोराः स्युः सूर्ययोगतः क्रमशः।
वाञ्छितफलदोर्द्धमुखीशेषे द्वे न शुभे यातुः ॥ ४२॥

यात्रामें होराफल कहाजाता है। राशि वा लग्नके अर्द्ध भागको होरा कहाजाता है, जिस राशिके अर्द्धभागमें सूर्य अवस्थित हो उसका नाम तिर्य्यङ्मुखी होरा है। तत्पश्चात् भाग अधोमुखी और उसका पश्चात्भाग ऊर्द्धमुखी होरा है। ऊर्द्धमुखी होरा वांछित फल देताहै तिर्यङ्मुखी और अधोमुखी यह दो होराही अशुभ जनक हैं ४२

### यात्रायां द्रेष्काणफलम्।

लग्ने यद्यद्ग्रहाणां फलमुदितमिहांशेऽपि तेषां दृकाणे सन्नाथे सौम्यरूपे कुसुमफलयुते रत्नभाण्डान्विते वा। सौम्यैर्दृष्टे जयः स्यात् प्रहरणसहिते पापदृष्टे च भङ्गो वह्नौ दाहोऽथ बन्धःसभुजग निगडे पापयुक्ते च यातुः॥ ४३॥

यात्रामें द्रेष्काण और नवांशका फल कहाजाता है। लग्न स्थित ग्रहोंके जो जो फल "पापक्षीण इत्यादि" वक्ष्यमाण वचनोंमें कहेजायगे यहां भी यात्रामें उस उस ग्रहके नवांशमें तत्तत् फल जानना चाहिये।शुभग्रह जिस द्रेष्काणका अधिपति हो, उस द्रेष्काणमें सौम्यरूप द्रेष्काणमें कुसुमफलयुक्त द्रेष्काणमें रत्नभाण्डान्वित द्रेष्काणमें और शुभग्रहकी दृष्टि जिस द्रेष्काणमें हो, उस द्रेष्काणमें यात्रा करनेसे यात्रिकराजाकी जय होतीहै। उद्यतास्त्र द्रेष्काणमें पापग्रहसे अवलोकित द्रेष्काणमें गन्ता ( गमन करनेवाले)की यात्रा भंग होतीहै और भुजंगद्रेष्काणमें निगडद्रेष्काण और पापग्रहयुक्त द्रेष्काणमें यात्रा करनेसे यात्रीका अग्निदाह और बन्धन होताहै॥ ४३॥

### यात्रायां द्वादशांशत्रिंशांशफलम्।

यत्प्रोक्तं राश्युदये द्वादशभागेऽपि तत्फलं वाच्यं।
यच्च नवांशकविहितं त्रिंशांशस्योदये तत्स्यात्॥४४॥

यात्रामें द्वादशांशका फल कहाजाता है। 'मीने कर्किन्यलिनि इत्यादि' वचनोंमें मेषादिलग्नका जो जो शुभाशुभफल कहागया है, उसउस लग्नके द्वादशांशमें

भी वह वह फल जानना चाहिये । और नवांशमें जो फल कहागया है त्रिंशांशमें भी वही फल होगा ॥ ४४ ॥

यात्रायां रविशुद्धिः ।

दशत्रिलाभारिगतः प्रशस्तः शेषेष्वशस्तः सविता- विलग्नात् । पुत्रापदं धर्महतिं व्ययञ्च कृत्वा त्रिको- णान्त्यगतोऽर्थदश्च ॥ ४५ ॥

यात्रामें द्वादशभागकी रविशुद्धि कहीजाती है । यात्रिकलग्नसे दशम, तृतीय, एकादश और षष्ठराशिस्थ सूर्य प्रशस्त होताहै, अन्यस्थानस्थित सूर्य प्रशस्त नहीं होता । लग्नकी अपेक्षा पञ्चमस्थ सूर्य पुत्रापद ( पुत्र अथवा सन्तानको कष्ट ) देकर धनदाता होताहै । नवमस्थसूर्य धर्मकी हानि करके अर्थदान करताहै और द्वादशस्थानस्थित सूर्य व्यय ( खर्च ) कराकर धनदाता होताहै ॥ ४५ ॥

यात्रायां लग्नादिस्थचन्द्रशुद्धिः ।

केन्द्रकोणार्थगो नेष्टः क्षीणः पूर्णः शुभः शशी ।
सदैवत्र्यायगः शस्तो न शस्तोऽन्त्यारिरन्ध्रगः ४६ ॥

यात्रामें लग्नादिस्थित चन्द्रशुद्धि कहीजातीहै । लग्नसे केन्द्र त्रिकोण और द्वितीय राशिस्थित क्षीणचन्द्रमा अशुभदायक होताहै । पूर्णचन्द्रमा केन्द्र त्रिकोण और द्वितीयस्थानस्थ होनेसे शुभफल देताहै । लग्नसे तृतीय और एकादशस्थ चन्द्रमा सदाही शुभदाता होताहै और द्वादश, षष्ठ तथा अष्टमस्थ चन्द्र क्षीण वा पूर्ण सभी- अवस्थामें अशुभ दाता होता है ॥ ४६ ॥

यात्रायां कुजशुद्धिः।

भौमस्तूपचये शस्तः कैश्चित् खस्थोऽपि निन्दितः।
धने भित्वा निजं सैन्यं धनदोऽन्येष्वनिष्टदः॥४७॥

यात्रामें लग्नादिस्थ मंगलका फल कहाजाताहै। मंगल ग्रह यात्रिक लग्नसे तृतीय, एकादश, षष्ठ अथवा दशमस्थानमें स्थित होनेपर प्रशस्त होता है। किसी किसी पण्डितके मतसे दशमस्थ मंगल निन्दित है। यात्रिक लग्नके द्वितीय स्थानमें मंगल अवस्थित होनेपर निज सैन्यमें भेद कराकर धनप्रदान करताहै और यात्रिक लग्नके चतुर्थ, पंचम, सप्तम, अष्टम, नवम अथवा द्वादशस्थान स्थित मंगल अशुभ दायक होताहै॥ ४७॥

यात्रायां लग्नादिस्थबुधशुद्धिः।

क्रूरो बुधस्तूपचये प्रशस्तः शेषेष्वशस्तोऽथ यदा शुभः स्यात्। सर्वत्र शस्तोऽन्त्यरिपुं विहाय छिद्रेप्यनिष्टं प्रवदन्ति केचित्॥ ४८॥

यात्रामें लग्नादिस्थ बुधका फल कहाजाताहै। पापयुक्त बुधग्रह यात्रिक लग्नके तीसरे, ग्यारहवें, छठे और दशवें स्थानमें स्थित होनेसे प्रशस्त फलदाता होता है। इसके अतिरिक्त स्थानमें अवस्थित होनेसे अप्रशस्त फल देता है, शुभ बुधलग्नके बारहवें और छठे स्थानके अतिरिक्त सर्वत्रही प्रशस्त फल देता है। किन्तु किसी किसी पण्डितके मतसे अष्टमस्थ बुध अनिष्टदायक कहागया है॥ ४८॥

यात्रायां लग्नादिस्थगुरुशुद्धिः।

तृतीयव्ययगो नेष्टः शेषेष्विष्टफलो गुरुः।
षष्ठाष्टमेऽपि केषाञ्चिन्मतेनाशुभदो भवेत्॥ ४९॥

यात्रामें लग्नादिस्थ बृहस्पतिका फल वर्णित होता है यात्रिकलग्नके तीसरे और बारहवें स्थानमें बृहस्पति अव-स्थित होनेपर शुभफल नहीं देता इनके अतिरिक्त समस्त स्थानोंमेंही शुभफल देता है कोई कोई पण्डित कहते हैं षष्ठ और अष्टमस्थित बृहस्पति अशुभ दायक है ॥ ४९ ॥

यात्रायां लग्नादिस्थशुक्रशुद्धिः ।

विहाय सप्तमं स्थानं सर्वत्र शुभदः सितः । केचि-
द्व्ययारिसंस्थस्य फलं नेच्छन्ति शोभनम् ॥ ५० ॥

यात्रामें लग्नादिस्थ शुक्रका फल कहा जाता है।यात्रि-कलग्नके सातवें स्थानके अतिरिक्त सर्वत्रही शुक्रग्रह शुभ-फलदाता होताहै, कोई कोई पण्डित यात्रिक लग्नके बार-हवें और छठे स्थानमें शुक्र होनेसे शुभफल स्वीकार नहीं करते ॥ ५० ॥

यात्रायां लग्नादिस्थशनिराहुशुद्धिः ।

शौरिस्त्र्यायारिगः शस्तो न शस्तोऽन्यत्र संस्थितः ॥
त्र्यायकर्मारिगो राहुः शोभनोऽन्येष्वशोभनः ॥५१॥

यात्रामें लग्नादिस्थ शनि और राहुका फल वर्णित होताहै ।शनिग्रह यात्रिकलग्नके तीसरे ग्यारहवें अथवा छठे स्थानमें अवस्थित होनेसे शुभफलदायक होता है इन के अतिरिक्त स्थानमें होनेसे अशुभफल दाता होता है । लग्नके तीसरे, ग्यारहवें, दशवें और छठे, स्थान स्थित राहु शुभफलदाता होता है । इनके अतिरिक्त स्थानोंमें अशुभ फल देता है ॥ ५१ ॥

यात्रायां लग्नादिस्थकेतुशुद्धिः ।

केतावभ्युदये यायात्त्यक्त्वा सप्तैव वासरान् ।
दिशि नम्रशिखायान्तु यदि स्यात्त्र्यायकर्मपः ॥५२॥

यात्रामें लग्नादिस्थकेतुका फल कहा जाताहै। जिस दिशामें धूमकेतुकी शिखा नम्र भावसे गिरे, केतु उदय होकर सप्ताहके पीछे उसी दिशामें गमन करेगा। यदि यात्रिक लग्नके तीसरे, ग्यारहवें, और दशवें, स्थानमें केतु अवस्थित हो, तो शुभफल देता है इनके अतिरिक्त स्थानोंमें होनेसे अशुभफलदाता होता है ॥ ५२ ॥

यात्रायां लग्नस्थनिषिद्धग्रहनिर्णयः शून्यकेन्द्रवक्रिकेन्द्रनिषेधश्च।

पापः क्षीणो विधुरविदिनं यस्य जन्मर्क्षपीडा होराजन्माष्टमगृहपतीर्ज्जन्मभं प्रत्यनिष्टः। नीचस्थास्तंगतपरजितो जन्मलग्नेशशत्रुर्लग्नेनेष्टाः खचररहितं वक्रियुक्तश्च केन्द्रम् ॥ ५३ ॥

यात्रामें लग्नस्थनिषिद्धग्रह वर्णित होते हैं। पापग्रह और क्षीणचन्द्रमा यात्रिकलग्नमें होनेसे शुभदायक नहीं होता। इसीप्रकार जिस वारमें यात्रा करे, वह वाराधिपति जिस ग्रहका शत्रु है, वह ग्रह, जिस ग्रहका जन्मनक्षत्रपीडित है, वह ग्रह, जन्मलग्न और जन्मराशिका अष्टमाधिपतिग्रह, गोचरमें निष्टदायक अथवा शुभदायकग्रह, दशान्तर्दशापतिका शत्रुग्रह, नीचस्थग्रह, अस्तगतग्रह, युद्धमें पराजितग्रह एवं जन्मलग्न और जन्मराश्यधिपतिका शत्रुग्रह यात्रिकलग्नमें अवस्थित होनेसे यात्रा अशुभदायक होतीहै और लग्नमें अथवा लग्नके चौथे सातवें वा दशवें स्थानमें ग्रह न होनेपर अथवा वक्रीग्रह अवस्थित होनेसेभी यात्रा शुभदायक नहीं होगी ॥ ५३ ॥

ग्रहाणां जन्मनक्षत्राणि ।

विशाखानलतोयानि वैष्णवं भगदैवतम् ।
पुष्यापौष्णं यमः सर्पो जन्मर्क्षाण्यर्कतःक्रमात्॥५४॥

सूर्यादि नवग्रहका जन्मनक्षत्र कथित होता है । विशाखा, कृत्तिका, पूर्वाषाढा, श्रवण, पूर्वाफाल्गुनी, पुष्य, रेवती, भरणी और आश्लेषा नक्षत्र क्रमशः रव्यादिनवग्रहोंका जन्मनक्षत्र होता है अर्थात् रविका विशाखा, चन्द्रमाका कृत्तिका, मङ्गलका पूर्वाषाढा, बुधका श्रवण, बृहस्पतिका पूर्वाफाल्गुनी, शुक्रका पुष्य शनिका रेवती, राहुका भरणी और केतुका आश्लेषा जन्मनक्षत्र होताहै ॥ ५४ ॥

यात्रायां लग्नस्थग्रहापवादः ।

स्थानेऽर्कः स्वस्य सूनोरुदयमुपगतः शस्त इन्दुः स्वकीये भौमः सौरेर्बुधादेर्विदथ शशिसितान्यस्य जीवोऽथ शुक्रः । सौम्यः स्वस्थानसंस्थः शनिरपि तरणे रक्षका जन्मकाले तानः स्यात्कारको वा सुहृदपि शुभकृल्लग्नजन्मेशयोर्यः ॥ ५५ ॥

यात्रामें लग्नस्थ निषिद्ध ग्रहका अपवाद कहाजाता है । यात्रिक लग्न यदि सिंह, मकर वा कुम्भ हो और उसमें यदि रवि अवस्थान करै तो यात्रा शुभ होतीहै । इसप्रकार चन्द्र अपने गृहमें ( कर्कलग्नमें ) स्थित मङ्गल, मकर वा कुम्भलग्नमें अवस्थित बुध, मिथुन,कन्या, धनु, मीन, वृष, तुला, मकर अथवा कुम्भलग्नमें अवस्थित बृहस्पति, कर्क वृष, और तुलाके अतिरिक्त लग्नमें स्थित

शुक्र, मिथुन, कन्या, वृष और तुलालग्नमें अवस्थित एवं शनि सिंहलग्न गत होनेसे यात्रा शुभदायक होती है। जन्मके समय जो ग्रह रक्षकसंज्ञक अर्थात् पणफरस्थित हो, जन्मलग्नाधिपतिका जो ग्रह तानसंज्ञक हो एवं जो ग्रह मित्र और शुभकारक है, यह पाप होनेपरभी यदि लग्नगत हो तो यात्रामें शुभ होताहै ॥ ५५ ॥

स्वदिक्स्थलालाटिग्रहादौ यात्रानिषेधः।

लालाटिनि दिगधीशे दिग्बलयुक्ते ( ? ) ललाटगे वापि।प्रतिभृगुजे प्रतिशशिजे कालाशुद्धौ हि संत्यजे-द्यात्राम् ॥ ५६ ॥

ललाटगत ग्रह रहनेपर यात्रानिषेध कहा जाताहै दिग· धिपति ग्रह और दिग्बली ग्रह लालाटी अर्थात् सन्मुख-वर्ती होनेपर यात्रादि न करै सम्मुख शुक्रमें प्रति बुध, में और कालाशुद्धि समयमें भी यात्रा परित्याग करनी चाहिये ॥ ५६ ॥

अष्टदिक्षु लालाटिककथनम्।

लग्नेऽर्के व्ययलाभयोर्भृगुसुते कर्म्मस्थिते भूमिजे राहौ धर्म्मविनाशयो रविसुते द्यूनेऽरिसून्वोर्विधौ। बन्धौ ज्ञे सहजार्थयोः सुरगुरावेवं ललाटोद्भवे योगे नाशमुपैति मानवपतिः पूर्वादिकाष्ठां गतः ॥ ५७ ॥

लालाटिक योगका निर्णय होताहै। यात्राकालीन लग्नमें रविलग्नकी अपेक्षा बारहवें, अथवा ग्यारहवें, स्थानमें शुक्र, दशवें स्थानमें मंगल, नवें वा आठवें स्था-नमें राहु, सातवें स्थानमें शनि, छठे अथवा पांचवें स्था-

नमें चन्द्र, चौथे स्थानमें बुध और तीसरे वा दूसरे स्थानमें बृहस्पति होनेपर ललाटोद्भव योग होता है उक्तयोग में पूर्वदिशाकी ओर नरपति ( राजा ) जानेपर विनाशको प्राप्त होता है ॥ ५७ ॥

पुरः शुक्रप्रतीकारः ।

सितमश्वं सितं वस्त्रं हेममौक्तिकसंयुतम् ।
ततोद्विजातये दद्यात्प्रतिशुक्रप्रशान्तये ॥ ५८ ॥

प्रतिशुक्रका प्रतीकार कहा जाता है । श्वेतवर्ण घोडा और शुक्ल वस्त्र एवं स्वर्ण मोतीके सहित ब्राह्मणको प्रतिशुक्रका दोष शान्त करनेके लिये दान करै प्रतिबुधमें भी इसी प्रकार करनेसे प्रतीकार होता है ॥ ५८ ॥

चन्द्राद्यनिष्टम् ।

अतिबलिनीन्दौ सुखगे गमनं यत्नाद्विवर्जयेन्नृपतिः ।
सप्ताहञ्च न यायात्त्रिविधोत्पातेष्वनिष्टेषु ॥ ५९ ॥

चन्द्रादि अनिष्टमें यात्रानिषेध कहा जाताहै । अत्यन्त बलवान् चन्द्र चौथे स्थानमें अवस्थित होनेपर राजा यत्नपूर्वक गमन परित्याग करे अनिष्टदायक तीन प्रकारके उत्पात उपस्थित होनेपर भी एक सप्ताहपर्यन्त यात्रा परित्याग करना चाहिये ॥ ५९ ॥

व्यतीपातादिषु यात्राफलम् ।

व्यसनं प्राप्नोति महद्व्यतिपाते निर्गतोऽथवा मृत्युम् । वैधृतिगमनेऽप्येवं त्र्यहस्पृशि समुपादिशन्त्येके ॥ ६० ॥

व्यतीपातादि योगमें यात्रानिषेध कहा जाता है। व्यतीपात योगमें गमन करनेसे मनुष्यको सन्ताप शोकादि दुःख होता है। अथवा मृत्यु होती है और वैधृतियोगमें यात्रा करनेपरभी शोकसन्तापादिदुःख अथवा मृत्यु होती है। किसी किसी पंडितके मतसे व्यहस्पर्शमें यात्रा करनेसे भी इसीप्रकार फलहोताहै ॥ ६० ॥

अवमादिषु यात्रानिषेधः।

नावमरात्रौ यायाद्दोषस्तत्राधिमासिके व्यसनम्।
ऋत्वयनयुगसमाप्तौ न विजयाकांक्षी नृपः प्रसरेत् ॥ ६१ ॥

अवमादिनादिमें यात्रानिषेध कहाजाता है। अवमदिनमें और मलमासमें यात्रा करनेसे शोकसन्तापादि दुःख होताहै। विजयकी इच्छा करनेवाला राजा ऋतुसमाप्तिके दिन अयनसमाप्तिके दिन और युगसमाप्तिके दिन यात्रा न करै ॥ ६१ ॥

विवाहदिनादिषु यात्रानिषेधः।

उद्वाहमकालोत्सवमभिषेकं चात्मजस्य यः कृत्वा।
प्रस्थाता विहताशोऽभ्येति गतश्चोत्सवदिनेषु ॥ ६२ ॥

उद्वाहादिदिनमें यात्रानिषेध कहाजाताहै। जो राजा विवाह करके अथवा हठात् इच्छानुसार नृत्य गीतादि उत्सव करके अथवा पुत्रको युवराजपदमें अभिषिक्त करके गमन करताहै उसको हताश होकर लौटना पडताहै। दुर्गोत्सवादि उत्सवके दिनमें स्त्रीपुत्रादिके गर्भाधानादि उत्सवके दिनमें और चूडादि उत्सवके दिनमें यात्रा करनेपरभी हताश होकर लौटना पडताहै। श्राद्धके

दिनमें और विद्युतगर्ज्जन ( बिजलीका कडकना ) के समयमें भी यात्रानिषिद्ध है ॥ ६२ ॥

धरित्रीप्रदयोगः ।

लाभशत्रुसहजेषु यमारौ सौम्यशुक्रगुरवो बल-युक्ताः । गच्छतो यदि ततोऽस्य धरित्री सागराम्बुरसना वशमेति ॥ ६३ ॥

अनन्तर भूमीप्रद योग कहाजाता है । यात्राकालीन लग्नसे ग्यारहवें छठे अथवा तीसरे स्थानमें शनि मंगल एक राशिमें स्थित अथवा पृथक् २ राशिमें अवस्थित हों और बुध शुक्र एवं बृहस्पति जिस किसी राशिमें अव-स्थित होकर बलवान् हो तो धरित्रीप्रद योग होता है । उक्तयोगमें यात्राकरनेसे यात्रीके ( ससागरा पृथ्वी ) वशी भूत होतीहै ॥ ६३ ॥

किम्बसुयोगः ।

केन्द्रोपगतेन वीक्षिते गुरुणा त्र्यायचतुर्थगे सिते । पापैरनवाप्तसप्तगैर्वसु किन्तन्न यदाप्नुयाद्गतः ॥ ६४॥

किम्बसु योग कहाजाताहै । यात्राकालीन लग्नसे तीसरे ग्यारहवें अथवा चौथे राशिमें स्थित शुक्र ग्रह केन्द्रमें स्थित बृहस्पतिसे यदि दीखे एवं नववें आठवें और सातवें स्थानमें पापग्रह वर्जित हो तो किम्बसुयोग होताहै इस योगमें यात्रा करनेसे जानेवालेको धन प्राप्त होताहै ६४

विना समरयोगः ।

शशिनि चतुर्थगृहं ह्युपयाते बुधसहितेऽस्तगते भृगु-पुत्रे । गमनमवाप्य पतिर्म्मनुजानां जयति रिपून् समरेण विनैव ॥ ६५ ॥

विनासमरयोग कहाजाताहै । यात्राकालीन चन्द्र यदि बुधके सहित लग्नके चौथे स्थानमें अवस्थित हो और शुक्र ग्रह सातवां हो तो विनासमर योग होताहै । उक्तयोगमें यात्राकरनेसे नरपति विनाही युद्धकिये जय करसकताहै ॥ ६५ ॥

विनारणयोगः ।

सितेन्दुजौ चतुर्थगौ निशाकरश्च सप्तमे ।
यदा तदा गतो नृपः प्रशास्त्यरीन् विनारणम्॥६६॥

विनारणयोग कहाजाताहै । यात्रिक लग्नके चौथे स्थानमें यदि शुक्र और बुध हो एवं सातवें स्थानमें चन्द्र अवस्थित हो तो विनारण योग होताहै । इस योगमें यात्रा करनेसे भूपति विनाही युद्धके शत्रुको जय करसकताहै ॥ ६६ ॥

अरिप्रध्वंसयोगः ।

एकान्तरक्षे भृगुजात्कुजाद्वा सौम्ये स्थिते सूर्यसुता-द्गुरौर्वा । प्रध्वंसतेऽरिस्त्वचिराद्गतस्य वेशाधिको भृत्य इवेश्वरस्य ॥ ६७ ॥

अरिप्रध्वंस योग कहाजाताहै । शुक्र अथवा मंगलसे तीसरे स्थानमें पापग्रह अयुक्त बुध अवस्थित होनेपर और शनिसे तीसरे स्थानमें बृहस्पति होनेसे अरिप्रध्वंसनामक योग होताहै । इसमें यात्राकरनेसे प्रभुके वेशाधिक ( अतिशयपरिधानयुक्त ) भृत्य जिसप्रकार नष्ट होतेहैं उसीप्रकार यात्रिकके शत्रु शीघ्रही नष्ट होजाते हैं ॥ ६७ ॥

शशितामरसयोगः।

गुरुरुदये रिपुराशिगतोऽर्को यदि निधने न च शीत-
मयूखः। भवति गतोऽत्र शशीव नरेन्द्रो रिपुवनि-
ताननतामरसानाम् ॥ ६८ ॥

शशितामरसयोग वर्णित होताहै। यात्राके समयमें यदि लग्नमें बृहस्पति और लग्नके छठे स्थानमें रवि हो एवं लग्नके आठवें स्थानमें चन्द्र अवस्थित न हो तो शशितामरस योग होताहै। उक्त योगमें यात्राकरनेसे नृपति, जिसप्रकार चन्द्र पद्मका सङ्कोच करनेवाला होताहै उसीप्रकार शत्रुकी स्त्रियोंके मुखकमलका सङ्कोचक होताहै ॥ ६८ ॥

शिलाप्रतरणयोगः।

लग्नारिकर्म्महिबुकेषु शुभेक्षिते ज्ञे द्यूनान्त्यलग्न-
रहितेष्वशुभग्रहेषु ॥ यातुर्भयं न भवति प्रतरेत्समुद्रं
यद्यश्मनापि किमुतारिसमागमेन ॥ ६९ ॥

शिलाप्रतरण योग कहाजाता है यात्राके समय यदि लग्नमें अथवा लग्नके छठे, दशवें वा चौथे स्थानमें बुधग्रह अवस्थित होकर शुभग्रहसे दीखे एवं लग्नके सातवें, बारहवें और लग्नस्थानमें,पापग्रह न हो, तो शिलाप्रतरण योग होता है। उक्त योगमें यात्रा करनेसे यात्रिक मनुष्य पत्थरका आश्रय करके भी समुद्रपार होसकता है और समागमसे उसको क्या भय होसकता है ॥ ६९ ॥

अरिशलभयोगः।

मूर्त्तिवित्तसहजेषु संस्थिताः शुक्रचन्द्रसुततिग्मर-
श्मयः। यस्य यानसमये रणानले तस्य यान्ति
शलभा इवारयः ॥ ७० ॥

अरिशलभयोग कहाजाता है । यात्राके समय लग्नमें शुक्र लग्नके दूसरे स्थानमें बुध और तीसरे स्थानमें रवि होनेसे अरिशलभ योग होता है इसमें यात्रा करनेसे यात्रिक मनुष्यकी युद्धानलसे शत्रुसमूह पतङ्गकी समान नष्ट होता है ॥ ७० ॥

अरिवैनतेययोगः।

शुक्रवाक्पतिबुधैर्धनसंस्थैः सप्तमे शशिनि लग्न-गतेऽर्के। निर्गतो नृपतिरेति कृतार्थो वैनतेयवद-रीन् विनिगृह्य ॥ ७१ ॥

अरिवैनतेय योग कहाजाता है । यात्राके समय शुक्र, बृहस्पति और बुध, ग्रह लग्नके दूसरे स्थानमें अवस्थित हों और लग्नके सातवें स्थानमें चन्द्र एवं लग्नमें रवि हों तो अरिवैनतेय नामक योग होताहै । उक्तयोगमें यात्रा करनेसे गरुड जिस प्रकार शत्रुओंको नष्ट करता है उसी प्रकार राजा भी शत्रुओंको नष्ट करके कृतार्थ होताहै ७१

अरियोषाभरणयोगः।

त्रिषण्णवान्त्येष्वबलः शशांकश्चान्द्रिर्बली यस्य गुरुश्च केन्द्रे। तस्यारियोषाभरणैः प्रियाणि प्रियः प्रियाणां जनयन्ति सैन्ये ॥ ७२ ॥

अरियोषाभरणयोग कहाजाता है। यात्राके समय यदि बलहीन चन्द्र लग्नके तीसरे, छठे, नवें अथवा बारहवें स्थानमें हो और बली बुध, एवं बृहस्पति लग्नके केन्द्रस्थानमें हो तो अरियोषाभरणयोग होताहै । इसमें यात्रा करनेसे उस राजाकी सेना शत्रुओंकी स्त्रियोंके गहनोंसे अपनी अपनी स्त्रियोंको प्रसन्न करसकतीहै ॥ ७२ ॥

राजयोगः।

वर्गोत्तमगते लग्ने चन्द्रे वा चन्द्रवर्जितैः।
चतुराद्यैर्ग्रहैर्दृष्टैर्नृपाद्वा विंशतिः स्मृताः॥ ७३ ॥

अनन्तर यात्रामें राजयोग कहाजाता है। यात्रिककी जन्मराशि अथवा जन्मलग्न यदि वर्गोत्तमगत हो और चन्द्रमाके सिवाय यदि चार ग्रह उक्त स्थानको देखें तो बाईस प्रकारका राजयोग होता है॥ ७३ ॥

राजयोगफलम्।

जातकोक्तनृपयोगगतानां प्रतिदिनं भवति राज्यविवृद्धिः। वातघूर्णितमिवार्णवयानं परबलं समुपैति (क) विनाशम्॥ ७४ ॥

राजयोगमें यात्राका फल कहाजाता है। जो राजा राजयोगमें यात्रा करताहै उसका राज्य दिनदिन बढता है। और अर्णवयान जिसप्रकार वायुद्वारा घूमताहै उसी प्रकार उसके शत्रुओंका दल नष्ट होताहै॥ ७४ ॥

उषायोगप्रशंसा।

आरक्तसन्ध्यं रजनीविरामं वदन्त्युषायोगमिति प्रवीणाः। तत्र प्रयातुः सकलार्थसिद्धिः संलक्ष्यते हस्ततलस्थितेव॥ ७५ ॥

उषाकाल कहाजाताहै। रात्रिके शेषभागमें पूर्वदिशाके लाल होनेपर पंडितलोग उस कालकोही उषा कहतेहैं। उक्तसमय यात्रा करनेसे हाथमें स्थितकी समान यात्रिकके समस्त कार्य सिद्धि होतेहैं॥ ७५ ॥

---

(क) वैरिणो बलमुपैतीति पाठान्तरम्।

विजयस्नानोपवेशनार्थं धर्म्मविशेषकथनम् ।

श्वेतस्य बभ्रोरथवा वृषस्य चर्म्मान्तरे व्याघ्रमृगे-
न्द्रयोश्च । तत्स्थस्य कुर्य्यान्मनुजेश्वरस्य जयाभि-
षेकं विधिवत्पुरोधाः ॥ ७६ ॥

विजयस्नान कहाजाताहै । श्वेतवर्ण वैल अथवा पिंगल वर्ण ( भूरे ) वैलके बिछेहुए चर्मके ऊपर वा व्याघ्र चर्म अथवा सिंहचर्मके ऊपर वैठेहुए राजाका जयकेलिये पुरोहित यथाविधानसे अभिषेक करै ॥ ७६ ॥

विजयस्नानम् ।

क्रमान्मही रौप्यसुवर्णकुम्भैः क्षीरेण दध्ना हविषा
च पूर्णैः । स्नायात्तु तोयैः सह सतमृद्भिः पश्चाच्च
सर्वौषधिगन्धतोयैः ॥ ७७ ॥

विजयस्नानकी विधि कहते हैं । प्रथम मट्टीके कुम्भमें दुग्ध, चांदीके कुम्भमें दही और सुवर्णके कुम्भमें घृत पूर्ण करके उसके द्वारा विजयस्नान करावे तदनन्तर सप्त मृत्तिकासंयुक्त जल तथा सर्वौषधि संयुक्त जल और गन्धयुक्त जलद्वारा स्नान कराना चाहिये ॥ ७७ ॥

यात्रायां लोकपालादिपूजा ।

पूजयेल्लोकपालांश्च ग्रहान्सम्यग्दिगीश्वरान् ।
ब्राह्मणान्देवतांश्चैव कुलस्य नगरस्य च ॥७८॥

यात्रामें लोकपालादिकी पूजा कही जातीहै । यात्राके समय दश दिक्पाल नवग्रह दिगधिपति ब्राह्मण कुलदेवता और ग्रामदेवताकी गन्धपुष्पादि उपहारद्वारा पूजा करके ब्राह्मणको गौ और हिरण्य ( सुवर्ण ) दान करना चाहिये ॥ ७८ ॥

प्रमथबलिदानम् ।

द्वारत्रिकचतुष्काट्टपुरनिष्कुटवासिनः । महापथ-नदीतीरगुहागिरिनिवासिनः ॥ ७९ ॥ विश्वरूपा महासत्त्वा महात्मानो महाबलाः । प्रमथाः प्रतिगृ-ह्णीध्वमुपहारं नमोऽस्तु वः ॥ ८० ॥

प्रमथ बलिदान मन्त्र कहतेहैं । द्वार तिराया चौराया बाजार पुर बाग राजमार्ग नदीतिर गुहा और पर्वतवासी सर्वमय सात्त्विकाग्रगण्य ( अतिसौम्य ) उदारस्वभाव महावल प्रमथगण यह पूजाका उपहार ग्रहण कीजिये । आपको नमस्कार करताहूं । इसप्रकार बलिदान करना चाहिये ॥ ७९ ॥ ८० ॥

द्वितीयप्रमथबलिदानस्वीकारः ।

निवृत्तयात्रः पुनरप्यहं विभो विजित्य शत्रून्भवतां प्रसादतः । अतो विशिष्टं वहुवित्तमुत्तमं बलिं करिष्ये विधिनोपपादितम् ॥ ८१ ॥

दूसरा प्रमथबलिदान कहाजाताहै । हे विभो ! आपके प्रसादसे शत्रुओंको जीतकर लौटनेपर फिर आपको विधिविहित बहुमूल्य उत्तम बलिप्रदान करूंगा दीहुई बलि स्वीकार करनेके अर्थ यह श्लोक पढना चाहिये॥८१॥

यात्राग्रहणम् ।

व्रजेद्दिगीशं हृदये निवेश्य यथेन्द्रमैन्द्यामपरांश्च तद्वत् । सुशुक्लमाल्याम्बरभृन्नरेन्द्रो विसर्जयेद्दक्षिण-पादमादौ ॥ ८२ ॥

यात्राग्रहण ( यात्राविधि ) कही जातीहै। यात्राकरनेकी दिशामें अधिपति देवताको ( पूर्वकी ओर इन्द्र इत्यादिके क्रमसे ) हृदयमें चिन्तनकर श्वेतपुष्पकी माला-धारण और श्वेतवस्त्र पहरकर राजा प्रथम अपना दक्षिण पैर उठावे ॥ ८२ ॥

यात्राक्रमः।

कल्याणनामसचिवाप्तजनायुधीयदैवज्ञविप्रजनकञ्चुकिमध्यसंस्थः। द्वात्रिंशतं समुपगम्य पदानि भूमौ प्रागादिनागरथवाजिनरैः प्रयायात् ॥ ८३ ॥

यात्राका क्रम कहाजाताहै। यात्रा करनेवाला राजा कल्याण अर्थात मङ्गलसूचक मङ्गलराज जयराज रण-सिंह विजयराज शिव और शुभङ्कर इत्यादि नामधारी मन्त्री आत्मीय अस्त्रधर स्वीययोद्धा दैवज्ञ विप्र ( पुरो-हितादि ) और कञ्चुकी ( अन्तःपुरके वृद्ध सेवक ) इन सबके मध्यस्थित होकर भूमिमें बत्तीस पग चल पूर्वकी ओर हाथीपर चढकर दक्षिणकी ओर रथपर चढकर पश्चिमकी ओर घोडेपर चढकर और उत्तरकी ओर नरयान ( डोला इत्यादि ) पर चढकर गमन करे ॥ ८३ ॥

यात्रासमये हस्तिनोऽशुभेङ्गितानि।

स्खलितगतिरकस्मात्स्तब्धकर्णोऽतिदीनः श्वसिति मृदु सुदीर्घं न्यस्तहस्तः पृथिव्याम्। द्रुतमुकुलितदृष्टिःस्वप्नशीलो विलोलो भयकृदहितभक्षी नैकशो विड्विमुक्च ॥ ८४ ॥

यात्राके समयमें हाथीके अशुभसूचक गमन लक्षण कहते हैं। हाथीके ऊपर चढनेपर यात्राके समय यदि हाथी की अकस्मात् गति भंग हो अथवा स्तब्धकर्ण(निश्चलश्रोत्र)

आलसी और भूमिमें सूँड डालकर दीर्घ श्वास छोडे अथवा शीघ्र आँखे आकुंचित करे या निद्राकुल होजाने के मार्गको छोडकर अन्य मार्गमें जाय और बहुत मल त्याग करे तो यात्रा करनेवाले पुरुषको वह यात्रा भयदायक होतीहै ॥ ८४ ॥

वल्मीकस्थाणुगुल्मक्षुपतरुमथनः स्वेच्छया हृष्टदृष्टिर्यायाद्यात्रानुलोमं त्वरितपदगतिर्वक्रमुन्नम्य चोच्चैः । कक्षासन्नाहकाले जनयति सुमहत् शीकरं बृंहितं वा तत्कालं वा मदाप्तो जयकृदथ रदं वेष्टयन् दक्षिणञ्च ॥ ८५ ॥

यात्राके समयमें हाथीके शुभसूचक गमनके लक्षण कहते हैं। हाथीपर चढकर यात्रा करनेके समय यदि हाथी बमई छिन्नशाखावृक्ष ( जिसकी डाली कटी हों ) गुल्म ( वेलीविहीन ) और क्षुपवृक्ष इन सबको इच्छानुसार तोडे स्फुटदृष्टि अंधा हो और त्वरितगति ( शीघ्रगामी) से मुख ऊंचा उठाकर गन्तव्यदिशामें गमन करै एवं पार्श्व बन्धन ( कमर कसना ) के समय मुखसे जल निकाले तथा शब्द करै और मत्तहोकर अपना दक्षिण दांत सूँडसे पकडे तो यात्रिकको यात्रामें जय प्राप्त होतीहै ॥ ८५ ॥

यात्रासमयेऽश्वस्याशुभेङ्गितानि ।

मुहुर्मुहुर्मूत्रशकृत्करोति न ताड्यमानोऽप्यनुलोमयायी। अकार्य्यभीतोऽश्रुविलोचनश्च श्रियं न भर्त्तुस्तुरगोऽभिधत्ते ॥ ८६ ॥

यात्राके समयमें घोडेके अशुभसूचक गमनके लक्षण कहते हैं । घोडेपर चढकर गमन करनेके समय घोडा यदि

वारवार मल और मूत्र त्याग करै और ताडना करनेपर भी गन्तव्यदिशाको चले अकारण भय और नेत्रोंसे जल गिरे तो उस अश्वपति यात्रिक मनुष्यका यात्रामें मंगल नहीं होता ॥ ८६ ॥

यात्रासमयेऽश्वस्य शुभेङ्गितानि ।

आरोहति क्षितिपतौ विनयोपपन्नो यात्रानुगोऽन्यतुरगं प्रतिह्रेषते च। वक्त्रेण वा स्पृशति दक्षिणमात्मपार्श्वं योऽश्वः स यातुरचिरात्प्रतनोति लक्ष्मीम् ॥ ८७ ॥

यात्राके समय घोडेके शुभसूचक गमनका लक्षण कहतेहैं। यात्राके समय राजाके घोडेके ऊपर चढनेपर वह घोडा यदि विनययुक्त होकर गन्तव्यदिशाकी ओर चले और अन्य घोडेको देखकर शब्द करै एवं मुखद्वारा अपना दक्षिणपार्श्व स्पर्शकरै, तो उस अश्वारोही पुरुषको यात्रामें मंगल होताहै ॥ ८७ ॥

यात्रायां स्वयमशक्तौ द्रव्यप्रस्थापनविधिः ।

कार्य्यवशात्स्वयमगमे भूभर्त्तुः केचिदाहुराचार्य्याः। छत्रायुधाद्यभीष्टं वैजयिकं विनिर्गमे कुर्य्यात् ॥८८॥

यात्रामें द्रव्यस्थापन कहेजातेहैं । कोई कोई पंडित-लोग कहतेहैं कि राजा यदि कार्य्यवशातः स्वयं यात्रिक शुभलक्षणमें यात्रा करनेमें असमर्थहो तो विजयसम्बन्धी छत्र और आयुधादिकी यात्रा करावे ॥ ८८ ॥

प्रस्थानविधिः ।

यात्रां त्रिपञ्चसप्ताहात्पुनर्भद्रेण योजयेत् । कैश्चिदिष्टफलावाप्तौ यात्रा परिसमाप्यते ॥ ८९ ॥

यात्राके अनन्तर राजाके अवस्थित होनेपर फिर यात्रा कहीजातीहै । यात्रा करके यदि एकस्थानमें तीन दिन पांच दिन अथवा सात दिन ठहरे तो फिर शुभमुहूर्त्त देखकर यात्रा करनी चाहिये । इसप्रकार कोई कोई पंडितलोग कहतेहैं कि वास्तविक जिस स्थानको यात्राकरै उस स्थानमें न पहुँचनेतक यात्रा भङ्ग नहीं होती ॥ ८९ ॥

माङ्गल्यद्रव्यादिकथनम् ।

सिद्धार्थकादर्शपयोऽञ्जनानि बद्धैकपश्वामिषपूर्णकुम्भाः । उष्णीषभृंगारनृवर्द्धमानपुंयानवीणातपवारणानि ॥ ९० ॥

यात्रामें माङ्गल्यद्रव्यदर्शन और स्पर्शनादि कहतेहैं । सिद्धार्थ ( श्वेतसरसों ) आदर्श ( दर्पण ) पयः ( दुग्ध ) अञ्जन बन्धाहुआ एक पशु मांस, जलपूर्ण कुम्भ, उष्णीष ( शिरसे बांधनेका दुपट्टा ) भृङ्गार ( जलपात्रविशेष ) समृद्धि और यशद्वारा उच्चाभिलाषी मनुष्यको नरयान ( पालकी इत्यादि ) वीणा और छत्र यह समस्त द्रव्य मंगलजनक है ॥ ९० ॥

दधिमधुघृतरोचनाकुमार्य्यो ध्वजकनकाम्बुजभद्रपीठशंखाः । सितवृषकुसुमाम्बराणि मीनद्विजगणिकाप्तजनाश्च चारुवेषाः ॥ ९१ ॥

दधि मधु घृत रोचन ( गोरोचनके अभाव में हलदी ) कुमारी ( कन्या ) ध्वज, स्वर्ण, पद्म, भद्रपीठ, ( भद्रासन ) शंख, श्वेतवर्ण बैल, पुष्प, वस्त्र, मत्स्य, द्विज,

वेश्या, और मनोहर वेषधारी आत्मीय मनुष्य यात्रामें शुभजनक होतेहैं ॥ ९१ ॥

ज्वलितशिखिफलाक्षतेक्षुभक्ष्यद्विरदवरांकुशचामरायुधानि। मरकतकुरुविन्दपद्मरागस्फटिकमणि प्रमुखाश्च रत्नभेदाः ॥ ९२ ॥

जलतीहुई अग्नि, मनोहर फल, गन्ना भक्ष्यद्रव्य श्रेष्ठ हाथी अंकुश चामर शस्त्र मरकत पत्थर ( मणिविशेष ) कुरुविन्द पत्थर पद्मराग मणि स्फटिकमणि इत्यादि एवं अन्य जो सब रत्न हैं यह सभी मांगल्य द्रव्यहैं ॥ ९२ ॥

स्वयमथ रचितान्ययत्नतो वा यदि कथितानि भवन्ति मङ्गलानि। स जयति सकलां ततो धरित्रीं ग्रहणहगालभनश्रुतैरुपास्यः ॥ ९३ ॥

पूर्वोक्त मांगल्य द्रव्य यदि यात्राके समय अयत्नसे अकस्मात् प्राप्तहों अथवा कहेजायँ तो यात्रिक राजा श्वेत सरसों इत्यादि द्रव्य भलीभांति ग्रहणकर स्पर्शयोग्य वेश्याका दर्शनकर तथा फलादिकोंको स्वीकार कर और वीणागीतादिको सुनकर यात्रा करनेसे समस्त पृथ्वीको जय करसकताहै ॥ ९३ ॥

अमङ्गलद्रव्यकननं यात्रायां तेषांदर्शनादिभिरशुभ निर्देशश्च।

कार्पासौषधकृष्णधान्यलवणक्लीबास्थितैलं वसा पंकाङ्गारगुणाहिचर्म्मशकृतः केशाय सव्याधिताः। वान्तोन्मत्तजटीन्धनं तृणतुषक्षुत्क्षामतक्रारयो मुण्डाभ्यक्तविमुक्तकेशपतिताः काषायिणश्चाशुभाः ॥ ९४ ॥

यात्रामें अमङ्गल द्रव्य कहेजातेहैं । यात्राके समयमें कपास औषधि क्लीब ( नपुंसक ) अस्थि तैल वसा ( मेद ) पङ्क ( कीच ) अंगार गुड सर्प चर्म्म मल केश लोहद्रव्य ( कुठारादिशस्त्र इत्यादिः ) रोगपीडित मनुष्य वमन वातुल ( वादीयुक्त ) जटाधारी मनुष्य काष्ठ तृण तुष ( भुस्सी ) दरिद्री मट्ठा शत्रु मुँडाहुआ शिर कृताभ्यंग ( तैललगाये ) खुलेबाल पतित और ब्रह्मचारी इत्यादि का दर्शन करनेसे अमंगल होताहै ॥ ९१ ॥

स्वप्नदर्शनफलम् ।

यान्यत्र मङ्गलामङ्गलानि निर्गच्छतां प्रादिष्टानि । स्वप्नेष्वपि तानि शुभाशुभानि विष्ठानुलेपनं धन्यम् ॥ ९५ ॥

स्वप्न देखनेका शुभाशुभ फल कहाजाताहै यात्राके समय जिस सब मांगल्य द्रव्योंका देखना और स्पर्शनादिमें यात्रिक मंगलामंगल कहागयाहै । स्वप्नमेंभी उन्हीं सब द्रव्योंके देखने और स्पर्शनादिसे उसीः प्रकार शुभा शुभ फल होगा । किन्तु विष्ठालेपन करनेसे धनलाभ होताहै ॥ ९५ ॥

यात्रायां मनःशुद्धिप्रशंसा ।

शुभाशुभानि सर्व्वाणि निमित्तानि स्युरेकतः ।
एकतस्तु मनो यातुस्तद्विशुद्धिर्ज्जयावहा ॥ ९६ ॥

यात्रामें मनशुद्धिकी प्रशंसा कहीजाती है शुभसूचक और अशुभसूचकके कारण तिथि नक्षत्र एवं वार इत्यादि और यात्रिकका मन यह दोनोंही यात्रामें समानहैं । इसलिये तिथिनक्षत्रादि श्रेष्ठ होनेपर भी मन प्रसन्न न होनेसे

यात्रा शुभदायक नहीं होती । अतएव मन प्रसन्न होनेप-
रही यात्राका शुभ होताहै ॥ ९६ ॥

यात्रादिने भोजनार्थसाधितान्नादिभिरशुभशुभज्ञानम् ।

अस्वाद्वक्षत ( १ ) कचमक्षिकानुविद्धं दुर्गंधं क्षय-
कृद्भूरि यच्च दग्धम् । सुस्विन्नं शुचि रुचिरं मनोऽ-
नुकूलं स्वाद्वन्नं बहुविजयाय यानकाले ॥ ९७ ॥

यात्राके दिनमें अन्नभक्षणद्वारा अशुभ और शुभ कहा-
जाताहै । यात्राके दिन राजा यदि स्वादरहित अन्न
अपक्व अन्न केश और मक्खीयुक्त अन्न अल्पअन्न और
दुग्धका बनाहुआ द्रव्य भोजनकरके गमनकरताहै तो
उसका विनाश होता है । अरिसुसिद्ध अन्न ( शत्रुसंपा-
दित ) पवित्रअन्न सुदृश्यान्न ( उत्तम ) मनको तृप्तकरने-
वाला अन्न सुस्वादु अन्न और बहुतअन्न भोजन करनेसे
यात्रिककी जय होतीहै ॥ ९७ ॥

पूर्व्वादिचतुर्दिक्षुभोजनविधिः ।

प्रागादिषु घृतं तिलौदनं मत्स्याः क्षीरमिति प्रद-
क्षिणम् । अद्यान्नृपतिर्यथादिशं नक्षत्रादिविहितश्च
सिद्धये ॥ ९८ ॥

पूर्वदिशाको विशेष गमनमें भक्षणीय द्रव्यका विशेष
कहाजाताहै । राजा पूर्वदिशाकी ओर प्रदक्षिणके क्रमसे
घृत तिलान्न मत्स्य और क्षीरभोजन करे । अर्थात् पूर्वकी
ओर गमनमें घृत दक्षिणके गमनमें तिलान्न पश्चिमके

---

( १ ) मक्षिकाकचसिकतानुविद्धमिति पुस्तकान्तरे पाठान्तरम् ।

गमनमें मत्स्य और उत्तरके गमनमें दुग्धभोजन करना चाहिये। जिस दिशामें जो द्रव्य कहागयाहै। उस दिशाके गमनमें उसी द्रव्य और नक्षत्रविहित द्रव्य भक्षणकरनेसे यात्रिककी इष्टसिद्धि होतीहै ॥ ९८ ॥

यात्रासमये वातशुभलक्षणम्।

अनुलोमगते प्रदक्षिणे सुरभौ देहसुखेऽनिले गतः। तिमिराणि गभस्तिमानिव प्रसभं हन्ति बलानि विद्विषाम् ॥ ९९ ॥

यात्राके समय वायुके शुभलक्षण कहतेहैं। यात्राके समय वायु यदि गन्तव्य दिशाके अनुकूलही चले सद्गन्धयुक्त और शरीरको सुखदायक हो तो सूर्य जिस प्रकार अन्धकारसमूहको नष्ट करताहै उसीप्रकार यात्रिक शत्रुकी सेनाको सहसा नष्टकरताहै ॥ ९९ ॥

वैजयिकम्।

उपपत्तिरयत्नतो यदा फलयानासनरत्नवाससाम्। प्रमदाक्षितिदन्तिवाजिनां विजयद्वारमनावृतं तदा ॥ १०० ॥

फलादिके लाभमें शुभफल कहाजाताहै। यात्राके समय यात्रिकको अयत्नक्रमसे यदि फल यान आसन रत्न वस्त्र स्त्री भूमि हाथी और घोडा प्राप्त हों तो निःसन्देह विजय होती है ॥ १०० ॥

यात्रासमये देहस्पन्दनफलम्।

दक्षिणपार्श्वस्पन्दनमिष्टं हृदयं विहाय पृष्ठञ्च। कण्डूयनं नरपतेर्दक्षिणपाणौ जयायैव ॥ १०१ ॥

यात्राके समय देहस्पन्दनका फल कहाजाताहै। यात्राके समय यात्रिक मनुष्यके हृदय और पीठके अतिरिक्त दक्षिणपार्श्व फडकनेपर शुभ फल होताहै और राजा का दक्षिण हाथ खुजानेपरभी जय प्राप्त होतीहै ॥ १०१ ॥

यात्रासमये ध्वजभंगादिभिरशुभकथनम्।

ध्वजातपत्रायुधसन्निपातः क्षितौ प्रयाणे यदि मानवानाम्। उत्तिष्ठतो वाम्बरमेति संगं पातोऽथवा तं नृपतेः क्षयाय ॥ १०२ ॥

यात्राके समय ध्वजादिपतनद्वारा अनिष्ट फल वर्णित होता है। युद्धमें जानेके समय सैनिकोंसे यदि पृथ्वी में ध्वजा छत्र और अस्त्र गिरे तो राजाका विनाश होगा और उठते समय यात्रीका वस्त्र यदि किसी प्रकार भूमि में लगे अथवा गिरे तोभी राजाका विनाश होताहै १०२॥

बलोत्साहेन शुभकथनम्।

संग्रामे वयममराद्विजप्रसादाज्जेष्यामो रिपुबलमाश्वसंशयेन। यस्यैवं भवति बले जनप्रवादः सोऽल्पोऽपि प्रचुरबलं रिपुं निहन्ति ॥ १०३ ॥

यात्राके समय यात्रिकके बलोत्साहद्वारा शुभफल कहाजाता है। "हम देवता और ब्राह्मणोंके प्रसादसे युद्धमें शीघ्रही निःसन्देह शत्रुकी सेनाको जीत सकेंगे" इस प्रकारका जनप्रवाद युद्धमें जानेके समय जिस राजा की सेनामें उपस्थित हो उस राजाकी थोडी सेना होनेपर भी शत्रुकी बहुतसी सेनाका नाश कर सकते हैं ॥ १०३॥

यात्रायां क्रव्यादपक्षिभिः शुभाशुभकथनम् ।

वाहिनीं समुपयाति पृष्ठतो मांसभुक्खगगणो युयुत्सवः।तस्य चाशु बलविद्रवो महानग्रगैस्तु विजयो विहङ्गमैः ॥ १०४ ॥

सेनाके गमनकालमें मांसभोजी पक्षियोंद्वारा शुभाशुभ वर्णित होता है। जो रणकी इच्छा करनेवाले राजाकी सेनाके पीछे मांसभोजी गृध्रादि पक्षिगण गमन करें तो उस राजाकी सेना शीघ्रही क्षयको प्राप्त होती है । और सेनाके सामने होकर पक्षिगणोंके अनुकूल दिशाको गमन करने पर युद्धमें जय प्राप्त होती है ॥ १०४ ॥

गच्छतो वामहस्तशुभशकुनानि ।

शिवा श्यामा बला छुच्छूः पिंगला गृहगोधिका ।
सूकरी परपुष्टा च पुंनामानश्च वामतः ॥ १०५ ॥

गमनकालमें :वामदिक्स्थित शुभशकुन कहेजाते हैं । शृगाली ( गीदडी ) कपोतिका ( कबूतरी ) बला ( बगली ) छछूंदर ( छपकली ) पिंगला टीकटीकी सूकरी और कोकिलयह सब और अन्य पुंसंज्ञक पक्षिगण गमनकालमें यात्रिकके बायेंभागमें होनेसे शुभफल होताहै ॥ १०५ ॥

गच्छतो दक्षिणस्थशुभशकुनानि ।

स्त्रीसंज्ञाश्चाषभषककपिश्रीकर्णचित्कराः । शिखि श्रीकण्ठपिप्पीकरुरुश्येनाश्च दक्षिणाः ॥ १०६ ॥

गमनकालमें दक्षिणभागस्थित शुभशकुन कहेजाते हैं। स्त्रीसंज्ञकपक्षि शुक, भसक ( पक्षिविशेष ), वानर,

श्रीकर्ण, चित्कर (मृगविशेष), मोर, श्रीकण्ठ, चातक, हरिण और श्येनपक्षि यह सब यात्रिकके दक्षिणभागमें होनेसे शुभ होते हैं ॥ १०६ ॥

दग्धादिनिर्णयः।

मुक्तप्राप्तैष्यासु फलं दिक्षु तथाविधम्।
अंगारदीप्तधूमिन्यस्ताश्च शांतास्ततोऽपराः॥१०७॥

दिक्भेदसे शकुनसम्बन्धमें शुभाशुभ वर्णित होताहै॥ चक्रके भ्रमणवशातः जिस दिशामें सूर्य अवस्थित हो उस दिशाका नाम प्राप्तसूर्य्या है उसके पीछेकी दिशाका नाम मुक्तसूर्य्या और उसके सन्मुख भागका नाम ऐष्यसूर्य्या है। रात्रिके शेष चार दण्डसे दिनके चारदण्डपर्य्यन्त ऐशानीदिक् मुक्तसूर्य्या पूर्वदिक् प्राप्तसूर्य्या और आग्नेयीदिक् ऐष्यसूर्य्या है इसप्रकार दिन चार दण्डके पीछेसे डेढप्रहरपर्य्यन्त आग्नेयीदिक् मुक्तसूर्य्या दक्षिणदिक् प्राप्तसूर्य्या नैर्ऋतीदिक् ऐष्यसूर्य्या ढाईप्रहरसे साढेतीनप्रहरतक दक्षिणदिक् मुक्तसूर्य्या नैर्ऋतीदिक् प्राप्तसूर्य्या पश्चिमदिक् ऐष्यसूर्य्या दिनके साढेतीन प्रहरपीछेसे रात्रिके चारदण्डपर्य्यन्त नैर्ऋतीदिक् मुक्तसूर्य्या पश्चिमदिक् प्राप्तसूर्य्या वायवीदिक् ऐष्यसूर्य्या रात्रि चारदण्डके पीछेसे रात्रि डेढप्रहरपर्य्यन्त पश्चिमदिक् मुक्तसूर्य्या वायवीदिक् प्राप्तसूर्य्या उत्तरादिक् ऐष्यसूर्य्या रात्रि डेढप्रहरके पीछेसे ढाईप्रहरपर्यन्त वायवीदिक् मुक्तसूर्य्या उत्तरदिक् प्राप्तसूर्य्या ऐशानीदिक् ऐष्यसूर्य्या और रात्रिके ढाईप्रहरके पीछेसे साढेतीन प्रहरपर्य्यन्त उत्तरदिक् मुक्तसूर्य्या ऐशानीदिक् प्राप्तसूर्य्या और

पूर्वदिक् ऐष्यसूर्य्या होती है। मुक्तसूर्य्या दिशाका नाम अङ्गार प्राप्तसूर्य्यादिशाका नाम दीप्त और ऐष्यसूर्य्या-दिशाका नाम धूमिनी है। यात्राके समय इन सब दिशा-ओंमें शकुन अवस्थित होनेपर नामानुरूप अशुभफल होता है। इन तीन दिशाओंके अतिरिक्त अन्य पांच दिशाओंका नाम शान्ता है, शान्तादिशामें शकुन उप-स्थित होनेपर शुभ होता है॥ १०७॥

हर्म्यादिस्थानस्थितशकुनस्य शुभकारकत्वकथनम्।

हर्म्म्यप्रासादमांगल्यमनोज्ञस्थानसंस्थिताः।
श्रेष्ठामधुरसक्षीरफलपुष्पद्रुमेषु च॥ १०८॥

अट्टालिकादिस्थानस्थित शकुनके लक्षण कहे जातेहै। ईंटोंसे बनाहुआ गृह देवग्रह गोबर इत्यादिसे लिपाहुआ स्थान पुष्पादियुक्त स्थान मधुरवृक्ष अर्कादि वृक्ष और पुष्पयुक्तवृक्ष इन सब स्थानोंमें यात्राके समय बैठाहुआ शकुन (पक्षि) शुभफल देताहै॥ १०८॥

चितादिस्थानावस्थितशकुनस्याशुभत्वम्।

चिताकेशकपालेषु मृत्युबन्धभयप्रदाः।
कण्टकिकाष्ठभस्मस्था कलहायासदुःखदाः॥१०९॥

चितास्थानमें बैठेहुए शकुन अशुभ लक्षण कहा जाता है। यात्राके समय श्मशानमें बैठा हुआ पक्षि देखनेसे यात्रिककी मृत्यु केशमध्यमास्थित (बालोंके ऊपर) पक्षि देखनेसे बन्धन और मनुष्यके मस्तकपर बैठा हुआ पक्षि देखनेसे भय होता है। और कांटेदार वृक्षके ऊपर बैठा हुआ पक्षि देखनेसे कलह तथा काष्ठके ऊपर बैठा

हुआ पक्षि देखनेसे परिश्रम एवं भस्मके ऊपर बैठा हुआ पक्षि देखनेसे यात्रिकको दुःख उपस्थित होताहै॥ १०९॥

यात्रायां काकस्य शुभत्वम्।

ध्वाङ्क्षः पार्श्वद्वयेनापि शस्तो यात्रानुलोमगः।
यातुः कर्णसमो ध्वाङ्क्षः क्षेमेणार्थप्रसाधकः॥ ११०॥

यात्रामें काकके सम्बन्धमें शुभफल कहाजाता है। काक यात्राकालीन दोनों पार्श्वमेंही अनुकूल दिशामें जानेसे श्रेष्ठ होता है। और यदि काक यात्राके समय यात्रीके कर्णसमस्थानगत हो ( कानकी बराबर ऊंचे स्थानमें बैठा हो) तो मंगलार्थ साधक होता है॥ ११०॥

यात्रायां काकाशुभत्वम्।

विरुवंश्चाग्रतः पक्षौ धुन्वन्ध्वाङ्क्षो भयप्रदः।
प्रत्युरश्चोपसर्पंस्तु संस्पृशंश्च भयङ्करः॥ १११॥

काकके सम्बन्धमें अशुभ फल कहा जाता है। यात्रा के समय काक यदि दोनों पंखोंको हिलाकर यात्रीके सन्मुख शब्द करे तो यात्रा भयदायक होगी। और यात्राके समय काक यात्रीका वक्षः देश स्पर्श करने परभी यात्रा भयदायक होती है॥ १११॥

गवादिचेष्टावशेन शुभाशुभकथनम्।

अनुलोमो वृषो नर्दन्धन्यो गौर्म्माहिषस्तथा।
गमनप्रतिषेधाय खरः प्रत्युरसि स्थितः॥ ११२॥

यात्राके समय गौ इत्यादिकी चेष्टादि देखनेसे शुभा-शुभ फल कहाजाता है। यात्राके समय बैल गौ और भैंस अनुलोमादिगत ( यथाक्रम ) होकर शब्द करनेसे

यात्रीको शुभफल होता है । किन्तु यात्रीके सन्मुख यदि गधा प्रतिलोमगत ( विपरीत ) हो तो यात्रासे निवृत्त होना श्रेष्ठ है ॥ ११२ ॥

शिवाचरितशुभाशुभकथनम् ।

प्राच्युदीच्योः शिवा शस्ता शान्ता सर्व्वत्र शोभना ।
धूमिताभिमुखी हन्ति स्वरदीप्ता दिगीश्वरान् ११३॥

शिवाचरित्र कहाजाताहै । यात्राके समय शिवा यदि पूर्व्वदिशा अथवा उत्तरदिशामें अवस्थित हो तो शुभदायक होतीहै । और शब्दशून्य शिवा सब दिशाओंमें शुभदायक होतीहै । एवं पूर्वोक्त धूमिताभिमुखी होकर शिवा यदि क्रूररव करै तो उस दिशाका जो अधिपति ( क ) हैं उनकी मृत्यु होती है ॥ ११३ ॥

कुक्कुरशुभाशुभकथनम् ।

नृहयातपवारणेभशस्त्रध्वजदेहानवसूत्रयाञ्जयाय ।
सभयो विचरन्विना निमित्तं न शुभश्चाभिमुखे भ्रमँ छिखन्गाम् ॥ ११४ ॥

कुक्कुरका चरित्र कहाजाताहै । यात्राके समय कुत्ता यदि मनुष्य, घोडा, छत्र, हाथी, शस्त्र और ध्वजदण्डके चारों ओर भ्रमण करै तो यात्रीकी जय होतीहै किन्तु निमित्तके अतिरिक्त कुत्तेके भययुक्त होकर भ्रमण करनेपर वा मार्गके सामने शब्द करनेसे अथवा नखद्वारा भूमि खोदनेपर यात्रीको शुभफल नहीं होता ॥ ११४ ॥

---

( क ) बृहद्यात्रामें राजा कुमार नेता और दूतादि क्रमसे दिगधिपति वर्णित हुए हैं ।

शकुनापवादः ।

द्वन्द्वरोगार्दितास्त्रस्ताः कलहामिषकांक्षिणः । आप गान्तरिता मत्ता न ग्राह्याः शकुनाः क्वचित् ॥ ११५॥

शकुनापवाद कहा जाता है । यात्राके समय स्त्री और पुरुष, शकुन ( पक्षि ) परस्पर स्नेहपीडित रोगार्त्त भीत कलहाकांक्षी, मांसाभिलाषी, नद्यव्यवहित ( नदीके दोनों तटपर ) अथवा कामार्त्त होनेसे यात्रीके सम्बन्धमें शुभाशुभ फल प्रदान नहीं करते ॥ ११५ ॥

युगपद्दृष्टस्य शुभाशुभशकुनद्वयस्य बलाबल-योगफलनिर्देशः ।

विसर्जयति यद्येको एकश्च प्रतिषेधति । स विरो-धोऽशुभो यातुर्ग्राह्यो वा बलवत्तरः ॥ ११६ ॥

एककालीन शुभाशुभ दो शकुनोंका फल कहा जाता है । यदि यात्राके समय एक शकुन शुभदायक और अन्य शकुन अशुभदायक हो तो यात्रीको अशुभ होता है । किन्तु बलहीन और बलयुक्त ग्रहण करके शुभाशुभ विचा रना चाहिये ॥ ११६ ॥

रिक्तकुम्भस्यानुकूलत्वादिना शुभकथनम् ।

रिक्तः कुम्भोऽप्यनुकूलः शस्तोऽम्भोर्थी पिपासतः। चौर्य्यविद्यावणिज्यार्थमुद्यतानां विशेषतः ११७ (क)

शून्यकुम्भके सम्बन्धमें शुभ फल कहाजाताहै । यात्रा के समय शून्यकुम्भ लेकर यदि कोई जल लानेके लिये

---

( क ) रिक्तकुम्भोऽनुकूलश्च शस्तोऽस्तोऽर्थायियासत इत्येव पाठः टीका सम्मततया समीचीनः ।

यात्रानुकूल दिशामें जाय तो यात्रीको शुभ होताहै । चौर्य्यविद्या (चुरानेकी विद्या ) और वाणिज्यार्थी मनुष्य को ऐसा कुम्भ देखनेसे विशेष शुभ होताहै पूर्णकुम्भ अथवा शून्यकुम्भ प्रतिकूलगामी होनेसे शुभदायक नहीं होता । स्थापित पूर्णकुम्भ शुभफलदायक और स्थापित शून्यकुम्भ अशुभसूचक होताहै ॥ ११७ ॥

### यात्रायामुत्तानशय्यादीनां दर्शनादिभिरशुभकथनम् ।

उत्तानशय्यासनवातसर्पनिष्ठ्यूतदुर्दर्शनमैथुनानि । नेष्टानि शब्दाश्च तथैव यातुरागच्छतिष्ठप्रविशास्थि-राद्याः ॥ ११८ ॥

उत्तानशय्यादि (ऊंची खडी ) देखनेमें अशुभ फल कहाजाताहै । यात्राके समय ऊर्द्धमुख खट्वादि विपरीत आसन अधोवायु त्याग निष्ठीवन थूथू और श्लेष्म कफ विष्ठादि देखना एवं मैथुन देखना यात्रीको शुभ दायक नहीं होता और यदि आगमन कर ठहर प्रवेश कर स्थित होओ इत्यादि आह्वान सूचक वाक्य कोई कहे तो यात्रीको शुभफल नहीं होता ॥ ११८ ॥

### क्षुतफलम् ।

सर्व्वतः क्षुतमशोभनमुक्तं गोक्षुतं मरणमेव करोति । केचिदाहुरफलं बलात्कृतं वृद्धपीनसितबालकृतञ्च यत् ॥ ११९ ॥

क्षुत अर्थात् छुचकीका फल कहाजाताहै । यात्रादि समस्त कार्य्योंमें और प्रवेशमें छुचकी अशुभदायक होती है यात्रामें गौकी हाँची ( छुचकी विशेष ) मृत्युजनक

होतीहै। कोईकोई कहतेहैं कि तृष्णादिद्वारा बलपूर्वक कृत हाँचीर (कृत्रिमहुचकी) वृद्धकी हुचकी श्लेष्म रोगजनित हुचकी और बालककी हुचकी यह सब शुभाशुभ कुछभी नहीं देती। यह अनेक पंडितोंका मत है॥ ११९॥

अशुभशकुनप्रायश्चित्तम्।

क्रोशादूर्द्ध्वं शकुनचरितं निष्फलं प्राहुरेके तत्रा-
निष्टे प्रथमशकुने मानयेत्पञ्च षड्वा। प्राणायामा
न्नृपतिरशुभे षोडशैव द्वितीये प्रत्यागच्छेत्स्वभव
नमतो यद्यनिष्टं तृतीयम्॥ १२०॥

अशुभशकुनके सम्बन्धमें प्रायश्चित्त कहाजाता है। एक कोशसे ऊपर शकुनके सम्बन्धमें शुभाशुभ फल कुछभी नहीं होता, ऐसा अनेक पण्डितोंका मत है, एककोशके मध्यमें अनिष्टसूचक शकुन दिखाई देनेपर नरपति पांचवार अथवा छै वार प्राणायाम करके गमन करै। दूसरी वार अशुभसूचक शकुन दिखाई देनेपर राजाको सोलहवार प्राणायामपूर्वक गन्तव्य दिशामें गमन करना उचित है और तीसरीवार अनिष्ट सूचक शकुन दिखाई देनेपर गन्ता (यात्री) यात्राभंग करके अपने घर लौट आवे॥ १२०॥

बलादिषु दद्रुविचर्च्चिकादिरोगोत्पत्त्या अशुभफलनिर्देशः।

दद्रुप्रतिश्यायविचर्चिकाद्याः कर्णाक्षिरोगाः पिटको-
द्भवाश्च। प्रायो बलेनेतरि वा नृपे वा जानीत राज्ञो
भयकारणं तत्॥ १२१॥

सैन्यादिकी रोगोत्पत्तिद्वारा अशुभफल वर्णित होता है । दाद, पीनस, विचर्चिका, ( कुष्ठविशेष ) कर्ण और अक्षिपीडा ( नेत्ररोग ) एवं विस्फोटकादि रोग यदि सैन्यसेनापति अथवा राजाके शरीरमें हो, तो राजाकी यात्रा भयका कारण होगी । हे पण्डितो ! तुम इस विषयसे ज्ञात होओ ॥ १२१ ॥

सुखोदर्कजयलक्षणानि ।

शुभा मृगपतत्रिणो मृदुसमीरणाह्लादकृद्ग्रहाः स्फुटमरीचयो विगतरेणुदिङ्मण्डलम् ।यदन्यदपि वैकृतं न विजयावसाने भवेत्तदा सुखमकण्टकं नृपतिरत्ति देशं रिपोः ॥ १२२ ॥

युद्धजीतनेके पीछे शुभसूचक लक्षण कहेजाते हैं । युद्धजीतनेके पीछे यदि मृग और पक्षिगण शुभसूचक हो अर्थात् शान्तदिशामें अवस्थित होकर शान्तशब्द करें और मृदु वायु आल्हादजनकहो ग्रहगण स्फुटकिरणहो, दिङ्मण्डल धूलिरहित हो और किसी प्रकार वैकृत ( उत्पात ) उत्पन्न न हो, तो राजा निष्कण्टक शत्रुका राज्य भोग सकता है ॥ १२२ ॥

असुखोदर्कजयलक्षणानि ।

दिग्दाहक्षतजरजोऽश्मवृष्टिपातैर्निर्घातक्षितिचलनादिवैकृतैश्च।युद्धान्ते मृगशकुनैश्च दीप्तनादैर्नो भद्रं भवति जितेऽपि पार्थिवस्य ॥१२३॥

युद्धजीतनेके पीछे अशुभसूचक लक्षण कहेजाते हैं।युद्ध जीतनेके पीछे यदि दिग्दाह, रक्तवृष्टि, पाषाणवृष्टि,

निर्घात ( गर्जना ) और भूमिकम्पादि वैकृत ( उत्पात ) उपस्थित हों, एवं मृग और शकुन ( पक्षी ) क्रूरनाद करैं और सूर्यके सम्मुख अवस्थित हों, तो राजाके युद्धमें जय लाभ करनेपरभी शुभफल नहीं होगा ॥ १२३ ॥

ब्राह्मणादीनां धनग्रहणनिषेधस्त्यक्तवाहनादीनां हननिषेधश्च।

परविषयपुराप्तौ साधुदेवद्विजस्वं कुलजनवनिताश्च क्ष्माधिपो नोपरुन्ध्यात् । विगजतुरगशस्त्रानार्तं भीतांश्च हन्यात् शुभतिथिदिवसर्क्षे हृष्टसैन्यो-विशेच्च ॥ १२४ ॥

युद्ध जीतनेके पीछे ब्राह्मणोंका धनग्रहण निषेध और त्यक्तवाहनमनुष्यों ( जिन्होंने सवारीका परित्याग किया हो ) की हिंसावर्जन कथित होता है । राजा शत्रुके राज्य और नगरको सम्यक् प्रकार प्राप्त होकर साधु देवता और ब्राह्मणोंका धन हरण अथवा कुल स्त्रियोंका अवरोध ( रोकलेना ) न करे और पलायनके समयमें हाथी तथा घोडेसे गिरे अस्त्ररहित पीडित और भीत मनुष्यको हनन न करै । शुभतिथि, शुभदिन, और शुभ नक्षत्रमें सेनाके प्रसन्न चित्त होनेपर अपनी पुरीमें प्रवेश करना चाहिये ॥ १२४ ॥

यथोक्तशास्त्रार्थकारिणो राज्ञः परमाभ्युदयकथनम् ।

इति मनुजपतिर्यथोपदेशं भगणविदां प्रकरोति यो वचांसि । स सकलनृपमण्डलाधिपत्यं व्रजति दिवीव पुरन्दरोऽचिरेण ॥ १२५ ॥

यथोक्तशास्त्रार्थके प्रतिश्रद्धावान् राजाका परममंगल कथित होता है । जो राजा ज्योतिर्विदोंके इस यथोक्त वाक्यका आचरण करताहै, वह शीघ्रही स्वर्गस्थइन्द्रकी समान समस्तराजमण्डलके ऊपर आधिपत्य स्थापन कर-सकताहै ॥ १२५ ॥

अथ परीक्षाविधिः ।

नो शुक्रास्तेऽष्टमेऽर्केगुरुसहितरवौजन्ममासेऽष्टमे-
न्दौ विष्टौ मासे मलाख्ये कुजशनिदिवसे जन्मता-
रासु चाथ । नाडीनक्षत्रहीने गुरुरविरजनीनाथ-
ताराविशुद्धौ प्रातः कार्या परीक्षा द्वितनुचरगृहां-
शोदये शस्तलग्ने ॥ १२६ ॥

अब मिथ्यापवादग्रस्तमनुष्यकी सर्पघटादिद्वारा परीक्षा कही जाती है । शुक्रग्रह अस्तगत न होनेपर गोचरमें रवि अष्टमके अतिरिक्त स्थानमें होनेसे एवं गुर्वा-दित्ययोगजन्ममास, अष्टमचन्द्र, विष्टिभद्रा, मलमास, और शनिवार, जन्मतारा एवं नाडीनक्षत्रके अतिरिक्त बृहस्पति, रविचन्द्रमा, और ताराशुद्ध होनेसे द्व्यात्मक और चरलग्नके नवांशमें प्रशस्तलग्नमें प्रातः समय परीक्षा करनी चाहिये ॥ १२६ ॥

अग्निग्रहणम् ।

वह्निग्रहं कुजगुरुज्ञदिनेशवारे माघादिषट्सु च
मृदुध्रुववह्निभेषु । कुम्भाजभांशकविलग्नमशुद्ध-
कालं लग्नस्थशीतगुसितौ च विहाय कुर्यात्॥१२७॥

अग्निग्रहणरूपपरीक्षाके सम्बन्धमें विशेष कथित होताहै। मंगल, बृहस्पति, बुध और रविवारमें, माघादि छः मासमें, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी और कृत्तिका नक्षत्रमें कुम्भ, मेष और जलजराशिका नवांश और लग्न के अतिरिक्तकाल शुद्धि परित्याग करके लग्नमें चन्द्रमा और शुक्रके न होनेपर अग्निग्रहण करै ॥ १२७ ॥

मोक्षदीक्षा।

जीवार्केन्दूडुशुद्धौ ध्रुवमृदुभगणे चोत्तरस्थे दिनेशे प्रव्रज्येशे स्ववीर्य्ये स्थिरभवनविलग्नस्थितेऽर्कज्य वारे। प्रव्रज्याख्येषु योगेष्वशुभगगनगैर्वीर्यहीनैः सुवीर्ये जीवे धर्मस्मरे वा स्थिरभवननवांशोदये मोक्षदीक्षा ॥ १२८ ॥

मोक्षदीक्षा कथित होतीहै। बृहस्पति, रवि और चंद्र गोचरमें शुद्ध होनेसे ताराशुद्धि होनेपर उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, और रेवती नक्षत्रमें उत्तरायणमें प्रव्रज्याधिपतिग्रह बलवान् अवस्थासे स्थिरलग्नमें होनेसे रविअथवा बृहस्पतिवारमें प्रव्रज्याख्ययोगमें अशुभग्रहोंके हीनवीर्य होनेपर बलवान् बृहस्पति नवम वा सप्तम स्थानमें होनेसे स्थिरराशिकी लग्नमें अथवा नवांशमें मोक्षदीक्षा ( संन्यासग्रहण ) करै ॥ १२८ ॥

जन्मसमये मरणसमये वा मोक्षनिर्णयः।

षष्ठाष्टमकण्टकगो गुरुरुच्चे भावमानलग्ने वा।
शेषैरबलैर्जन्मनि मरणे वा मोक्षगतिमाहुः॥ १२९॥

मोक्षगतिका निर्णय होता है। जिसके जन्मकाल वा मरणकालमें उच्चगृहस्थित बृहस्पति लग्न छठे और आठवें में हो अथवा लग्नमें वा लग्नके चौथे, सातवें और दशवें राशिगत हो, उस मनुष्यकी मोक्षगति होतीहै और जन्म काल वा मरणसमयमें मीनलग्नमें बृहस्पति अवस्थित होनेपर और अन्य ग्रहगण बलहीन होनेपरभी मोक्षगति होती है। इस प्रकार ज्योतिर्विदोंने कहा है ॥ १२९ ॥

निधनस्थग्रहवशेन मरणनिर्णयः।

सूर्य्यादिभिर्निधनगैर्हुतवहसलिलायुधज्वरामयजः।
तृट्क्षुत्कृतश्च मृत्युः परदेशादौ चरादिभे निधने १३०॥

अष्टमस्थितग्रहद्वारा मृत्युका निर्णय होता है। जन्मके समय लग्नके आठवें स्थानमें सूर्यादि ग्रह अवस्थित होने पर क्रमशः अग्नि, जल, अस्त्र, ज्वर, अन्यरोग, तृष्णा और क्षुधाकृत मृत्यु होती है अर्थात् रवि आठवें स्थान में होनेपर अग्निसे चन्द्रमा होनेपर जलसे मंगल होने-पर अस्त्रसे बुध होनेपर ज्वरसे बृहस्पति होनेपर अन्य रोगसे शुक्र होनेपर तृष्णासे और शनि आठवें स्थानमें होनेपर क्षुधासे मृत्यु होती है और चरराशि अष्टम स्थान स्थित होनेपर विदेशमें मृत्यु स्थिरराशि अष्टम स्थानस्थ होनेपर विदेशमें मृत्यु और द्व्यात्मक राशि अष्टमस्थान स्थित होनेपर मार्गमें मृत्यु होगी ॥ १३० ॥

बलवद्ग्रहदर्शनादिभिर्निर्याणनिर्णयः।

यो वा बलवान्निधनं पश्यति तद्धातुकोपजो मृत्युः।
लग्नाद्त्र्यंशपतिर्वा द्वाविंशत्कारणं मृत्योः ॥ १३१ ॥

अष्टमस्थानमें ग्रहोंके अवस्थित न होनेपर उसकी मृत्यु कथित होतीहै। जन्मलग्नकी अपेक्षा यदि अष्टम स्थान ग्रह शून्य हो तो इस स्थानमें जिस ग्रहकी दृष्टि होगी उसग्रहके धातुप्रकोपज रोगसे जातककी मृत्यु होतीहै बहुत ग्रहद्वारा अष्टमस्थान अवलोकित होनेसे जो ग्रह अधिक बलवान् हो, उसकी धातुप्रकोपजरोगसे मृत्यु होती है, अष्टमस्थान यदि ग्रहहीन हो, अथवा किसी ग्रहकी दृष्टि न हो, तो जन्मलग्न द्रेष्काणकी अपेक्षा द्वाविंश द्रेष्काणाधिपतिकी धातुप्रकोपजरोगसे मृत्यु होती है ॥ १३१ ॥

अग्न्यादिना शवपरिणतिनिर्णयः।

पापद्रेष्काणे दाहो द्वाविंशे शुभद्रेष्काणे क्लेदः।
शोषो मिश्रद्रेष्काणे विष्ठान्तो व्याडवर्गे च ॥१३२॥

मृतशवका परिणाम कहाजाता है। जन्मलग्न द्रेष्काणकी अपेक्षा द्वाविंशद्रेष्काणाधिपति पापग्रह होनेपर मृत (शव) अग्निदग्ध होता है। शुभग्रह होनेपर मृत (शव) का क्लेद (मार्दव) होता है और जन्मलग्न द्रेष्काणकी अपेक्षा द्वाविंश द्रेष्काण यदि पूर्वोक्त मिश्रसंज्ञक हो तो मृतशरीर शुष्क होगा और व्याडद्रेष्काण होनेसे मृतशरीर शृगाला (कुकुरा) दिद्वारा भक्षित होकर विष्ठामें परिणत होता है ॥ १३२ ॥

विबुधपितृतिर्यङ्नारकान्गुरुरुडुपसितावसृग्रवीज्ञ-
यमौ। रिपुरन्ध्रत्र्यंशकपा नयन्ति चास्तारिनिध-
नस्थाः ॥ १३३ ॥

मृतककी देवलोकादिप्राप्ति कथित होती है। जिसके जन्मलग्नकी अपेक्षा सातवें छठे वा आठवें स्थानमें बृहस्पति अवस्थित हो, वह मनुष्य देवलोकमें जाता है। चन्द्र और शुक्र जन्मके समय उक्त सब स्थानोंमें रहनेसे मृतव्यक्तिको पितृलोककी प्राप्ति होती है। मंगल और रवि सप्तमादिस्थानमें अवस्थित होनेसे मृतमनुष्यको तिर्यक्‌योनि प्राप्त होती है एवं बुध और शनि जन्मलग्नके सातवें छठे वा आठवें स्थानमें होनेसे मृतव्यक्ति नरकमें गिरता है और रिपुत्र्यंशपति तथा रंध्रत्र्यंशपति अर्थात् जन्मलग्न द्रेष्काणकी अपेक्षा षोडशद्रेष्काणपति और द्वाविंशद्रेष्काणपति इन दोनों ग्रहोंमें जो ग्रह बलवान् हो, उसी ग्रहके निर्दिष्ट देवलोकादिको मृतव्यक्ति प्राप्त होता है ॥ १३३ ॥

सुविस्तरे ज्योतिषि यत्नतो मया समस्तकर्मव्यवहारदर्शिकाम् । श्रीश्रीनिवासेन समाहृतामिमाममत्सराः पश्यत शुद्धिदीपिकाम् ॥ १३४ ॥

अब उपसंहार कहाजाता है। श्रीनिवासकर्तृक अत्यन्तविस्तृत ज्योतिषशास्त्रसे यत्नपूर्वक समस्तव्यवहारकार्यका आदर्शरूप 'शुद्धिदीपिका' नामक यह ग्रन्थ संगृहीत हुआ हैं। द्वेषविहीनपण्डितगण ! आप यह ग्रंथ देखिये ॥ १३४ ॥ इति माहिन्तापनीयसभा पण्डित श्रीश्रीनिवासविरचितायां शुद्धिदीपिकायां मुरादाबादनिवासी कात्यायनगोत्रोत्पन्नमिश्रसुखानन्दसूरिसूनुपण्डितकन्हैयालालमिश्रकृतभाषाटीकायां यात्रानिर्णयो नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

मयेयं निर्मिता टीका सर्वतत्त्वार्थबोधिनी।
एतदाश्रयमासाद्य सुखं ज्ञास्यन्ति मानवाः ॥ १ ॥
केषां चिदुपकारश्चेदनया क्रियते शुभम्।
श्रमोऽस्माकं तदा भूयात्फलवानिति मे मतिः ॥ २ ॥
कृतः कन्हैयालालेन भाषार्थः सुमनोहरः।
साधूनां मनसः प्रीत्यै भूयाद्देवप्रसादतः ॥ ३ ॥
येनेदं मुद्रितं सम्यक्खेमराजेन सुन्दरम्।
सर्वलोकहितार्थाय जीयात्स सुचिरं समाः ॥

इति श्रीशुद्धिदीपिका समाप्ता।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-यन्त्रालय-बम्बई.

## जाहिरात ।